सिद्धान्तरत्नाकर

तृतीय शिवपरत्व खण्ड

संग्रहकर्ता—पं० कालिकेश्वर दत्त शर्मा

विषय-सूची

॥

देवा मनुष्या गन्धर्वा राक्षसा जीवधारिणः ।
सर्वे सदाशिवं देवं भजन्ति नाम भेदतः ॥
यवनाश्चैव गोरण्डाः जापानाश्ची न बर्वराः ।
सर्वैलिङ्गं पूजयन्ति नामकर्म विभेदतः ॥
जिला मसुदाबादे राज्यमस्ति सुशोभनम् ।
लालगोलेति विख्यातं तत्रैवनिवसन्मुदा ॥
जीवेन्द्रनारायण देवशर्मा सुरेन्द्रपुत्रेण प्रकाशितम्वै ।
महेशसेवा गुरुवर्य्यकीर्त्यो: लोकेयथास्यात्पचुरप्रचारः ॥

ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलंज्ञान मूर्तिं ।
द्वन्दातीतं गगनसदृशं तत्वमस्यादि लक्ष्यं ॥
एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीःसाक्षिभूतं ।
भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तं नमामि ॥
नित्यंशुद्धं निराभासं निराकारं निरञ्जनम् ।
नित्यबोधं चिदानन्दं ब्रह्मप्राप्तिकरं नुमः ॥

श्रीमद्योगिवर्य्यविप्रराजेन्द्रस्वाम्यात्मज

पंडित कालिकेश्वर दत्त शर्मा

भूमिका

विदित हो कि आजकल प्रेसके होनेसे अल्हा विरहा आदि तक भी जो आर्ष नहीं है सो सब छपकर उत्तम कागज जिल्द बँधाकर बाजारोंमें बिकता है। जिसको शुद्ध बातें करनेका सहूर नही है सो भी एक पुस्तक तैयार करके छपवा देता है, ऐसे समयमें ग्रन्थ बनाना व्यर्थ है परन्तु इस पुस्तकका संग्रह जिस उद्देश्य पर मैंने किया हैं सो आगे लिखता हूँ। पण्डितसे मूर्खतक यही बात कहते हैं कि (जिसका मांड़ो उसका गीत) अर्थात् जिसका पुराण है सब कुछ वही है, अतः पुराण नहीं माननीय है। अब यहाँ विचार कीजिये कि जिसका माँडो उसकी गीत होना तो ठीक ही है परन्तु ऐसा भी कोई है जिसकी गीत सबके माँड़ोंमें होती है, सो कौन है ? इस देशमें किसीका विवाह हो स्त्रियाँ पहले ही पाँच ठो शिवकी गीत गाकर बाद जिसका माँड़ो उसकी गीत गाती हैं वैसा ही जिसका पुराण है उसका कथापर त्वतो विशेष होना उचित ही है परन्तु जो सबसे श्रेष्ठ है वह उसीमें बैठा है सूक्ष्म बुद्धि करके ग्रन्थके देखनेसे मालूम होता है बहुत लोग यह कहते हैं कि जिस कर्मका जहाँ प्रशंसा लिखा है वहाँ उसी कर्मसे स्वर्ग, वैकुण्ठ, ज्ञान, मोक्ष आदि सब प्राप्त होता है अतः यह प्रशंसामात्र है माननीय नहीं है सो ठीक नहीं। उस कथनका तात्पर्य यह है कि जैसे काशी जानेका मार्ग इस दुनियाँमें ऐसा कौन है कि जिसके घरसे नहीं है परन्तु इतना तो अवश्य है किसीके घरसे दूर और किसीके घरसे

वगीच और किसीके घरसे सुलभ मार्ग और किसीके घरसे कठिन मार्ग वैसे ही सत्य, अहिंसा, दान, दया आदि किसी वदोक्त कर्मोंको दृढ़ होकर अनुष्ठान करनेसे ऐहिक पारलौकिक तथा कैवल्य ज्ञान प्राप्तिमें किसी कर्मको साक्षात् सहायता है और किसीको परम्परया यदि इस दोषसे पुराण नहीं माननीय हो तो वेदमें भी यही बात है त्यागका जहाँ प्रशंसा किया तहाँ (न कर्मणा प्रजयाधने न त्यागे नैके नामृतत्वमासु) लिखा कि कर्मसे पुत्रसे धनसे ज्ञान नहीं प्राप्त होता है त्यागसे प्राप्त होता है, कर्मका जहाँ प्रशंसा किया तहाँ लिखा कि (तस्यै तपोदमः कर्मेति प्रतिष्ठा वेदाङ्गा नितित्य मायतनम्) तप इन्द्रियोंका दमन कर्म नित्य कर्तव्य है। आग्नेय पर्वमें अग्निका प्रशंसा इन्द्र पर्वमें इन्द्रकी बड़ाई फिर आप किसको मानेगें उस कथनका तात्पर्य यह है कि अधिकारी भेदसे जैसे हमसे कोई आकर कहा कि हमको पुत्र नहीं है कोई यत्न होना चाहिये, उससे कहा गया कि अपुत्रकी गति नहीं होती, स्वर्ग नहीं होता, अतः यह यत्न कीजिये, और कोई आकर कहा कि हम रोगी हैं, रोग छूटनेका उपाय कीजिये। उससे कहा गया कि अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष सब शरीरसे ही साधन होता है अतः रोग दूर करनेका यह उपाय कीजिये कोई धनके लिए आया उससे कहा गया कि धन हीसे धर्म होता है और धनी पुरुष सब जगह पूजित होता है अतः धनके लिये यह यत्न कीजिये। और कोई ज्ञानके लिये आया उससे कहा गया कि शरीर, धन, पुत्र, सब मिथ्या है सबसे घृणाकर वैराग्य करो तब ज्ञान प्राप्त होगा। ऐसे ही अधिकारी भेदसे अनेक मार्ग कहा है बहुत विषय पढ़ने योग्य बहुत मनन करने योग्य है हम सब किसीसे

बात करते हैं तो इस बातका अवश्य ध्यान रखते हैं कि आगेके बातोंसे और पीछेके बातोंमें विरुद्ध न पड़े नहीं तो सुननेवाला हमको बेवकूफ कहेगा—साक्षाद्विष्णु भगवानका अवतार त्रिकालज्ञ वेदव्यास ऐसा विरुद्ध क्यों कहे ? तो विरुद्ध मालूम होनेका कारण यह है कि त्रिकालदर्शी महाबुद्धिमान व्यासका कहा हुआ हम लोग छोटी बुद्धिसे देखते हैं अतः विरुद्ध मालूम पड़ता है।

आजकल कलिकालके प्रभावसे दुनियामें अनेक पाखण्ड मार्ग हुए हैं सब लोग यही कहते हैं कि सबसे उत्तम हमारा ही मत है जब तक हमारे मतमें नहीं आवोगे तब तक मुक्ति नहीं होगी सिद्धान्त मार्ग जब होगा तो कोई एक ही होगा और उपास्यदेव सबसे बड़ा जब होगा तो कोई एक ही देव होगा उसका निश्चय इस समयमें करना महा कठिन है। जैसे तुलसीदासजीने कहा है॥ चौपाई—

हरित भूमि तृण संकुल, समुझि परे नहिं पंथ।
जिमि पाखण्डिन वाद ते, लुप्त भये सद्ग्रन्थ॥

साम्प्रदायिक झगड़ा मनमें लेकर कोई शिव ही को बड़ा ईश्वर मानते हैं कोई विष्णुको कोई सूर्य, शक्ति, गणेश आदि देवोंको सबसे श्रेष्ठ मानते हैं परन्तु बड़ा जब होगा तो कोई एक ही होगा क्योंकि मालिक एक ही होता है थोड़ा-सा पक्षपात-रहित विचारकर देखिये मैं किसी पक्षका पक्षपाती नहीं हूँ जो शास्त्र, पुराण, वेदोंसे, सिद्ध हो वही मेरा पक्ष है। इस जगतकी उत्पत्ति पाँचसे है॥ पृथ्वी १, अप २, तेज ३, वायु ४, आकाश ५, इन पाँचोंकी उत्पत्तिका क्रम शास्त्रोंमें इस प्रकार लिखी है—एतस्मादात्मनः आकाशः सम्भूतः आकाशाद्वायुः वायोरग्निः अग्नेयः अद्भ्यः पृथ्वी

पृथिव्यां ओषधयः ओषधीभ्यो भूतानि सम्भवन्ति ॥ अर्थ—आत्मासे आकाश, आकाशसे वायु, वायुसे अग्नि, अग्निसे जल, जलसे पृथ्वी, पृथ्वीसे अन्न फलमूलादि, उससे जीव सब हुए। आत्मा शब्द शिव को कहता है उसमें प्रमाण केनोपनिषद (शिवमद्वैतं तुरीयं मन्यन्ते स आत्मा सविज्ञेयः) शिव (अद्वैत) एक (तूरीय) चौथावस्था समाधिमें प्राप्त होनेवाले आत्मा जानने योग्य है। मैत्रारण्योपनिषदमें—(आकाशवत्सर्वगतं सुसूक्ष्मं शिवं प्रशान्तं अमृतं ब्रह्म स आत्मा) आकाशवत सर्वव्यापक सूक्ष्म मालिन्यादि दोषोंसे रहित शिव अमृत ब्रह्म आत्मा है अब देखिए वही शिव आत्मासे आकाश हुआ और उन्हींसे सदाशिव हुए जो आकाशका अधिपति या ईश्वर हुए सदाशिवके आकाशका अधिपति होनेमें प्रमाण तुलसीदासजीने अपने रामायणमें लिखा है ॥ श्लोक ॥ नमामीशमीशान निर्वाणरूपं विभुं व्यापकं ब्रह्मवेदस्वरूपम् ॥ अजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं चिदाकाशमाकाशवासं भजेहम् ॥ ईश, ईशान, निर्वाण, विभु, व्यापक, ब्रह्म, वेदरूप, अज, निर्गुण, निर्विकल्प, निरीह, चैतन्य मात्र, आकाशवासी शिवका मैं भजन करता हूँ ॥ और देखिये सहस्रनाममें खेचर नभस्थलनिवासी, उनका नाम लिखा है। फिर देखिये केशास्तस्य वियत्ततो विगलिता वृष्टिर्जगज्जीवनी) आकाश उनका केश है उससे निकली हुई वृष्टि जगतकी जीवनी है॥ व्योमकेशाय नमः यजुर्वेदमें भी लिखा है कि आकाश ही उनका केश है उनको नमस्कार है। और छान्दोग्योपनिषदकी श्रुति भी कहती है (आकाशस्यैष आकाशो यदेद्भाति मण्डलम् ॥ दहरोऽस्मिनन्तराकाशस्तस्मिन्य दन्तस्तदन्वेष्टव्यः तद्वाविजिज्ञासि तव्यः) आकाशका भी आकाश अर्थात स्वामी वही है

मनुष्यके भीतर हृदयमें दहराकाश है उसके भीतर रहनेवालेको तलाश करो वही शिव आत्मा है और उनका नाम रुद्र है (रु शब्दे धातुसे) रुद्र शब्द बनता है जो शब्दको उत्पन्न करे शब्दगुण आकाश है वह शब्द दो प्रकारका है एक ध्वन्यात्मक दूसरा वर्णात्मक ध्वन्यात्मक उसे कहते हैं घंटा शंख मृदंग आदि वर्णात्मक वेद शास्त्र पुराण आदि सब वर्णात्मक शब्दोंमें आदि शब्द वेद है इसको सबोंने माना है उस वेदका उपदेश सृष्टिके आदिमें ब्रह्माके प्रति शिवने ही दिया। यजुर्वेदमें लिखा है (यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं वेदांश्च तस्मै प्रहिणोति चाग्रम्) जो शिव पूर्वकालमें ब्रह्माको उत्पन्न कर वेद दिये और जितने मन्त्र-तन्त्र शास्त्र है उसका भी आदिकर्ता शिव ही है। सो गोसाईं तुलसीदासजीने लिखा है—कलि विलोकि जगहित हर गिरिजा। सावर मन्त्र जाल जिन सिरिजा॥ अनमिल आषर अर्थ न जापू। प्रगट प्रभाव महेश प्रतापू॥ और जितने संस्कृत शब्द हैं उनका ज्ञान व्याकरणसे होता है उस व्याकरणशास्त्रका आदि कर्ता शिव ही है। श्लोक—नृत्तावसाने नटराज राजो ननाद ढक्कां नवपञ्च वारम्। उद्धर्तुकामः सनकादि सिद्धा नेतद्विमर्शे शिवसूत्र जालम्॥ नित्य प्रदोष कालमें ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र आदि देवगण तथा यक्ष, किन्नर, गन्धर्व, अप्सरा, गण शिवके समीप जाकर नृत्य करते हैं एक दिन शिवने नृत्यके आखिरमें अपने डमरूको चौदह बार बजाया जिससे चौदह सूत्र निकले उन्हीं चौदहों सूत्रोंको लेकर पाणिनि ऋषिने व्याकरण शास्त्र बनाये। और शिवको स्मशानवासी कहते हैं तो क्या शिव स्मशानमें रहते हैं ? नहीं उसका अर्थ यह है कि जब किसीका प्राणवायु शरीरसे निकलकर स्वर्ग वा नरकको जाता है तो आकाश

ही में होकर जाता है तो आकाश ही महा स्मशान हुआ और आकाशमें रहनेवाले शिवको स्मशानवासी कहते हैं। और त्रिशूलधारी उनका नाम है वात, पित्त, कफ इन तीनों वायुके कोपसे शूल अर्थात् दुःख उत्पन्न होते हैं यह तीनों वायु आकाश ही में रहते हैं आकाशके धारण करनेवाले शिवको त्रिशूलधारी कहते हैं। फिर उनका नाम भूतनाथ कहते हैं तो क्या भूतप्रेतोंका स्वामी है ? नहीं पृथ्वी, अप, तेज, वायु, आकाश, यही पाँच भूत हैं इनमें से चारकी उत्पत्ति आकाश ही से है और आकाशका नाथ शिव है अतः शिवको भूतनाथ कहते हैं अथवा यों कहिये कि भूत माने प्राणी, प्राणियोंका नाथ (स्वामी) शिव है क्योंकि नाशकर्ता ही स्वामी माना जाता है जैसे आप किसीके मकानमें रहते हों तो उसका मरम्मत करा सकते हैं उसमें कुछ अधिक बना सकते हैं पर उसको गिरानेका अधिकार आपको नहीं है उसको तोड़वा देनेका अधिकार मकानके मालिकको है। फिर देखिए आजकल अङ्गरेजोंकी राज्य क्यों है तो फाँसी देनेका अधिकार है ॥ और त्रिनेत्र उनको कहते हैं ? सूर्य्य, चन्द्रमा, अग्नि, यही तीनों नेत्र है तो सूर्य्य चन्द्रमा प्रत्यक्ष आकाशमें देख पड़ते हैं अग्नि भी गुप्तरूपसे आकाश ही में है वैसे ही उनका भी दो नेत्र प्रगट है तीसरा नेत्र संहारकालमें प्रगट होती है ॥

आकाश जैसे शून्य अर्द्ध अण्डाकार है आधा पृथ्वीके नीचे छिपा है वैसे ही शिवकी मूर्ति शिवालयोंमें स्थापना की जाती है यदि कोई कहे कि आकाश तो शून्य है वह कुछ नहीं है, सो नहीं देखिए शून्यका आकार ० होता है उसके नीचे एक रेखा लगानेसे १ ऐसा हुआ अर्द्ध शून्यमें २ नीचे रेखा लगानेसे दो हुआ दो अर्द्ध

शून्यमें ३ नीचे रेखा लगानेसे तीन हुआ एक शून्यके ऊपर अर्द्ध शून्य देनेसे ४ हुआ एक अर्द्ध शून्यके बगलमें रेखा लगानेसे ५ हुआ दो अर्द्ध शून्यसे ६ छव एक शून्यमें ऊपर रेखा लगानेसे ७ सात अर्द्ध शून्यमें उसके सिरपर रेखा लगानेसे ८ आठ दो अर्द्ध शून्य से नव ९ शून्य ही से सब अंक हुआ। आगे हजारों लाखों करोड़ों संख्या शून्य ही से हुआ शून्यतत्व आकाश ही से सब तत्वोंकी उत्पत्ति है और आखिरमें शून्य आकाश ही में सब तत्व लय होते हैं उसका क्रम यह है। श्लोक—पृथ्वी सीर्णा जले मग्ना जलं मग्नञ्च तेजसी। तेजं वायौ तथा वातो व्योम्निचैव लयंगतः॥ अर्थ—पृथ्वी जलमें नष्ट हुई जैसे एक घट जलमें चनाके बराबर मिट्टी घोल दीजिए तो उसका परमाणु सूक्ष्म होकर अदृश्य हो गया जल अग्निमें अग्नि वायुमें वायु आकाशमें आकाश चिदात्मक शिवमें लय हुआ॥ देखिए लिङ्ग शब्दका अर्थ लिङ्गपुराणमें लिखा है कि—लयनात्सर्व जगतां लिंगमित्युच्यते बुधै। लीनमर्थंगमयति तस्मात्तलिङ्ग मुच्यते॥ अर्थ :—सब जगतका जिसमें लय हो और (लीन) गुप्त अर्थका जो प्रकाश करे उसको लिङ्ग कहते हैं॥ मुसलमान सब हम सबोंको (वुतपरस्त) मूर्तिपूजक कहकर बहुत अत्याचार किये हैं पर वे अपने घरका बात नहीं देखते हम सबोंसे अधिक वुतपरस्ती उन्हीं सबोंके घरमें है मुसलमानोंमें मूसा नामका एक नवी हुये वह वहिस्त (स्वर्ग) को गये तो उनको एक पत्थर मिला तो वह पत्थर मक्काके मसजिदमें रखा गया जब मुसलमान लोग हज करने मक्का जाते रहे तब उसका एवादद करते रहे बाद मुहम्मद साहने उनको उठवाकर उसी मसजीदके ताखेमें रखवा दिया और

कहा कि इनको बोसा (चुंमा) दो एवाद्द मत करो मक्काके जमजम कुयेंमें लिंग मुर्ति है जिसका पानी सब मुसलमान पीते हैं मुसलमान सब पछिम रोख होकर निमाज पढ़ते हैं तो क्या पूरब अल्लाह नहीं है ? सातवें आस्मानपरके आमतके दिन अल्लाह कुरसीपर बैठता है फैसला करता है तो बुत्तही हुआ मसजिद भी बुत मक्का भी बुत फिर बुतपरस्ती तो हम सबोंसे अधिक मुसलमानोंके यहाँ है मूर्तिपूजामें बहुत सूक्ष्मभाव है जो सब लोग नहीं जानते हम लोग शिवालयोंमें जाकर स्तुति पूजन करते हैं तो यह नहीं कहते कि हे गोल पत्थर तुम हमारा रक्षा करो वलके यह कहते हैं कि हे परमात्मा ! सच्चिदानन्द ! सृष्टिस्थिति प्रलयकारी ! आप मेरा रक्षा किजिये अतः हम सब मूर्तिको आधार मानकर उपाशना परमात्माहीका करते हैं क्योंकि बिना कोई आधार माननेसे उपासना नहीं हो सकती मूर्ति पूजामें तिन भाव है जो बालक है सो तो गोल पत्थरहीको शिव जानता है जो शास्त्रज्ञानी है सो उसमें शिव रहते हैं ऐसा जनता है जो ब्रह्मज्ञानी है सो यह समझते हैं कि शिव तो सर्वत्र है पर उनका पूजन स्तुति ध्यानका स्थान है जैसे मुसलमानोंमें मसजिद ईशाइयोंमें गिरिजा घर इत्यादि ईशाइयोंके धर्म ग्रन्थमें भी लिखा है कि पहले पहल आत्मा पानीपर डोलता था केआमतके दिन इशामसीह उसके बगलमें बैठेगा इशामसीहने भी बाइबिलमें कई जगहोंपर कहा है कि ऐ हमारा पिता जो आस्मानपर रहता है कुरानमें भी अल्लाहको सातवें आस्मानपर माना है और मुसलमानोंमें भी कइ मजहब है वो हाबी, सूफ़ी, मोहम्मदी, ईशाइयोंमें भी रोमन, कैथिलिक आदि भेद है ।

आगे आकाशसे शब्द स्पर्श दो गुणोंसे युक्त वायु हुआ और उन्हीं आकाशाधिपति सदाशिवसे गणेश हुये वह वायुका अधिपति या ईश्वर हुये। उनका नाम विघ्नविनायक। सब विघ्नोंमें भारी विघ्न मृत्यु है तो मृत्यु क्या है कि प्राणवायुका शरीरसे वियोग एवं भूत जो विशेष विघ्न है अर्थात् वायुका नायक मालिक है और जितने प्राण वायु धारण करनेवाले जीव है वही गण है उन सबोंका पति होनेके कारण गणपति कहे जाते हैं।

आगे वायुसे शब्द, स्पर्श, रूप, इन तीन गुणोंसे युक्त अग्नि हुये (आदित्यः सम भूत्सोमात) इस प्रमाणसे उमाके साथ शिवको सोम कहते हैं (सोम) शिव पार्वतीसे सूर्य हुये वह अग्निका अधिपति या ईश्वर हुये इसमें विशेष प्रमाणका आवश्यकता नहीं है क्योंकि सूर्य तेजस्कर सबको देख पड़ते हैं। बदलीमें छिपजानेपर दियासलाइ नहीं बरती सूर्य न रहे तो अग्निका अभाव हो जाय।

अग्निसे शब्द, स्पर्श, रूप, रस, इन चार गुणोंके साथ जल हुआ। और वही आकाशाधिपति सदाशिवके वायें अंगसे विष्णु हुये। (वामांग द भवंतस्य सोहंविष्णु रितिस्मृतः) सदाशिवके वायें अंगसे जो हुये उनका नाम विष्णु हुआ वह नारायण जलका अधिपति या ईश्वर हुये मनुस्मृति अध्याय १ में श्लोक। आपो नारा इतिप्रोक्ता आपोवै नर सूनवः। ता यदस्या यनं प्रोक्तं तेन नारायणस्मृतः ॥ अर्थ—नर अर्थात् ईश्वरसे जल उत्पन्न हुआ इस हेतुसे जलका नाम नारा है उसमें निवासस्थान जिसका हो उसको नारायण कहते हैं। पुनः यजुर्वेद अध्याय ३२ मन्त्र ६३ में लिखा है कि सुभूः स्वयम्भूः प्रथमोऽन्तर्महत्यर्णवेदधेह गर्भं ऋत्वियं

यतोजात: प्रजापमि: ॥ प्रथम सृष्टिमें स्वयम्भू ईश्वर विष्णु जिनका घर जलस्थान समुद्र है उनके नाभि कमलसे ब्रह्मा हुये ॥ और प्रत्यक्ष भी विष्णुके अवतारोंको जलसे विशेष प्रेम है ॥ मत्स्य कूर्म वाराह तो जलहीमें रहनेवाले हैं। यदि कहिये कि राम कृष्णको जलसे कौन सम्बन्ध है तो आखीरमें सरजूमें स्वर्ग द्वार खुला राम सपरिवार प्रवेश कर गये कृष्णचन्द्र भी आखीरमें समुद्रहीमें द्वारका वसाये इत्यादि।

आगे जलसे शब्द१, स्पर्श,२ रूप,३ रस,४ गन्ध,५ इन पाँच गुणोंसे युक्त पृथ्वी हुई (वाम नेत्रा च्चनिष्क्रान्ता उमादेवीच सुव्रता। वामपार्श्वोंप विष्टा सा तस्माद्वै वाम लोचना ॥) और वही आकाशाधिपति सदाशिवके वाम नेत्रसे उमादेवी निकली वामांगी वामलोचना नामसे विख्यात हुई। वह पृथ्वोका अधिपति या ईश्वर हुई पंचत्वोंमें पृथ्वी स्त्री और पाँच देवोंमें देवी स्त्री है। देवीका वाहन व्याघ्र है (घ्रागन्धोपादाने) धातुसे व्याघ्र शब्द बनता है पृथ्वीका गुण गन्ध है तो व्याघ्र शब्दसे पृथ्वी हुई वही उनका बाहन है अर्थात् उनके बसमें है पुनः पृथ्वीका स्तुति मन्त्र देखिये। पृथ्वीत्वया घृतालोका देवीत्वं विष्णुनाधृता। हे पृथ्वी! आपने लोकको धारण किया है आपको जलस्वरूप विष्णुने धारण किया है। इत्यादि ॥

इन सब पीछेके कथनसे सिद्धान्त यह निकला कि पाँच तत्त्वोंका पाँच ईश्वर हुये और यही पाँच देवोंका भक्ति पूजा लोक करते हैं और चारो तत्त्वोंकी उत्पत्ति आकाशसे है और आकाशहीके भीतर वर्तमान रहते हैं आकाशहीमें लय हो जाते हैं सब तत्त्वोंका

पालक उत्पादक नाशक आकाशही है और सब देवोंका उत्पादक रक्षक नाशक सदाशिव हैं। बहुत लोग यह कहते हैं कि सब देव एक ही हैं तो शिवमय जगत है इस भावसे सब एक ही हैं परन्तु कल्पित व्यवहार दशामें जो एक मानते हैं सो बहुत भूले हुये हैं। सब देवता तो महादेव सब ईश्वर तो वह परमेश्वर सब पति तो वह पतियोंका पति सो यजुर्वेदमें लिखा है (श्लोक) तमीश्वराणां परमं महेश्वरं तंदेवतानां परमाधिदैवतम्। पतिं पतीनां परमेश्वरं परं विदामदेवं भुवनेस मीड्यम॥ और जितने वेदान्त शास्त्रका सिद्धान्त जाननेवाले ज्ञानी पुरुष हैं उनका उपास्यदेव एक परमेश्वर आकाशवासी शिवही हैं। बाकी देवोंको उनके अन्तर्गत मानते हैं॥ जैसे आकाशके भीतर सब तत्व है वैसे ही शिवके भीतर सब देव है इसीसे शिवोपासक पंचदेवोपासक कहे जाते हैं। आकाशतत्त्वको किसी तत्त्वसे विरोध नहीं है। वैसे ही शिवोपासकको किसी देव वा ईश्वरोंसे विरोध नहीं हैं। शिवालयोंमें बीचमें शिव चारों दिशामें चारो ईश्वरोंको स्थापनकर पूजा करना चाहिये। जैसे कि लिखा भी है—शिवेमध्यगते सूर्यगणेशगिरिजाच्युत अग्नि नैऋत्य वायव्येशानेकपरिपूजयेत शिवको मध्यमें सूर्य गणेश गिरिजा विष्णुको अग्नि नैऋत्य वायव्य ईशानमें यथाक्रम स्थापनकर पूजन करना और उसी आकाशाधिपति शिवका करीब सब मतवाले नामभेदसे उपासना करते हैं। मुसलमान सब शिव हीको अल्लाह नामसे सातवें आसमानपर मानते हैं इञ्जिलमें ईशामसीहने कई जगहोंपर कहा है कि ऐ हमारा पिता जो आसमानपर रहता है। आर्यसमाजी भी ईश्वरको निराकार कहकर मानते हैं तो सब तत्वोंमें आकाश ही

निराकार व्यापक है। सांटिस लोग साइन्सके जाननेवाले सूक्ष्म ईश्वर (इथरन्) को ही ईश्वर माना है सूक्ष्म इथर आकाश ही है। कहाँ तक लिखे किसी न किसी रूपमें सब लोग एक आकाशाधिपति शिव हीका उपासना करते हैं ॥

बहुतसा पाखण्ड मार्ग होनेपर भी अभी इस भारतवर्षमें विशेष संख्या सनातन धर्मको माननेवाले हैं परन्तु सनातन धर्म क्या वस्तु है सो नहीं जानते, सनातन धर्म अर्थात वर्णाश्रम धर्म सृष्टिके आदिमें जब परमेश्वरने सबको पैदा किया और उस समय जो सबोंको धर्म उपदेश किया उसीको सनातनधर्म कहते हैं जैसे किसीने कहा है कि—"श्री सनातन धर्मस्य चत्वार्य्यङ्गानि सन्तिवै, प्रथमं मूर्तिपूजाच द्वितीयं श्राद्ध तर्पणम। वर्णाश्रमं तृतीयञ्च स्त्री सतीत्वं चतुर्थकम्। प्रत्यङ्गानि बहूनस्ति धर्मशास्त्रेषु कीर्तितम भाषा॥ सनातन धर्मका प्रधान चार अङ्ग है, पहला मूर्तिपूजा, दूसरा श्राद्धतर्पण, तीसरा वर्णाश्रम धर्म, चौथा स्त्रीको एक ही पतिपर रहना, और प्रत्यंग तो बहुत है जो धर्म शास्त्रोंमें लिखा है इन चारों प्रधान अङ्गोंको जो मानते हैं वही पूर्ण सनातन धर्मी है सनातन धर्मका पहला प्रधान अङ्ग मूर्ति पूजा है इसके विषयमें आजकलके नये रोशनीवाले दयानन्दी आदि बहुत नास्तिक और नास्तिकोंका कथ है कि वेदमें परमेश्वरकी मूर्ति नहीं है और मूर्ति पूजा नहीं है न मालुम यह लोग कौन वेद मानते हैं वेद तो मन्त्र भाग और ब्राह्मण भाग दोनों हैं परन्तु इन सबोंने मन्त्र भाग हीको वेद मानते हैं तो यजुर्वेद मन्त्र भाग हीका श्रुति देखिये क्या कहती है त्र्यम्वकंयजामहे इत्यादि तीन नेत्रवालेका मैं पूजन करता हूँ—नमोऽस्तुनीलग्रीवाय इत्यादि॥

नीलर्वर्ण ग्रीवा जिसका उसको मैं नमस्कार करता हूँ....याते रुद्र शिवातनू इत्यादि हे रुद्र! आपकी जो कल्याण रूपातनू उससे रक्षा कीजिये....इदंविष्णुर्विचक्रमे त्रेधानिदधेयदम्....इत्यादि इस जगतको विष्णुने तीन डेग किया....इत्यादि सेकड़ों श्रुति ईश्वरके मूर्तिमान होनेमें है। अब रहा उनका पूजा सो देखिये....यजुवेद स्वर्णलिङ्गायनमः जललिङ्गायनमः पृथ्वीलिङ्गायनमः स्थायपतिपाणि मन्त्रं पवित्रम्....सुवर्णका लिङ्ग जलका लिङ्ग मिट्टीका लिङ्गको स्थापना करना....ऋगवेदे अर्चध्वं अर्चध्वं पुत्रकाः—हे पुत्रों! पूजन करो २ ऐसा कहते हैं—अथर्ववेद ५. १. १. २. है एह्यस्मान मातिष्ठ अस्माभवतुतेतनू....हे परमेश्वर! तुम यहाँ आवो इस पत्थरके मूर्तिमें बैठो यह पत्थर तुमारा शरीर बन जावे....इन प्रमाणोंसे जब कायल होते हैं तो वेदको भी छोड़कर युक्तिपर चलते हैं और कहते हैं कि तुम चेतन होकर जड़ पत्थरको क्यों पूजन करते हो अब थोड़ासा उन सबोंको अपने तरफ ध्यान देना चाहिये कि मुगडन संस्कारमें स्वामीजी छुरेका पूजा लिखा है यज्ञोपवीत संस्कारमें कुशका प्रार्थना मन्त्र लिखा है और स्वामीजीकी मूर्ति सब दयानन्दियोंके घरमें है वेद भी तो मूर्तिमान और जड़ है गायत्री मन्त्र जिससे मुसलमानको हिन्दू बनाते हैं वह भी तो जड़ ही है हम लोग जड़ पत्थरको नहीं पूजते हैं मूर्तिके द्वारा उपासना परमात्मा हीका करते हैं। लूइस साहबकी बनाई हुई फैलिक वर्षीय नामक एक किताब है जिसमें यूरोप, एशिया, अमेरिका, अफ्रिका, योसिनियाँ, आदि अन्यान्य द्विपोंमें बड़े विधानसे विधर्मी म्लेच्छ भी मूर्ति पूजन करते हैं वहाँ बहुत विस्तारसे है संक्षेपमें मैं लिखता हूँ

अफ्रिका—उत्तर अफ्रिकाके प्राचीन इजिप्त, वा मिश्र, देशमें असिरिस, और आइसिस, नामक पुरुष और स्त्रीके लिङ्ग आज तक पूजे जाते हैं। शिवके समान असिरिसके मस्तकमें सर्प हाथमें त्रिशूल और शरीरपर व्याघ्रचर्म है। एपिस नामक बैलपर बैठे हैं उस देशमें श्रीफलके समान एक पेड़ होता है जसका पत्र उनपर रोज चढ़ाते हैं। दूधसे स्नान कराया जाता है। जिस प्रकार भारतमें काशी है उसी प्रकार वहाँ मेम्फिस, नाम स्थान है। मूर्ति काले रंगकी है। डेहोमीके, अघोरपन्थी मनुष्यभक्षी हब्शी 'लेग्वा, नामक काष्ठ लिङ्गको सड़कोंके मोड़पर रखकर पूजते हैं। ताल वा नारियलके वृक्षका तेल उसपर चढ़ाया जाता है। पुत्र होनेके लिए स्त्रियाँ उस लिंगसे प्रार्थना करती हैं वहाँ तीन खंडका उच्च शिवालय है॥
यूरोप—ग्रीस, वा यूनान, देशमें अब तक लिंग पूजा होती है। वेकस, और प्रियसस, शिवके दो नाम हैं। एरिक्स, और करेन्थमें विनसदेवी, या गौरीका मन्दिर है इफटिसस, देशमें डायना, देवीकी पूजा होती है रोमन कैथलिक सम्प्रदायके भी इटलीमें आज तक लिंग पूजते हैं ग्रीसमें पान, नामक लिंगकी भी पूजा होती है स्त्रियाँ इस लिंगकी आकृति गहनोंपर खुदवाकर अपने रक्षाके लिए वाहू और गलामें धारण करती हैं ग्रीस मिनर्वा पार्वती पीगेसस, महादेव हैं उस मूर्तिको वहाँवाले बड़े समारोहसे आज तक पूजते हैं....रोम, और फोरेन्स, नगरमें हर्मिज, और लाइब, नामसे बेकस देवकी पूजा होती है वह पूजा ठीक भारतवर्षके समान होती है अंगरेजोंके इंगलैंडके भीतर यार्कमें देशमें ष्टोनहेञ्ज नामक मन्दिर है क्रमेलन्समें जो पुराने मन्दिर और पत्थरके खम्भे दिखाई देते हैं उससे प्रकट

होता है कि वहाँ किसी समय शिवजीका मन्दिर था आयरलैंडवासी कृस्तान तो भी गिरिजेके दरवाजेपर स्त्रीकी मूर्ति पूजित होती है नवटष्ठोन, ईनिस्मिउरा, राउन्ड, टावर आदि स्थानोंके देखनेसे प्रगट होता है कि वहाँ प्रत्यक्ष लिंगकी पूजा होती थी अष्ट्रोहूणगिरि, देशमें ताम्रेश्वक, नामक लिंगकी पूजा होती है नारवे, स्वीडनमें भी लिंग पूजा होती है।

एशिया रूम (तुरुक) के बीच असिरिया, सुरयानी, और वेविलन, नगरमें शिवलिङ्ग है जिसकी मोटाइ तीनसव हाथ है सिरिया, और शाम देशमें एकोनिश, और अष्टरगोटिस, नामके लिंग पूजे जाते हैं हायड्रा पोलिसमें बहुत बड़ा शिव मन्दिर है। उसमें तीन सब हाथ ऊँची लिंग मूर्ति है अरवमें, मुहम्मदके जन्मके पहले लात, मनात, अल्लात, और अजुल्ला, नामक महादेवोंकी और देवियोंकी पूजा होती रही है। खास मक्कामें सगं असवद वा मक्केश्वरका लिंग चूमते हैं। मक्काके जम-जम कूँयेमें लिंगमूर्ति है जिसका पानी मुसलमान सब पीते है नजरामें खजूरकी पत्ती पूजी जाती है, सुमात्रा, जवद्विपमें लिंग पूजा होती है इन द्वीपोंमें महाभारत आदिका इतिहास शिवपुराण आदि पुराणोंका पाठ सब लोग सुनते हैं। फिनिसिया, देशमें वाल नामकी सूर्यरूप धारिणी स्त्रीकी पूजा होती हैं, वअलवकमें, इसी सूर्यदेवीका मन्दिर है। फ्रिजिनियन, देशमें एटिस नामक लिंग पूजते हैं निनिभा, नगरमें बहुत बड़ा शिवलिंग है। यहूदिया, देशमें इसरायली वा यहूदी लोगोंकी स्थापित लिंग-मूर्ति है। यहूदी राजा लोग इसी लिङ्गकी पूजा करके अदालत देखनेको बैठते थे जापानमें बौधमत प्रचलित रहनेपर भी लिङ्ग पूजा

होती है। जापानके आइस, नगरमें सूर्य नामक लिंग लक्ष्मी, नामक योनिकी पूजा होती है। सिलोन, अर्थात् सिंहलद्वीपमें लिंगकी पूजा करते हैं अफरीदिस्तान, स्वात, चित्राल, काबुल, बुखारा, काफ पहाड़ आदिमें भी पञ्जशेर, पञ्जवीर, आदि अनेक नामके लिंग पूजे जाते। इरानमें, ज्वालामय लिंगको पूजते हैं। साइबीरिया, और तासकन्दमें शैवलीयन, जातिके लोग लिंगकी पूजा करते हैं।

ओशिनिया—सैंडविच, वा हवाई टापूमें सब लोग ईसाई हो गये हैं तो भी ज्वालामुख पर्वतका फुटना अकाल, महामारी, भूकम्प, आदि उत्पातोंके होनेपर सब लोग लिंग पूजते हैं। वहाँके राजा रानी आदि प्रतिष्ठितोंका मरणान्त कर्मतान्त्रिक रीतिसे किया जाता है और उस समय लिंग पूजा भी होती है।

अमेरिका—येन्युको, नगर और हौण्डुरास, देशमें एक लकड़ीका खम्भा और एक ही मुँहवाला पत्थरका लिंगरूप है। युनाइटेड स्टेटके टेनेसी, नगरमें एक बहुत बड़ी लिंगमूर्ति है। युकेन्टन, देशके हरएक मन्दिरके आगे बहुत बड़ा लिंग स्थापित रहता है। दक्षिण अमेरिकाके ब्रेजिल, देशमें बहुतसे पुराने लिंग और गणेशकी मूर्तियाँ मिलती है, पेरू, प्रदेशमें मिट्टीके लिंगकी पूजा बड़े समारोहसे की जाती है। यह लिंग मिट्टीके घटोंके ऊपर रखे जाते हैं॥ इत्यादि॥ आगे दूसरा सनातनधर्मका प्रधान अंग श्राद्ध तर्पण इससे भी आजकल नास्तिकके लोग बहुत कुतर्क करते हैं कहते हैं कि (मरा हुआ घोड़ा घास खाता है) पिता तो मरकर अपने कर्मगतिके अनुसार स्वर्ग वा नरकको गये या किसी

योनिको प्राप्त हुए यह पिण्ड जल तुम्हारा दिया हुआ उनके पास कैसे पहुँचेगा। अतः जिवत् पिताका सेवा करना उसीका नाम पितृश्राद्ध है। अब देखिये इस विषयमें जजुर्वेद क्या कहता है—
आयन्तु नः पितरः अग्निष्वाता पथिभिर्देव जानैः इत्यादि १

येग्निदग्धा ये अदग्धा ये उत्खाता येनोत्खाताः ते सर्वे तृप्यन्तु इत्यादि २

अग्निष्वाता आदि जो हमारे पितृ है सो देव जानपर चढ़कर इस यज्ञमें आवें? जो आगमें जलाये गये जो नहीं जलाये गये और जो गाड़े गये जो नहीं गाड़े गये वे सब तृप्त हों इस जलदानसे जिवत् पिता देव जानपर चढ़कर नहीं आते और न आगमें जलाये जाते हैं और न जमिनमें गाड़े जाते हैं इस यजुर्वेदके मन्त्रसे मृत पितर ही आये और उसका श्राद्ध नाम होनेसे मृत पितरोंका ग्रहण हो गया (श्रद्धया यत्क्रीयते तच्छ्राद्धम्) श्रद्धा पूर्वक जो किया जाय उसको श्राद्ध कहते हैं श्रद्धा माने विश्वास श्राद्ध करो अर्थात् विश्वास करो तो विश्वास परोक्षमें किया जाता है प्रत्यक्षमें नहीं जैसे आपके सामने मैं भोज कर रहा हूँ तो कबहीं नहीं ऐसा कहेंगे कि आप विश्वास कीजिए कि मैं खा रहा हूँ जब आपके नहीं रहनेपर हम भोजन कर चुके हों तो बाद आप हमसे पूछते हैं कि आप भोजन किये तो मैं कहूँगा कि आप विश्वास कीजिए मैं खा चुका हूँ लड़का लड़कीका विवाह मनुष्य श्रद्धा ही से करता है परन्तु उसका नाम श्राद्ध नहीं हुआ क्योंकि वह तो प्रत्यक्ष ही देख रहे हैं कि वरसे कन्याका विवाह हो रहा है और दान भी मनुष्य श्रद्धा ही से करता है पर उसका नाम भी

श्राद्ध नहीं हुआ क्योंकि प्रत्यक्ष मैं देख रहा हूँ कि मैं दे रहा हूँ वह ले रहा है श्राद्ध कैसे कहा जाय श्राद्ध शब्दका प्रयोग परोक्षमें होता है प्रत्यक्षमें नहीं दिया हुआ पिण्डजल पितरोंके पास कैसे पहुँचता है, सो देखिये। जब मनुष्य मरता है तो (पितृरूपी जनार्दनः) इस प्रमाणसे विष्णु भगवान उसके स्थानपर पितृरूप होकर पितृलोकमें रहते हैं यह दिया हुआ पिण्डजल तो यहाँ ही रह जाता है पर वेद धर्मशास्त्रके आज्ञाके मोताबिक जो पिण्डजल मैंने दिया उसके बदला में पितृरूप विष्णु वह जिस योनिमें जहाँ रहता है उसका हितकारी वस्तु बनाकर वहाँ पहुँचाते हैं। जैसे डाकमें रुपैया दिया जाता है तो वह रुपैया तो यहाँ ही रह जाता है मगर आज्ञा जाती है वहाँ उसको रुपैया या नोट मिल जाता है। और देखिये आखिर समयमें वैतरणी पार होनेके लिये एक गोदान किया और वह पुरुष मर गया गौ ब्राह्मणके घर बाँधी है फिर वहाँ पार कौन करेगा ? गौ भी तो अपने कर्मके फलसे पशुयोनिमें प्राप्त है अपना पार होनेका ठेकाना नहीं है तो हमको क्या पार लगावेगी अतः वहांपर महर्षियोंने ऐसा विचार कहा है कि गोदानरूपी पुण्य गौ होकर पार करेगी गौ नहीं दूसरा देखिये जैसे एक कुत्ता है जो गली-गली मारा फिरता है कबहीं उदर उसका पूर्ण नहीं हुआ और एक कुत्ता है जो तोशकपर सोता है दो-दो नोकर उसको आराम देनेको तैयार हैं तो पापसे कुत्तायोनि उसको मिली सुख कैसे मिला यदि कहिये कि पुण्यसे तो क्या पुण्य का फल कुत्ता ही होना है अतः उसका तो कुछ पुण्य नहीं है पाप है जिससे कुत्ता योनि मिली सुख मिलनेका कारण यह है कि उसका

पुत्र-पौत्रादि नित्य श्राद्ध-तर्पण कर रहे हैं वही उसको मिलता है अपना किया कुछ नहीं है ।

अब देखिये सनातनधर्मका तीसरा प्रधान अङ्ग (वर्णाश्रमधर्म) पाश्चात्य शिक्षागर्वित नास्तिकोंका कई मत है कोई कहता है कि जाति है परन्तु वह जन्मसे नहीं होती कर्मसे होती है ब्राह्मण शूद्रका काम करनेसे शूद्र हो गया शूद्र ब्राह्मणका काम करनेसे ब्राह्मण हो गया जैसे विश्वामित्र, ऐतरेय, मतंग आदि । उत्तर—विश्वामित्र क्षत्रियसे ब्राह्मण नहीं हुये उनके पिण्डमें ब्रह्मवीर्य्य रिचिक ऋषिने आवाहन किया था । ऐतरेय इतरा नामक ब्राह्मणीके गर्भसे हुआ, मतंग नायीका वीर्य्य ब्राह्मणीके गर्भसे चाण्डाल हुआ सौ सौ वर्ष तक तीन बार घोर तप किया तब भी इन्द्रने आकर साफ कहा है कि इस देहसे तुम ब्राह्म नहीं हो सकते जन्मान्तरमें होवोगे, दूसरा वर माङ्गो इसका साक्षी महाभारत है । बहुत मनुष्य यह कहते हैं कि जाति वेदमें नहीं है पीछेसे हुई है । उत्तर वेद सूत्ररूप है केवल इसारा मात्रसे कहता है उसका व्याख्या जो हमारे त्रिकालज्ञ महर्षियोंने किया है वही माननीय है आजकलके अल्पबुद्धि मनुष्योंका किया हुआ नहीं मान्य है कश्यपस्मृतिमें लिखा है इतिहास पुराणाभ्यां वेदार्थ मुपवृंहयेत् विभेत्यल्पश्रुताद्वेदो मामयं प्रहरिष्यति । इतिहास पुराणोंके मुताविक वेदका अर्थ करना क्योंकि अल्प बुद्धि पुरुषसे वेद भी डरता है कि अर्थको अनर्थ करके हमको भी गड्ढेमें ले जायगा जैसे उदाहरणार्थ आगे लिखते हैं ।

यजुर्वेद—१६-२६ ब्रह्मसृज्यत—क्षत्रमसृज्यत—१४-३० में शूद्रार्यामसृज्येताम् असृज्यत इस पदसे जन्म ही सिद्ध होता है। इसी

वेदमन्त्रका आशय लेकर व्याख्यारूप उपनिषदस्मृति पुराणोंमें लिखा है बृहदारण्यक ११ से १३ खण्ड तक अ० ६ ब्रा० ४ ब्रह्म वा इदमग्र आसीदेकमेव तदेकथं सन्नभव्यत् छ्रेयोरूप मत्यसृजत् क्षत्रं एक ब्रह्म ही पहले रहा वह अकेला सृष्टिका सब काम नहीं कर सका तब उसने वलवान क्षत्रिय जाति रची पुनः सनैव भव्यत् विशमसृजत्—सनैव भव्यत शौद्रं वर्ण मसृजत् वह ब्रह्म क्षत्रियको उत्पन्न कर भी पूरा समर्थ नहीं हुआ तो शूद्रवर्णको बनाया जिसको पोषण करे सेवासे तुष्ट करे—इसी वेद वाक्यका व्याख्या अष्टादशस्मृति तथा अष्टादश पुराणोंमें ऋषियोंने किया है कुछ लोग यह भी कहते हैं कि अन्त्यजोंका तथा अनुलोम विलोम जातिका वेदमें उल्लेख नहीं है सो देखिये यजुर्वेद ३० २२ में मागधाः पुश्चलीकितवक्लीवः अशूद्राः अब्राह्मणास्ते प्राजापत्या इस मन्त्रसे शूद्र ब्राह्मणातिरिक्त मागधका उत्पत्ति है।

यजुः २३–३० में शूद्रायपद जारानपोषाय धनायति ॥ वहाँ ही २३-३१ ॥ शूद्रोयदर्यायैजारो नपोष मनुमन्यते—इन दोनों मन्त्रोंका महीधरने भाष्य लिखा है। वैश्योयदि शूद्रां गच्छति तदाशूद्रः पोषायन धावति ॥ ३० ॥ यदा शूद्र, अर्यायै जारोभवति तदा वैश्यः पोषं नानु मन्यते ॥ इन दोनों मन्त्रोंमें जो अनुलोम विलोसे जारकर्म वर्णित है इसीका विस्तार धर्मशास्त्र पुराणोंमें ऋषियोंने कहा है।

अथर्ववेदे ॥ यद्वादाशी आद्रहस्ता समन्त उलूखलं मुसलं शुभं तापः ॥ इस मन्त्रसे दासकी स्त्री दासीके आद्र हस्तसे छूये हुए पात्रोंको पुनः जलसे धो लेनेका आज्ञा है। इसका विस्तार पराशरने लिखा है शूद्रान्नं शूद्रसम्पर्कः शूद्रेणैव सहागमः शूद्रज्ञानागमः कश्चित

स्वर्गस्थमपि पातयेत ॥ शूद्रान्न और शूद्रके संसर्गसे स्वर्गस्थ भी नीचेको पतित होता है ।

श्वभ्योनमः श्वपतिभ्यो नमः इस यजुर्वेदके मन्त्रसे कुत्तेको और कुत्तेका पति डोमको अन्न देना वेदमें नमः शब्दका निघण्टुमें तीन अर्थ है पूज्योंके लिये नमस्कार नीचोंके लिये अन्नदान शत्रुके लिये व्यंग्यार्थ है---वेदमें संसर्ग दोष छान्दोग्य ५-१०-६ में स्तेनोहिरण्यस्तु सुरां पिवश्च गुरोस्तल्यमावसन्ब्रह्माच एते पतन्ति चत्वारः पञ्चमश्च रस्तैः। और इसीको मनुने कहा है---ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वंगनागमः महान्ति पातकान्याहुः तत्संसर्गीच पञ्चमः । मूर्ख ब्राह्मण भी जन्मतः ब्राह्मण है निन्दनीय कार्य करनेसे निन्दित कहलाता है मगर वीर्य्यतंग ब्राह्मणत्वसे नहीं हटाया जाता । दुर्बल क्षत्री भी क्षत्री माने जाते हैं, निर्धन वैश्य भी वैश्य ही माने जाते हैं । ऐसा मानकर के ही समस्त संसारके व्यवहार चलते हैं । चाण्डालादि जन्मतः अपवित्र हैं । उदाहरणार्थ काशीका वह चाण्डाल जिसके यहाँ हरिश्चन्द्रने नौकरी की थी, कितना धनवान रहा परन्तु जन्मतः चाण्डाल ही रहा राम कृष्ण ईश्वर होनेपर भी जन्मतः क्षत्रिय ही रहे विदुर धर्मका अवतार होनेपर भी दासीपुत्र ही रहे द्रोण परशुराम युद्ध सूर होनेपर भी ब्राह्मण ही रहे क्षत्री न हुये । लहसुन प्याज देखनेमें बहुत सुन्दर होता है पर दुर्गन्ध और शास्त्रसे अभक्ष्य है । सेकिण्ड क्लासका पैखाना बहुत स्वच्छ रहता है परन्तु वहाँ भोजन कोई नहीं करेगा । शूकर गर्दभ आदि जन्मतः अपवित्र है, गौ अश्व जन्मतः पवित्र है । वायस कुक्कुटादि पक्षी जन्मतः अपवित्र है शुक हंस आदि जन्मतः पवित्र हैं ब्राह्मण क्षत्री आदि जन्मतः पवित्र हैं

चाण्डाल भङ्गी निषाद आदि जन्मतः अपवित्र हैं। ऊपरकी सफाई कितनाहुँ हो परन्तु रजवीर्य्यगत पवित्रता इस देहसे नहीं हो सकती। छान्दोग्यकर्मविपाक प्रकरणमें लिखा है कि—तद्य इहरमणीय चरणा अभ्यासोह यत्ते रमणीयां योनिमापद्येरन् ब्राह्मणयोनिम्बा क्षत्रिययोनिम्बा वैश्ययोनिम्बा तद्य इह कश्याचरणा अभ्यासोह यत्ते कश्या योनिमाद्येरन श्वयोनिम्बा शूकरयोनिम्बा चाण्डालयोनिम्बा। इस मन्त्रसे भी जन्मतः चाण्डाल योनि निन्दित हुई कर्मतः जो हुआ सो चाण्डालके सदृश हुआ चाण्डाल नहीं हुआ। पक्षीमें जातिभेद सुग्गा, कउवा, कबुत्तर आदि, पशुओंमें गाय, घोड़ा, बकरी आदि, कीटोंमें चिउँटा, मँस, मकरी आदि, वृक्षोंमें आम, महुआ, कटहर आदि, धातुओंमें सोना, चाँदी, तामा आदि जब परमेश्वरने सबमें जातिभेद बनाया तो मनुष्यमें एक ही जाति क्यों बनाया सबोंमें रंग आकृतिका भेद बनाया मनुष्यको एक ही आकृतिका बनानेका कारण यह है कि ज्ञान विशेष दिया स्वर्ग नरक पाप पुण्य शुद्ध अशुद्ध यह ज्ञान औरोंमें नहीं दिया इस ज्ञान द्वारा शास्त्रसे जातिका विभाग कर लेंगे। ब्राह्मणमें ब्राह्मणत्व जाति गौमें गोत्व जाति तो आप ब्राह्मण व्यक्तिको आँखसे देखते हैं ब्राह्मणत्व रूप जाति नहीं देखते, जिसको पतञ्जलीने लिखा है—भिन्नेष्वभिन्न छिन्नेष्वछिन्नं सामान्यभूतं सशब्दो नेत्याह आकृतिर्नाम सा जो काटनेपर नहीं कटाती और मारनेपर नहीं मराती वही गौ शब्द है ! नहीं वह जाति है त्व कहाँसे आया तो पाणिनीमका सूत्र है—

(तस्य भावस्त्वतलौ) भाव अर्थविषे त्व, तल, प्रत्यय होता है भाव शब्दसे एक अद्वितीय ब्रह्मका ग्रहण है तो जाति ब्रह्मसत्ता हुई। जैसे कारिकाकारने कहा है—सम्बन्धिभेदात्सत्तैव भिद्यमाना जवादिषु जाति रित्युच्यते तस्यां सर्वे शब्दा व्यवस्थिता तांप्रातिपदिकार्थंच धात्वर्थं च प्रचक्षते सानित्या सामहानात्मा तामाहुस्त्वतलादयः। ब्रह्मसत्ता देहभेद से भिन्न-भिन्न प्रतीत होती है वही जाति है औरत्व तलप्रय भी उसीको कहता है अतः जाति ब्रह्मसत्ता है तो ब्रह्मचर्म चक्षुसे अदृश्य है ज्ञान चक्षुसे प्राप्य है वैसे ही जाति भी ज्ञान चक्षुसे दृश्य होती है शरीर रहते जातिका नाश नहीं होता सोना भस्म हो जानेपर भी तामाकाभस्म नहीं कहाता बहुत लोग यह सन्देश करते हैं कि ब्राह्मण चमार या मुसलमान कैसे हो गया ब्राह्मण किसी हालतमें रहेगा ब्राह्मण ही कहलावेगा जैसे पतित ब्राह्मण चाण्डाल ब्राह्मण कुसंगसे मलीन तो अवश्य हुआ और मरनेपर भी ब्राह्मण ही ब्रह्मराक्षस होता है क्षत्रिय वैश्यादि नहीं।

फिर देखिये आपके देहमें जितनी इन्द्रियाँ है सब एक काम करनेवाली और एक समान नहीं है तो जब आपके देह हीका यह हाल है तो दुनियाँके सब मनुष्योंको एक ही जाति और एक ही काम कराना चाहते हैं यह आपके बुद्धिकी तारीफ है बहुत लोग यह कहते हैं कि हम सब एक जाति होकर एक साथ भोजन व्यवहार करेंगे तो प्रेम होगा और स्वराज्य प्राप्त कर विदेशी राजाको हटा देंगे भला

विचारिये तो सही एक मनुष्यको चार पुत्र हुए चारोंकी उत्पत्ति एक ही रजवीर्यसे हुई है और एक ही साथ भोजन एक ही शिक्षा परन्तु उन चारोंमें ऐसा विरोध होता है कि वैसा दूसरोंके साथ नहीं होता प्रेम स्वधर्मके अनुष्ठानसे होता है क्या धोबी चमार भङ्गी आदि अन्त्यजोंसे हम लोग प्रेम नहीं करते ? अवश्य रखते हैं जो अच्छा काम करता है उसको चार पैसा अधिक देते हैं उनके ऊपर कोई आपत्ति आती है तो सहायता करते हैं उनको अपना एक अंग मानते हैं जैसे देहमें गुदा इन्द्रिय है जिसमें जाति भेद नहीं है वहाँ भी कर्मवश जाति भेद मानने हीसे व्यवहार चलता है। देवताओंमें भी जाति भेद शिव देवता रुद्र ब्राह्मण, हरि क्षत्री, ब्रह्मा वैश्य यक्षयम विश्वकर्मा आदि शूद्र है।

वर्ण विचारके वाद आश्रम सो बहुत उलटा हो गया है सोलह वर्षका संन्यासी साठ वर्षका ब्रह्मचारी सो ठीक नहीं आश्रम अवस्थाके समान है जैसे बालक युवा वृद्ध तीन अवस्था क्रमसे आती है जैसा कोई उपाय नहीं है कि पहले वृद्ध हों बाद बालक हों परमेश्वरने जैसा क्रम बनाया है वैसे ही आवेगी वैसे ही पाँचवे वर्षमें यज्ञोपवीत देकर ब्रह्मचारी बाद युवा होनेपर गृहस्थ बाद पुत्र पौत्र होनेपर वाणप्रस्थ सर्वसंकल्पनष्ट अर्थात् आमनावोंके नाश होनेपर संन्यास वह दो प्रकारका है एक विद्वत् और दूसरा विवीदिषा तोविद्वत अर्थात् ज्ञान संन्यास जो गीतामें लिखा है कि—काम्यानां कर्मणान्यासः सन्यासः

समुदाहृतः) और विवीदिषा दण्डकाषायादि धारण कलिमें नहीं ग्राह्य हैं सो लिखा है मनुयाग्यवक्यादि स्मृतियोंमें और पुराणोंमें भी लिखा है कि (सन्यासोद्विविधः प्रोक्तोविद्वच्चैव बिवीदिषा विद्वन्तु सर्वदा-ग्राह्यं कलौनैवविवीदिषा) विवीदिषा सन्यासको कलिमें वर्जित किया कि उसका धर्म निर्वाह होना महा कठिन है पहलेके मनुष्य दीर्घायु बलिष्ठ होते रहे हैं आजकल सब लोग अल्पायु अल्पशक्ति-वाले हैं सन्यास धर्मका विस्तार प्रथम खण्डमें लिख दिया है इत्यादि—आगे सनातनधर्मका चौथा प्रधान अंग पातिव्रत्य स्त्रीको पतिके मर जानेपर उसके साथ सती होना अथवा आजन्म वैधव्य व्रत पालन करना—स्वप्नमें भी अन्य पुरुषका ध्यान नहीं करना, इस विषयमें आजकलके नये रोशनीवाले कहते हैं कि यह कैसी न्याय है कि पुरुष बूढ़ापन तक व्याह करता जाय स्त्री आठ वर्षकी भी विधवा हो जाय तो पुनः व्याह न करे तो उनसे यह पूछना चाहिए कि यह कौनसी न्याय है कि आप गद्दी लगाकर चुप बैठे और उत्तम-उत्तम भोग करें आपका नौकर दिनभर पानी भरे जाड़ा गरमीसे मरे हमारे महर्षियोंने स्त्रीको भोग्य कहा है भोक्ता पुरुष है तो भोक्ता अनेक भोग्य वस्तु रख सकता है भोग्य वस्तु अनेक भोक्ता नहीं रख सकता स्त्री पुरुष दोनोंमें प्रधानता पुरुष ही को है ऐसा ईश्वरीय नियम है अंगरेज सब स्त्रीको प्रधान मानते हैं परन्तु विचारसे देखा जाय तो उनके यहाँ भी पुरुष हीका प्रधानता है लाट, कलक्टर, जज, साहब

होते हैं, मेम नहीं विवाह होनेपर साहबके घर मेम जाती है साहब उनके घर नहीं जाते सिपाहीमें पुरुष ही भरती होते हैं स्त्री नहीं जिस जातिमें स्त्रीको अनेक पति करनेकी आज्ञा है उस जातिमें व्यभिचार विशेष है और पतिका आदर नहीं है स्त्रीका प्रयोजन केवल भोग ही मात्र नहीं है हमारे शास्त्रकारोंने कैसे प्रयोजन बताया है जो लोग शास्त्र विश्वाससे रहित है भोग ही मात्र प्रयोजन जानते हैं वे ही युवावस्थापर विवाहका नियम कहते हैं भोगसे कामका नाश नहीं होता त्यागसे होता है मनुने कहा है (नद्वितीस्तु नारीणां क्वचिद्भर्तोप-दिश्यते) अच्छा चालचलनवाली स्त्रीके लिये किसी शस्त्रमें दूसरा पति करना नहीं लिखा है पुनः (नान्यस्मिन्विधवानारी नियोक्त व्याद्विजातिभिः अन्यस्मिन्हि नियुञ्जाना धर्मं महिन्युःसनातनम् ॥ द्विजा-तियोंके लिए तो विशेष रूपसे विधवाका पुनर्विवाह नहीं करना पुनर्विवाह करनेसे सनातन धर्मका नाश हो जाता है पाराशर लिखते हैं कि—मृतेभर्तरियानारी ब्रह्मचर्य ब्रतेस्थिता सामृतालभते स्वर्गं यथाते ब्रह्मचारिणः पतिके मर जानेपर जो स्त्री ब्रह्मचर्य ब्रतको धारण करती है वह मरनेपर स्वर्गको जाती है और ब्रह्मचारियोंकी जो गति होती है वही गति उसकी होती है।

यहाँपर नास्तिकोंका यह प्रश्न होता है कि द्रौपदीको पाँच पति क्यों हुए कुन्तीने नियोग क्यों किया पाराशरने मल्लाहके कन्यासे क्यों भोग किया इत्यादि।

द्रौपदीके पाँच पति होनेका कारण यह है कि पाँचों पाण्डव पाँच देवताके अंशसे है इन्द्र, धर्मराज, वायु, आश्विनीकुमार और इन्हीं पाँच देवोंके अंशसे यग्यवेदीसे द्रौपदी हुई इन्हीं पाँचोंके लिए दूसरा कारण यह है कि पूर्व जन्ममें द्रौपदीने पतिके लिए शिवका तप किया और हे शिव ! पति दीजिये पति दीजिये इस तरहसे पांच दफे मांगा शिव प्रसन्न होकर बोले ! तुमको पाँच पति होंगे ।

कुन्तीने नियोग पतिके आज्ञासे किया कैसा ही अकर्त्तव्य काम हो पतिके आज्ञा होनेपर अवश्य करना चाहिए।

पाराशरने उस मत्स्योदरी कन्याको दुर्गन्धासे सुगन्धा बना दिया दो ही घंटेमें व्यास उसके उदरसे निकले और तप करनेको गये वह कन्याका कन्या ही रह गई इतनी शक्ति जिसमें हो वह सब कर सकता है, गोसांई तुलसीदासजीने लिखा है—"समरथके नहीं दोष गोसाईं, रवि पावक सुरसरिकी नाईं ।"

इन सबोंका जो काम हुए हैं सो कारणवश कामवश नहीं और यह राजमार्ग नहीं है, राजमार्ग वही है जो धर्मशास्त्रोंमें हम सबोंके लिए आज्ञा है यदि ऐसा दृष्टान्त देकर धर्मका निर्णय किया जाय तो ब्रह्माने कन्यासे गमन किया चन्द्रमाने गुरुके स्त्रीसे गमन किया तो यह भी कीजिगे अतः धर्मका निर्णय धर्मशास्त्रोंसे होता है यह विधि वाक्य नहीं है—

इस खण्डमें संक्षेपरूपसे सब दिखा दिया हूँ, सज्जन महाशय अवलोकन करें हमारे परिश्रमको सफल करें और जो त्रुटि हो उसपर ध्यान न देकर अर्थके तरफ ध्यान दें।

विनीत—पं० कालिकेश्वर दत्त
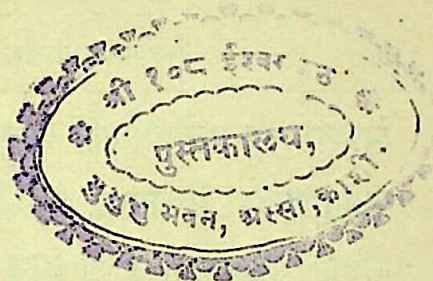
सिद्धान्तरत्नाकर

श्री गणेशाय नमः ॥ पञ्चवक्त्र श्चन्द्रमौलिं दश वाहुं त्रिलोचनम् ॥ नमस्कृत्याथकुर्वेऽहं खण्डं चैव तृतीयकम् ॥१॥ सर्वशास्त्रार्थ तत्वज्ञं योगदत्तं जगद्-गुरुम् ॥ श्रीमद्विप्रेन्द्र विज्ञेन्द्रं शिवरूप मुपास्महे ॥२॥ योगमार्गे ज्ञानकाण्डे कर्मकाण्डेषु कः परः ॥ मोक्ष-दाता नाशकर्ता तथा चोत्पत्ति कारकः ॥३॥ देवेषु कः परः पूज्यो न जानन्ति विमोहिताः ॥ स कस्मान्नेद मा

श्रीगणेशायनमः ॥ पञ्चवक्त्र दशवाहु अरु तीन नयन अरधङ्ग ॥ ताको चरणन वन्दिकरि भाषों प्रथम तरङ्ग ॥१॥ विप्रराज गुरू वर्यके पद सरोजको ध्याय ॥ भाषा टीका रचत हों यातेकलुष नशाय ॥२॥ योग ज्ञान अरू कर्ममें सबसे पर है कौन ॥ पालन सृष्टि विनाश करि मोक्ष देत है जौन ॥३॥ सब देवोंमें पूज्यको नहीं जाने जो जीव ॥

लोक्य जानात्येवाखिलं मतम् ॥४॥ परत्वा परभेदं हि पूज्या पूज्य विचारणा ॥ कालिकेशप्रसादाख्य स्तेषां भेदा नहंब्रुवे ॥ ५ ॥ अथ पुराणोप पुराण संख्या निगद्यते ॥ तदुक्तम् स्कान्दे ॥ ब्राह्मं पाद्मं वैष्णवं च शैवं भागवतन्तथा ॥ भविष्यं नारदीयञ्च मार्कण्डेय मतः परम् ॥ ६ ॥ आग्नेयं ब्रह्मवैवर्तं लैङ्गं वाराह मेव च ॥ स्कान्दञ्च वामनञ्चैव मात्स्यं कौर्म्मञ्च गारुडम् ॥ ७ ॥ ब्रह्माण्डञ्चेति पुण्योऽयं पुराणाना मनुक्रमः ॥ तत्र शैवानि शैवञ्च भविष्यञ्च द्विजोत्तमाः ॥ ८ ॥

सो यह खण्ड विलोकि करि क्यों नहीं जाने शीव ॥४॥ कालिकेशवर विप्रने लखि पुराण ओ वेद ॥ संग्रह कियो विविधविधि याते संशय छेद ॥५॥ अब पुराण उपपुराणोंकी संख्या कहते हैं ॥ स्कन्द पुराणमें लिखा है कि (ब्रह्म) १ (पद्म) २ (विष्णु) ३ (शिव) ४ (भागवत) ५ (भविष्य) ६ (नारदीय) ७ (मार्कण्डेय) ८ (अग्नि) ९ (ब्रह्मवैवर्त) १० (लिंग) ११ (वाराह) १२ (स्कान्द) १३ (वामन) १४ (मत्स्य) १५ (कूर्म्म) १६ (गरुड़) १७ (ब्रह्माण्ड) १८ यही अठारह पुराणोंकी संख्या है ॥ सूतजी कहते हैं कि अठारह पुराणोंमें (शिव) १ (भविष्य) २ (मार्कण्डेय) ३ (लिंग) ४ (वाराह) ५ (स्कन्द) ६ (मत्स्य)७ (कूर्म्म) ८ (वामन) ९ (ब्रह्माण्ड) १० पुराण जो तीन लाख

मार्कण्डेय न्तथालैङ्गं वाराहं स्कान्द मेव च ॥ मात्स्य-मन्यत्तथाकौर्म्मं वामनञ्च मुनीश्वराः ॥९॥ ब्रह्माण्डञ्च दशेमानि त्रीणि लक्षाणि संख्यया ॥ वदन्ति शिव-मेतानि शिवस्तेषु प्रकाश्यते ॥१०॥ दशशैव पुराणानि सात्त्विकानि विदुर्बुधाः ॥ श्रद्धेयानि द्विजवरै स्तेषु-धर्मास्तु सात्विकाः ॥११॥ विष्णोर्हि वैष्णव न्तद्व त्तथा भागवतं शुभम् ॥ नारदीय पुराणं च गारुडं वैष्णवं विदुः ॥१२॥ वैष्णवानिच चत्वारि तामसानि मुनी-श्वराः ॥ ब्राह्मं पाद्मं ब्रह्मणोद्वे अग्ने राग्नेय मेककम् ॥ १३ ॥ सावित्रं ब्रह्मवैवर्त मेव मष्टादश स्मृतम् ॥ ब्राह्मेतु राजसे वैश्य शेव्ये सर्वत्र सम्मते ॥१४॥

श्लोकोंमें है इनमें शिवका माहात्म्य लिखा है ॥६॥७॥८॥९॥१०॥ दशशैवपुराण सात्विक हैं जो ब्राह्मणके श्रद्धा करने योग्य है और इनमें सात्विक धर्म कहा गया है ॥११॥ और विष्णु भगवानका पुराण (विष्णु) १ (भागवत) २ (नारदीय) ३ (गरुड़) ४ चार है ॥ १२ ॥ चारो वैष्णव पुराण तामस हैं और (ब्रह्म) १ (पद्म) २ दोपुराण ब्रह्माका है अग्निका एक अग्निपुराण है ॥१३॥ ब्रह्मवैवर्त सावित्रीका पुराण है ब्रह्मपुराण राजस है विशेषतः वैश्यको माननीय है ॥१४॥ उशनस उपपुराणके चौथा

उशनसोपपुराणे चतुर्थाध्याये उपपुराणान्यप्युक्तानि ॥ तथैवोपपुराणानि शृण्वन्तु ऋषिसत्तमाः ॥ सनत्कुमार म्प्रथमं नारसिंह मतः परम् ॥१५॥ नारदीयं शिवञ्चैव दुर्वाशस मनुत्तमम् ॥ कापिलं वामनं पुण्यं तथा चौशनश स्मृतम् ॥ १६ ॥ वारुणं कालिकाख्यञ्च साम्बं नन्दीकृतं शुभम् ॥ सौरं पाराशरप्रोक्तं आदित्यं ञ्चाति विस्तरम् ॥१७॥ माहेश्वरं भार्गवाख्यं वाशिष्ट ञ्चाति विस्तरम् ॥ एतान्युपपुराणानि मुनिभिः कथितानि तु ॥ १८ ॥ अष्टादशपुराणानि कृत्वा सत्यवती सुतः ॥ भारताख्यान मखिलं चक्रे तदुपबृंहितम् ॥ १९ ॥

अध्यायमें उपपुराणोंकी संख्या श्रीसूतजीने ऋषियोंके प्रति कहा है कि (सनत्कुमार) १ (नृसिंह) २ (लघुनारदीय) ३ (शिवधर्माख्य) ४ (दुर्वाशस) ५ (कापिल) ६ (वामन) ७ (उशनस) ८ (वारुण) ९ (कालिका) १० (साम्ब) ११ (नन्दीश्वर) १२ (सौर) १३ (पराशर) १४ (आदित्य) १५ (माहेश्वर) १६ (भार्गव) १७ (वाशिष्ठ) १८ यह अठारह उपपुराण मुनियोंने बनाकर पुराणोंका समन्वय किया है ॥१५॥१६॥ १७॥१८॥ अठारह पुराणोंको बनाकर व्यासजीने भारतकी रचना की है ॥१९॥ सनत्कुमार संहितामें लिखा है कि पुराणोंके गूढ़ार्थको

सनत्कुमार संहितायाम् ॥ ब्राह्मस्योप पुराणम्वै सौरमेव प्रकीर्तितम् ॥ पद्मस्य नारसिंहम्वै वैष्णवस्य पराशरः ॥२०॥ शैवस्य शिवधर्माख्यं भागवतस्य कालिका ॥ दुर्वाशसं भविष्यस्य मार्कण्डेयस्य कापिलम् ॥२१॥ नारदीयस्यार्थज्ञानम् तथाऽस्ति नारदीयके ॥ आग्नेयस्य च साम्वम्वै वामने वामनम्भवेत् ॥२२॥ तथा लैङ्गस्य वा शिष्टं वाराहस्योशनस्मृतः ॥ स्कान्दस्यादित्य सञ्ज्ञस्तु कौर्म्मस्य वारूणस्मृतः ॥ २३ ॥ सनत्कुमारं मात्स्यस्य गरुडस्य च भार्गवः ॥ नन्दीश्वराभिधंनाम ब्रह्माण्डस्य प्रकीर्तितः ॥ २४ ॥ एतान्युपपुराणानि मुनिभिः कथितानि तु ॥ पुराणानाञ्च गूढ़ार्थं समन्वय

ऋषियोंने उपपुराण बनाकर समन्वय किये हैं ब्रह्मपुराणका उपपुराण सौर पद्मका नारसिंह विष्णुका पराशर ॥२०॥ शिवपुराणका शिव धर्माख्य भागवतका कालिका भविष्यका दुर्वाशस मार्कण्डेका कापिल ॥ वृहन्नारदीयका लघुनारदीय अग्निका साम्ब बामनपुराणका वामनोपपुराण है ॥२१॥२२॥ लिङ्गका वाशिष्ठ बाराहका उशनस स्कन्दका आदित्य कूर्म्मका बारुण ॥२३॥ मत्स्यका सनत्कुमार गरुड़का भार्गव ब्रह्माण्डका नन्दीश्वर उपपुराण है सो जानना ॥२४॥ यह उपपुराण मुनियोंने बनाकर पुराणोंका गूढ़ार्थ समन्वय किये हैं अतः विना

मुखेन वै ॥२५॥ स्कान्दे ब्रह्मोत्तरखण्डे द्वाविंशेऽध्याये ये निन्दन्ति पुराणज्ञं कथां पापापहारिणीम् ॥ ते वै जन्मशतंमर्त्याशुनकास्सम्भवन्ति च ॥२६॥ कूर्म्मे पुराणे पूर्वार्द्धे द्वधिक पञ्चाशत्यध्याये अस्मिन्मन्वन्तरे पूर्वं वर्तमाने महाप्रभुः ॥ द्वापरे प्रथमे व्यासो मनुः स्वायम्भुवोमतः ॥ २७ ॥ द्वितीये द्वापरे चैव वेदव्यासः प्रजापतिः ॥ तृतीये चोशना व्यासश्चतुर्थे तु वृहस्पतिः ॥२८॥ सविता पञ्चमेव्यासः षष्ठेमृत्युः प्रकीर्तितः ॥ सप्तमे च तथैवेन्द्रो वशिष्टश्चाष्टमे मतः ॥ २९ ॥ सारस्वतश्च नवमे त्रिधामादशमे मतः ॥ एकादशेतु ऋषभः

उपपुराणोंके देखनेसे पुराणोंका झगड़ा नहीं छूटेगा ॥२५॥ स्कन्दपुराण ब्रह्मोत्तर खण्डके अध्याय बाइसमें लिखा है कि पुराणको जाननेवालेको अथवा पुराणके कथाओंको जो मनुष्य निन्दा करते हैं वे सब जन्म कुत्ता होते हैं ॥ कूर्म्म पुराण पूर्वार्द्ध अध्याय ५२ में लिखा है कि इस मन्वन्तरके पहले द्वापरमें स्वायंभुव मनु व्यास हुये ॥२६॥ दूसरे द्वापरमें प्रजापति व्यास हुये तीसरे द्वापरमें उसना ऋषि व्यास हुये चौथे वृहस्पति ॥२७॥ पाँचवे द्वापरमें सूर्य हुये छठवेंमे मृत्यु सातवेंमें इन्द्र आठवेंमें वशिष्ठ व्यास हुये ॥२८॥ नौवेंमें सारस्वत दशवेंमें त्रिधामा एगारहवेमें ऋषभयोगी बारहवेंमें सुतेजा ॥ २९ ॥

सुतेजा द्वादशेस्मृतः ॥२०॥ त्रयोदशेतथा धर्मः सुचक्षुस्तु चतुर्दशे ॥ त्रय्यारुणिः पञ्चदशे षोडशेतु धनञ्जयः ॥२१॥ कृतञ्जयः सप्तदशे ह्यष्टादशे ऋतञ्जयः ॥ ततो व्यासो भरद्वाजः स्तस्मादूर्धन्तु गौतमः ॥२२॥ वाजश्रवाचैकविंशे तस्मान्नारायः परः ॥ तृणविन्दुः त्रयोविंशे वाल्मीकिस्ततपरस्मृतः ॥ २३ ॥ इतः परन्तु शाक्यस्यात् षडविंशेतु पराशरः ॥ सप्तविंशे तथाव्यासो जातुकर्णो महामुनिः ॥ २४ ॥ अष्टाविंशे पुनः प्राप्ते कृष्णद्वैपायनो भवत् ॥ पाराशर्यो महायोगी कृष्णद्वैपायनो हरिः ॥ २५ ॥ आराध्यदेवमीशानं दृष्ट्वास्तुत्वा त्रिलोचनम् ॥ तत्प्रसादा दसौ व्यासः वेदानाम करो-

तेरहवेंमें धर्म चौदहवेंमें सुचक्षु पन्द्रहवेंमें त्रय्यारूणि सोलहवेंमें धनञ्जय ॥२०॥ सतरहवेंमें कृतञ्जय अठारहवेंमें ऋतञ्जय उन्नइसवेंमें भरद्वाज वीशवेंमें गौतम ॥२१॥ एकइसवेंमें वाजश्रवा वाइशवेंमें साक्षात विष्णु भगवान तेइशवेमें तृणविन्दु चौवीशवेमें वाल्मीकि ॥२२॥ पचीसवेंमें शाक्य छविशवेंमें पराशर सताइवेंमें जातुकर्ण ॥२३॥ अट्ठाइशवें द्वापरमें पराशर ऋषिका पुत्र महायोगी कृष्ण द्वैपायन व्यास हुए ॥२४॥ शिवका पूजनकर और उनका स्तुति करके उन्हींके प्रसादसे वेदोंको विस्तार भागमे करके पुराणोंको बनाये ॥२५॥

द्विभुः ॥३६॥ एकविंशति भेदेन ऋग्वेदं कृतवान्प्रभुः ॥ शाखानान्तु शतेनैव यजुर्वेदमथा करोत् ॥३७॥ सामवेदं सहस्रेण शाखानां प्रविभेद स ॥ अथर्वाणमथोवेदं विभेद नवधा पुनः ॥ ३८॥ तत्रैव उनत्रिंशेऽध्याये ॥ ऋषिपुत्रैः पुनर्वेदा भिद्यन्ते दृष्टिविभ्रमैः ॥ मन्त्र ब्राह्मण विन्यासैः स्वर वर्णविपर्य्ययैः ॥ ३९ ॥ ब्राह्मणं कल्पसूत्रञ्च ब्रह्म प्रवचनानि च ॥ इतिहास पुराणानि धर्मशास्त्राणि सुव्रत ॥ ४० ॥ काशी केदार मूल रहस्ये ॥ वेद व्यस्तंतया लोके वेद ब्यास इति श्रुतः ॥ वेदान्विभज्य प्राचीन पुराणानि नवी कुरु ॥४१॥ देवी भाग-

ऋग्वेदमें एक्कइस शाखा यजुर्वेदमें सव शाखा सामवेदमें एक हजार शाखा अथर्व वेदमें नव शाखा व्यासजीने किया ॥३६॥३७॥३८॥ पुनः वहाँ ही अध्याय २९ में लिखा है कि ऋषि पुत्रोंने वेदके मन्त्रोंको मन्त्र भाग ब्राह्मण भाग दो भागमें किये और स्वर उच्चारणका भेद बनाये ॥३९॥ और मन्त्र ब्राह्मण भेद कल्पसूंत्र ब्रह्मसूत्र इतिहास पुराण धर्मशास्त्रको बनाये ॥४०॥ काशी केदार मूलरहस्यमें लिखा है कि वेदोंको विस्तार भागमें करनेके हेतु वेदव्यास नाम हुआ वेदोंको विस्तारकर पुराणोंको बनावो ऐसा शिवने आज्ञा दिया ॥४१॥ देवी भागवत स्कन्द प्रथम अध्याय ३ में लिखा है कि हर एक द्वापरमें

वते प्रथम स्कन्दे तृतीयाध्याये ॥ द्वापरे द्वापरे विष्णु-र्व्यासरूपेण सर्वदा ॥ वेदमेकं स बहुधा कुरुते हित-काम्यया ॥४२॥ तत्रैव द्वितीस्कन्दे द्वितीयाध्यायेऽपि ॥ चकार वेद शाखाश्च प्राप्तं ज्ञात्वा कलेर्युगम् ॥ वेदविस्तारकरणाद्व्यास नामा भवन्मुनिः ॥४३॥ पुरा-णानां मान्यत्वे धर्मशास्त्र वेद प्रमाणानिसन्ति ॥ मनु-स्मृतौ ॥ स्वाध्यायं श्रावयेत्पित्रे धर्मशास्त्राणि चैव हि ॥ आख्यानमिति हासांश्च पुराणान्यखिलानि च ॥४४॥ महाभाष्ये ॥ चत्वारो वेदास्साङ्गाः स रहस्या बहुधा भिन्ना एकशतमध्वर्जु शाखा सहस्र वर्त्मा सामवेदः

विष्णु भगवान व्यासरूप होकर वेदका विस्तार करते हैं ॥४२॥ पुनः वहाँ ही स्कन्द दूसरा अध्याय २ में लिखा है कि व्यास कलियुग के आनेपर वेदोंमें अनेक शाखा बनाये अतः उनका नाम वेदव्यास पड़ा ॥४३॥ पुराणोंके माननीय होनेमें वेद धर्मशास्त्रोंका प्रमाण आगे कहते हैं ॥ मनुस्मृतिमें लिखा है कि पुत्र अपने पिताको वेद धर्म शास्त्र इतिहास और अठारह पुराणोंको सुनावे ॥४४॥ महाभाष्यमें लिखा है कि चार वेद छः वेदोंका अंग रहस्य आदिको लेकर बहुत हुआ है एक सौ शाखा यजुर्वेदमें हजार शाखा सामवेद एक्कइस शाखा ऋग्वेद नवशाखा अर्थर्ववेद इतिहास पुराण यह सब प्रमाणिक शब्द

एकविंशतिधा वह्वृचं नवधाऽथर्वणो वेदो वाको वाक्य मितिहासः पुराण मेते शब्द विषयाः ॥४५॥ शतपथ ब्राह्मणे ॥ दशमेन्हि पुराणम च क्षीत ॥ ४६ ॥ शतपथे चतुर्थ प्रकरणे पञ्चम ब्राह्मणे ॥ अस्य महतो भूतस्य निःश्वसित मेतद्यदेतदृग्वेदो ययुर्वेदः सामवेदो अथर्वाङ्गिरस इतिहास पुराणं विद्या उपनिषद् श्लोकाः सूत्राण्यनु व्याख्यानानि ॥ ४७ ॥ अथर्ववेदे पञ्चदश काण्डे षष्ठाध्याये ॥ स वृहतीं दिश मनुष्य च्चित्त मितिहासश्च पुराणञ्च गाथाञ्च नारशंसि चानुव्यचलन् इतिहासस्य च गाथानाञ्च नाराशंसीनाञ्च प्रियं धाम भवति य एवं वेद ॥४८॥ छान्दोग्ये सप्तम

है ॥४५॥ शतपथ ब्राह्मण तेरहमें लिखा है कि पिताके मरनेपर पुत्र दशवें दिन पुराणोंका पाठ करे ॥४६॥ शतपथ प्रकरण चार ब्राह्मण पाँचमें लिखा है महाभूत विराटसें चारो वेद विद्या इतिहास पुराण उपनिषद श्लोक सूत्र आदि सब हुए ॥४७॥ अथर्ववेद काण्ड पन्द्रह अध्याय छःमें लिखा है इतिहास पुराणोंकी कथा जो पाठ करते है सो उत्तम धामको प्राप्त करते हैं ॥४८॥ छान्दोग्य प्रकरण सातमें लिखा है कि चारो वेद वेदांग इतिहास पुराणोंको अध्ययन करना

प्रकरणे ॥ स होवाच ऋग्वेदं भगवो ध्येयमिति यजुर्वेदᳬं सामवेद माथर्वणं चतुर्थ मितिहास पुराणं पञ्चमं वेदानां वेदं पैत्र्यं राशिं दैवं निधिं वाको वाक्य मेकायनं देवविद्यां ब्रह्मविद्यां भूतविद्यां नक्षत्रविद्यां सर्वदेवयजनविद्या मेतद्भगवो ध्येयमिति ॥४६॥ शतपथे तृतीय प्रकरणे एकादशाध्याये ॥ क्षीरोदनामाᳬं सौदनाभ्याᳬं हवा एष देवाँ स्तर्पयति य एवं विद्वान् वाको वाक्य मितिहासः पुराणमित्यहरहः स्वाध्यायमधीते तएनं तृप्तास्तर्पयन्ति सर्वैः कामैः सर्वै भोगैः ॥५०॥ वशिष्ट स्मृतौ ॥ इतिहास पुराणाभ्यां वेदार्थमुप वृंहयेत् ॥ विभेत्यल्प श्रुताद्वेदो मामयं प्रहरिष्यति ॥ ५१ ॥ मन्त्र

और भूत विद्या सब देव यजन विद्याको पढ़े ॥४६॥ शतपथके तृतीय प्रकरण अध्याय एगारहमें लिखा है विद्या वाक्य इतिहास पुराँण गाथा नारशंसी इनका पढ़ना अवश्य है जो पुरुष इनको पढ़ते हैं देवता प्रसन्न होकर उनका सब कार्य पूर्ण करते हैं ॥५०॥ वशिष्ट स्मृतिमें लिखा है कि इतिहास पुराणोंसे वेदका अर्थ विस्तार करना अल्प बुद्धि पुरुषसें वेद भी डरता है कि अपने मनका अर्थ करके हमको भी ठगेगा ॥५१॥ मन्त्र महोदधिमें लिखा है कि वेद तीन काण्डोंमें

महोदधौ वेदस्त्रिकाण्ड इत्युक्तः कर्मोपासन बोधकम् ॥ द्वयोर्हि साधनं विद्यादेकं सिद्धं प्रकीर्तितम् ॥५२॥ तथा श्रीमद्योगिवर्य्यं विप्र राजेन्द्रेणाप्युक्तम् ॥ वेदस्त्रिकाण्ड इत्युक्तः कर्मोपास्त्यादिभिः पृथक् ॥ साधनं तद्द्वयम्प्रोक्तं सिद्धं ज्ञानम्प्रकीर्तितम् ॥५३॥ तमेव धीरो विज्ञाय प्रज्ञां कुर्वीत ब्राह्मणः ॥ नानुमध्यायेद्बहूँ छब्दान्वाचोविग्लापनं हि यत् ॥५४॥ प्रत्यक्ष वेद सिद्धोऽर्थः संग्राह्यः सर्व-चेतनैः ॥ अप्रत्यक्षं श्रुतेरर्थं स्मरन्ति मुनिसत्तमाः ॥५५॥ लक्षं वेदा इति प्रोक्ता लक्षंवैभारतं स्मृतम् ॥ मन्त्रै-

विभक्त है १ कर्म २ उपाशना ३ ज्ञान दो करके साधन ज्ञान फल है ॥५२॥ श्रीमद्योगि वर्य विप्र राजेन्द्र स्वामीजीने भी अपने पुस्तकमें लिखा है कि वेद तीन काण्डमें है कर्म १ उपाशना २ ज्ञान ३ दोसे साधन एक सिद्ध है ॥५३॥ वेदके श्रुतियोंमें दो अर्थ है एक प्रत्यक्ष जो सब लोग करते हैं दूसरा गुप्त अर्थ है जो ज्ञानी पुरुष निकाल सकते हैं सब नहीं ॥ उसी अर्थको जानकर बुद्धि बढ़ाना विशेष पढ़नेसे क्या ॥५४॥५५॥ छानबे चावाका जनेउ क्यों होता है उसका कारण यह है कि चारो वेद एक लाख मन्त्र है और पञ्चम वेदरूप महाभारत भी एक लाख है उसमें अस्सी हजार मन्त्र कर्मकाण्ड सोलह हजार मन्त्र उपाशना काण्ड है चार हजार मन्त्र ज्ञान काण्ड है

रसीति सांहस्रैः कर्मकाराड उदाहृतः॥५६॥ षोडशैस्तु सहस्रैश्च उपासन विधिस्मृतः॥ चतुर्भिस्तु सहस्रैश्च फलं ज्ञानं प्रकीर्तितम् ॥ ५७ ॥ विस्मृतिर्नभवेद्यस्माद् ग्रन्थित्रय समन्वितः॥ द्विजानां स्कन्ददेशे तु उपवीतं भवेद्धितत् ॥५८॥ अगस्त्य संहितायाम् ॥ ऋग्वेदार्थं वैष्णवेच[1] ब्राह्मे[2] पाद्मे[3] वराहके[4] ॥ मात्स्ये[5] कौर्मे[6] गारुडेच[7] र्वह्नौ[8] भागवते[9] यजुः ॥ ५९ ॥ शैवे[10] लैङ्गे[11] तथा स्कान्दे[12] वायौ[13] ब्रह्माण्ड[14] सञ्ज्ञके ॥ मार्कण्डेय[15] पुराणंच सामवेद मथाकरोत्॥६०॥ नारदीयेच[16] वैवर्ते[17] भविष्ये[18] च द्विजोत्तमाः ॥ अथर्व वेद विस्तारं कृष्णद्वैपायनः

छानबे हजार वेद मन्त्रों करके कथित कर्म उपाशन। आजसे मैं करूँगा इसका भार तुमारे कंधेपर दिया जाता है तीन गाँठ इसलिये है कि नहीं भूलूँगा ३ इसका फलज्ञान है ॥५६॥५७॥५८॥ अगस्त संहितामें लिखा है कि ऋग्वेदका भावार्थ विष्णुपुराण, ब्रह्मपुराण, पद्मपुराण, वराहपुराणमें, यजुर्वेदका भावार्थ मत्स्यपुराण, कूर्म्मपुराण, गरुड़पुराण, अग्निपुराण, भागवतमें, व्यासने कहा है ॥५९॥ सामवेदका विस्तार शिवपुराण, लिंगपुराण, स्कन्दपुराण, वायुपुराण, ब्रह्मारड पुराण, मार्कराडेयपुराणमें अथर्वण वेदका विस्तार नारदीय ब्रह्मवैवर्त भविष्यपुराणमें व्यासने बनाया ॥६०॥ पाराशर उपपुराणमें

करोत् ॥६१॥ पाराशरोपपुराणे ॥ पावकस्य पुराणे च तथा सौरे च सत्तम ॥ आधिक्यं देव देवस्य शिवस्य परमात्मनः ॥६२॥ स्कान्दे अम्बिका खण्डेप्युक्तम् ॥ अष्टादश पुराणेषु दशभिर्गीयते शिवः ॥ चतुर्भिर्भगवान्विष्णुर्द्वाभ्यां देवीगणेश्वरौ ॥६३॥ प्रत्यक्षेणानुमित्या वा यस्तु पायो न बुध्यते ॥ स एव बोध्यते वेदस्तस्माद्वेदस्य वेदता ॥ ६४॥ पुराण लक्षणन्तु उशनसोप-

लिखा है कि अग्निपुराणमें तथा सौर उपपुराणमें देव-देव परमात्मा शिवका माहात्म्य है ॥६१॥ स्कन्दपुराणके अम्बिका खण्डमें लिखा है कि अठारह पुराणोंमें दश पुराणोंसे शिव, चारसे विष्णु, दोसे देवी गणेशका वर्णन है ॥६२॥ बहुत लोग कहते हैं कि वेद भी नहीं माननीय है वेद माननेका आवश्यकता इसलिये है कि जो बात प्रत्यक्ष अनुमानसे नहीं सिद्ध हो वह वेदसे मालूम होता है ॥६३॥ पुराणोंका लक्षण उशनस उपपुराणके दूसरे अध्यायमें लिखा है कि सर्ग १ (सृष्टिका वर्णन प्रतिसर्ग २ (स्वर्गका वर्णन वंश ३ (चन्द्र और सूर्य वंशका वर्णन मन्वन्तर ४ (चौदहो मनुका वर्णन वंश्यानुचरित ५ (वंशोका चरित्र वर्णन यह पाँच विषयोंसे युक्त पुराण जानना ॥६४॥ अठारहपुराणोंकी गणनामें देवी भागवत है श्रीमद्भागवत नहीं मत्स्यपुराणके पैतीसवें अध्यायमें पुराणोंके दान प्रसंगमें लिखा है कि जिसमें गायत्रीका अधिकार विस्तार अर्थात् गायत्रीपटल,

पुराणे द्वितीयाध्याये ॥ सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो म-न्वन्तराणि च ॥ वश्यानुचरितञ्चैव पुराणं पञ्च लक्ष-णम् ॥६५॥ अत्र भागवतं नाम देवी भागवतं तदुक्तं मत्स्यपुराणे त्रिपञ्चाशतितमेध्याये पुराणदान प्रसङ्गेन ॥ यत्राधित्यत्यगायत्रिं वर्ण्यते धर्मविस्तरः ॥ वृत्रासुरवधो प्येतं तद्भागवत मुच्यते ॥ ६६ ॥ सारतस्य कल्पस्य मध्येयेस्युर्नरोत्तमाः ॥ तद्वृत्तान्तोद्भवं लोके तद्भागवत मुच्यते ॥६७॥ हयग्रीव ब्रह्म विद्या यत्र वृत्रवधस्तथा ॥ गायत्र्या च समारम्भ स्तद्वैभागवतं विदुः ॥ ६८ ॥ शुम्भस्यैव निशुम्भस्य महिषासुर घातनम् ॥ श्रीदेवी चरितं चैव तद्भागवत मुच्यते ॥६६॥ लिखित्वा तच्च

पद्धति, स्तोत्र, कवच, सहस्त्रनाम, आदि विधि हो और वृत्रासुरका वध हो सो भागवत है ॥६५॥ सारस्वत कल्पमें जो मनुष्य उत्पन्न हुए हैं उनका वृत्तान्त जिसमें लिखा हो सो भागवत जानना ॥६६॥ हयग्रीवावतारकी कथा ब्रह्मविद्या वृत्रासुरका वध गायत्रीसे आरम्भ जिसमें हो सो भागवत है ॥६७॥ शुम्भ निशुम्भ महिषका वध और श्रीदेवीका चरित्र वर्णन जहाँ हो उसको भागवत जानना ॥६८॥ उस भागवतको पूर्णिमा अथवा अमावास्याको जो सुवर्णके सिंहके साथ दान करते हैं सो परमगतिको जानते हैं ॥६९॥७०॥ वोपदेव

योदद्याद्धेमसिंह समन्वितम् ॥ पौर्णमास्यां प्रौष्ठपद्यां स याति परमां गतिम् ॥ ७० ॥ तथा वोपदेव कृत हेमाद्रा वप्युक्तम ॥ श्रीमद्भागवतं नाम पुराणञ्च मयेरितम् ॥ श्रीमता वोपदेवेन श्रीकृष्णस्य यशोन्वितम् ॥७१॥ अग्नि पुराणे २७२ अध्यायेऽपि ॥ सारस्वतस्य कल्पस्य प्रौष्ठपद्यान्तु यो ददेत् ॥ अष्टादश सहस्राणि हेमसिंह समन्वितम् ॥७२॥ पाद्मे ॥ शैवमादि पुराणञ्च देवी भागवतन्तथा ॥ ७३ ॥ कालिकोपपुराणे ॥ देवी भागवतस्यास्य पुराणं कालिकाह्वयम् ॥ ७४ ॥

जयदेव दो भाई बंगाली ब्राह्मण हुये दोनों कृष्णके भक्त रहे जयदेवने गीतगोविन्द बनाया वोपदेवने व्यासके नामसे भागवत बनाया भोजराजाके समयमें भोजने इस अपराधमें उनका दोनों हाथ कटवा लिया यह भोज जीवनचरित्रमें लिखा है वाद वोपदेवने हेमाद्रि नामका एक धर्म शास्त्र संग्रह किया उसमें लिख दिया कि श्रीकृष्ण यशसे युक्त श्रीमद्भागवत मैंने बनाया ॥७१॥ अग्निपुराणके दो सव बहत्तरवें अध्यायमें लिखा है कि सारस्वत कल्पके कथासे युक्त अठारह हजार भागवतको सुवर्णके सिंहके साथ दान करना चाहिये ॥७२॥ पद्मपुराणमें लिखा है शिवपुराण, तथा देवीभागवत, आदिपुराण है ॥७३॥ कालिकोपपुराणमें लिखा है कि देवीभागवत पुराणका कालिका उपपुराण है ॥७४॥ आदित्योपपुराणमें लिखा है कि

आदित्योपपुराणे ॥ ददाति सूर्यभक्ताय यस्तु भागवतं द्विजाः॥ सर्वपापविनिर्मुक्तः सर्वव्याधि विवर्जितः॥७५॥ शिवपुराणे॥ भगवत्याश्चदुर्गायाश्चरितं यत्र विद्यते तत्तु भागवतं प्रोक्तं न तु देवीपुराणकम् ॥७६॥ पराशरोप पुराणे ॥ पावकस्य पुराणे च तथा सौरे च सत्तम ॥ आधिक्यं देवदेवस्य शिवस्य परमात्मनः ॥ ७७ ॥ स्कान्दे अम्बिकाखण्डेऽप्युक्तम् ॥ अष्टादश पुराणेषु दशभि र्गीयते शिवः ॥ चतुर्भिर्भगवान्विष्णु र्द्वाभ्यां देवी गणेश्वरौ ॥७८॥ तथा गीतायाः शिवरूपत्वेन वर्णनं

सूर्यभक्तको जो देवीभागवत दान करते हैं सो सब पापोंसे तथा रोगोंसे छूट जाते हैं ॥७५॥ शिवपुराणके मध्यमेश्वर महात्म्यमें लिखा है भगवती दुर्गाका चरित्र जिस पुराणमें हो वही भागवत पुराणोंमें है अलग देवीपुराण नहीं है ॥७६॥ पराशर उपपुराणमें लिखा है कि अग्निपुराण तथा सौर उपपुराणमें देव देव शिवका विशेष माहात्म्य है ॥७७॥ स्कन्दपुराणके अम्बिका खण्डमें लिखा है कि अठारहो पुराणोंमें दश पुराणोंसे शिव चारसे विष्णु बाकीसे देवी गणेशका वर्णन है ॥७८॥ शिवगीता, रामगीता, गणेशगीता, गुरू गीता, आदि गीता बहुत है परन्तु सब गीताओंमें प्रधानरूपसे भगवद्गीता माना जाता है और साधु महात्मा पण्डित गृहस्थ आदि सब पढ़ते हैं और उसका टीका करीब सात सौके हो गया है परन्तु

गीतार्थवेद्यं शिवज्ञानमेवेत्युच्यते ॥ एतदुक्तम् वाराह-पुराणे ॥ पार्थाय प्रतिबोधिता भगवता नारायणेन स्वयं व्यासेन ग्रथिता पुराण मुनिना मध्ये महाभारते ॥ अद्वैतामृतवर्षिणीं भगवतीं अष्टादशाध्यायिनीं मम्ब्वत्वा मनसा दधामि भगवद्गीते भवद्वे षिणीम् ॥ ७९ ॥ गीतायामपि श्रीकृष्णेनार्जुनंम्प्रत्युक्तम् ॥ उत्तमः पुरुषस्त्वन्य परमात्मेत्युदाहृतः ॥ यो लोकत्रय-

गीतासे कौन देव कहे जाते हैं तो सर्वोंने कृष्णहीको माना है सो ठीक नहीं है गीता करके कृष्णने अर्जुनके प्रति शिव ज्ञानका उपदेश किया है इस बातको गीतासे और पुराणोंसे मैं दिखाता हूँ—वाराह पुराणमें लिखा है कि अर्जुनको बोध दिया भगवान श्रीकृष्णचन्द्रने जिस बातका उसीको पुराणकर्ता व्यासने क्रम पूर्वक रचना किये जो महाभारतमें है अद्वैत (एक) अमृत (शिव) अद्वैतामृत (शिव ज्ञानामृत) जो शिवशक्ति अठारह अध्यायमें रहनेवाली चिदम्बरशक्ति रूपा जो अर्द्धनारीश्वर गीतारूपा तुमको मैं मनमें धारण करता हूँ तुम कैसी हो कि संसार मायाको छोड़ानेवालि हो ॥७९॥ गीतामें भी श्रीकृष्णचन्द्र अर्जुनसे कहा कि उत्तम पुरुष हमसे अन्य परमात्मा है जो तीनों लोकोंका भरण करता है और वह अव्यय (नाशरहित) ईश्वर है ईश्वर संज्ञा कोशसे शिवका है इस तरहसे तो जिसका ऐश्वर्य हो सब ईश्वर कहे जाते हैं इत्यादि वचनोंसे अमृत शब्दशिवको कहता है ॥८०॥ पद्मपुराणके गीता माहात्म्यमें गीताको

माविश्य विभर्त्यव्यय ईश्वरः ॥८०॥ पद्म पुराणे गीता माहात्म्ये गीताया स्वरूप वर्णनम् ॥ वक्त्राणिपंच-जानीहि पंचाध्यायाननुक्रमात् ॥ दशाध्यायभुजाश्चैक मुदरं द्वे पदाम्बुजे ॥८१॥ एवमष्टादशाध्यायै वाङ्मयी मूर्तिरैश्वरी ॥ जानीहिज्ञानमात्रेण महापातकनाशिनी ॥८२॥ वाराह पुराणे ॥ सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दनः ॥ पार्थोवत्सः सुधिर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत् ॥८३॥ गीताज्ञानेन सम्बोध्य कृष्णः प्राह तमर्जुनम् ॥ अष्टादश पदस्थानं गीताध्याये प्रतिष्ठतम् ॥८४॥

शिवरूप लिखा है कि गीताके पाँच अध्याय. शिवका पाचोमुख दश अध्याय दशोवाहू दो अध्याय दोनों पाद एक अध्याय उदर एवं अठारह अध्यायसे युक्त वाक्मयी शिवमूर्ति गीता है ॥८१॥ ॥८२॥ वाराह-पुराणमें लिखा है कि उपनिषद् रूपी गौसें अर्जुनरूपी वछरूको लगाकर गीतामृत (शिवज्ञानामृत) दुग्धको दुहकर श्रीकृष्णने अर्जुनको पिलाया ॥८३॥ गीतामृत शब्दसे शिवज्ञानामृतका प्रमाण लिखते हैं गीता गङ्गा च गायत्री इत्यादि गीतामहात्म्यके वचनसे गायत्री शब्द पर्यायवाचक गीता है गायत्रीका अर्थ शिव शक्ति है, सप्रमाण इस खण्डके द्वितीय तरंगमें लिखेंगे अमृतशब्दका अर्थ इसी तरङ्गमें आगे लिखते हैं ॥ श्रीकृष्ण अर्जुनके प्रति कहते हैं कि सगुण द्वारा अठारह सीढ़ियोंसे होकर निर्गुणपर ब्रह्मको प्राप्त होता है ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ अतएव सर्वशास्त्रमय

मोक्षस्थान म्परंपार्थं सगुणम्बाथ निर्गुणम् ॥ सोपानाष्टादशैरेवं परब्रह्माधि गच्छति ॥८५॥ तस्माद्धर्ममयी गीता सर्वशास्त्र प्रयोजिका ॥ सर्वशास्त्रमयी गीता तस्माद्गीता विशिष्यते ॥ ८६ ॥ वाराह पुराणस्थ सर्वोपनिषदोगाव इत्यादि स्मृत्युक्त गोपालनंदने दोग्धृविषय एव सर्वतः सर्वैं दत्तचित्तः प्रपञ्चितानि यत्तु दुग्धामृतं गीतावेद्यं शिवात्मकं तूरीयं तत्वं तत्र केनापि नैव दत्तचित्तेन किंचि-

गीताको सर्वोत्तम जानो ॥ ८६ ॥ वाराहपुराणके 'सर्वोपनिषदो गाव' इत्यादि श्लोकोंसे जो दोग्धा और दुग्धका विभाग किया है उसमें दोग्धा (दुहनेवाला) का प्रशंसा सब भाष्यकारोंने कहा है जो दुग्ध गीतामृत (शिवतत्वामृत) उसके विषयमें किसीने विशेषरूपसे कुछ नहीं लिखा है। दुहनेवाला और दुग्धमें जो भेद है सो शास्त्र और लोकसे सब जानते हैं ॥ गीता कहनेवाले श्रीकृष्णचन्द्रने सगुणभावसे शिव ही को प्रतिपादन किया है शिवसे और अपनेसे अभेद मानकर अहंगिरो पाशना द्वारा शिव ही को कहा है उसी बातको कूर्मपुराणके तीस और अरतीस अध्यायमें व्यासजीने अर्जुनके प्रति कहा है। श्रीकृष्णके परम धाम जाने बाद अर्जुन उनका और्द्धदैहिक क्रिया करके महाशोकसे युक्त कहूँ जाते रहे रास्तेमें व्यास मुनिको देखें शोकको छोड़कर दण्डवत कर युगोंका धर्म पूछे श्रीवेदव्यासने चारों युगोंका धर्म उनको सुनाकर गीताज्ञान विराट् दर्शनको स्मरण कराकर

दप्युक्तम् ॥ दोग्धृ दुग्धयो र्ज्ञातृ ज्ञेययोर्यथा पार्थक्यं लोकतः शास्त्रश्च सुप्रसिद्धम् ॥ तथात्रापि गीताशास्त्रप्रतिपादकेन श्रीकृष्णेन गीतार्थवेद्यं शिवतत्वमेव सगुणदशायां कथञ्चित्यार्थक्यभावेन तथा परमार्थदशाया महंगिरोपाशनया स्वात्मनोह्यभेदेनार्जुनम्प्रत्युक्तम् ॥ तदेतदर्थकमेवार्जुनम्प्रति सुस्पष्टतया व्यासेनोक्तम् ॥ कूर्म्मपुराणे अष्टत्रिंशति तथा त्रिंशत्यध्याये चोक्तम् ॥ गतेनारायणेकृष्णे स्वयमेवपरम्पदम् ॥ पार्थः परमधर्मात्मा पाण्डवः शत्रुतापनः ॥ ८७ ॥ कृत्वा चैवोत्तरविधिं शोकेन महताबृतः ॥ अपश्यन्पथि गच्छन्तं कृष्णद्वैपायनं मुनिम् ॥ ८८ ॥ पपातदण्डवद्भूमौ त्यक्त्वा शोकं तदार्जुनः ॥ पृष्ठवान्प्रणिपत्याशु युगधर्मान्द्विजोत्तमाः ॥ तस्मैप्रोवाचसकलं मुनिः सत्यवतीसुतः ॥ ८९ ॥ इत्यादिना युगधर्मान्प्रदर्श्य श्रीकृष्णोक्तं गीताज्ञेयं शिव-

बोले ॥८७॥८८॥८९॥ व्यासजी अर्जुनको हाथसे छूकर कहते हैं अर्जुनसे हे अर्जुन ! तुम धन्य हो और अनुग्रह करने योग्य हो तुम्हारे सदृश तीनों लोकमें शंकरका भक्त दूसरा नहीं है ॥ सब जगतमय विश्वाक्ष विश्वतोमुख रुद्रको तुमने प्रत्यक्ष देखा है ॥ और स्वयं

तत्वं स्मारयन् तदभिन्नत्वं विराड्रूपदर्शनञ्चापि सँस्मारयन् पुनर्व्यासः स्त्रैवोवाच तद्यथातमुवाच पुनर्व्यासः पार्थः परपुरञ्जयम् ॥ कराभ्यांसुशुभाभ्याञ्च सँस्पृस्यप्रणतं मुनिः ॥६०॥ धन्योस्यनुगृहीतोसि त्वादृशोऽन्योनविद्यते ॥ त्रैलोक्ये शङ्करेनूनं भक्तःपरपुरञ्जयः ॥ दृष्टवानसि तं देवं विश्वाक्षं विश्वतोमुखम् ॥ प्रत्यक्षमेव सर्वेषां रुद्रं सर्वजगन्मयम् ॥६१॥ ज्ञानं तदैश्वरं दिव्यं यथावद्विदितं त्वया ॥ स्वयमेव हृषीकेशः प्रीत्योवाच सनातनः॥६२॥ गच्छगच्छ स्वकंस्थानं न शोकं कर्तुमर्हति ॥ व्रजस्व परयाभक्त्या शरण्यं शरणं शिवम् ॥६३॥ तत्रैव एकत्रिंशेऽध्यायेऽपि ॥ नार्जुनेनसमः शम्भो र्भक्त्याभूतोभविष्यति ॥ मुक्त्वा सत्यवतीसुनूं कृष्णम्वा देवकीसुतम् ॥ ६४ ॥ यत्रयत्र

विष्णु भगवान शिवज्ञानको यथावत प्रीतिपूर्वक तुमको उपदेश किये हैं ॥ ६० ॥ अतएव शोकको त्यागकर अपने स्थानको जावो और भक्तिपूर्वक शरण देनेवाले जो शिव है उनको शरणमें प्राप्त होवो ॥६१॥६२॥६३॥ वहाही एकतीशवें अध्यायमें लिखा है कि सत्यवती सुत व्यासदेवकी पुत्र कृष्णको छोड़कर अर्जुनके समान शिवभक्त दूसरा हुआ न होगा ॥६४॥ श्रीकृष्णचन्द्रने गीतामें जहाँ-

गीतायां श्रीकृष्णेन अहं ममेति पदान्युक्तानि तस्याय-
माशयः ॥ तदुक्तं स्कान्दे सूतसंहितायाम् ॥ इदमर्थेशरीरेतु
याहमित्युदितामतिः ॥ सामहा भ्रान्तिरेवस्या त्तस्मिस्त-
दूग्रहतत्त्वतः ॥ ६५ ॥ ब्रह्मविष्णुप्रजानाथ प्रमुखास्स-
र्वेचतनाः ॥ अहमेवपरंब्रह्मे त्याहुरात्मानमेवहि ॥६६॥
तेतु चिन्मात्रमद्वैतं अहमर्थतया भृशम् ॥ अङ्गीकृत्याह
मद्वैतम्ब्रह्मेत्याहु र्नदेहतः ॥६७॥ तत्रैव यज्ञवैभवखण्डे ॥
यत्रयत्रेदमित्येषा बुद्धिर्दृष्टा स्वभावतः ॥ तत्रतत्र त्वना-
त्मत्वं विज्ञातव्यं विचक्षणैः ॥६८॥ त्वं शब्दार्थोयआभाति
सोहं शब्दार्थ एव हि ॥ त्वमहं शब्दलक्ष्यार्थ साक्षा-

जहाँ अहं मम शब्द लिखा है उसका तात्पर्य स्कन्दपुराणके सूत-
संहितामें लिखा है कि इस शरीरमें जिसकी अहं बुद्धि होती है उसको
महाभ्रम जानना क्योंकि वस्तुतः शरीर नश्वर है जीव इसमेंका ब्रह्म
रूप है ॥६५॥ ब्रह्मा विष्णु इन्द्र आदि देवता जो कहे हैं कि हम ही
परब्रह्म है सो अपनेमें स्थित आत्माको अहंगिरो पासना द्वारा कहा
है ॥६६॥ चैतन्यमात्र आत्मा शिव अद्वैतको अपनेमें अङ्गीकार कर
अहंब्रह्म कहा है देहको नहीं ॥ ६७ ॥ पुनः वहाँ ही यज्ञवैभवखण्डमें
लिखा है कि जहाँ-जहाँ इदं पद कहते हैं सो अनात्मा जानो ॥ और
जो त्वं शब्दका अर्थ है वही अहं शब्दका अर्थ है त्व शब्दका अर्थ
चैतन्यमात्र आत्मा (शिव) को कहते हैं ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ अहं

त्प्रत्यक् चितिः परा ॥ ६६ ॥ तथा शङ्कराचार्यकृत अपरोक्षाऽनुभूति वेदान्तग्रन्थेषूक्तम् ॥ अहंशब्देनविख्यातः एकएव परः शिवः ॥ स्थूलस्त्वनेकताम्प्राप्तः कथं स्याद्देहकः पुमान् ॥ गीता गङ्गा च गायत्री सीत सत्या सरस्वतीति गीतमाहात्म्य वचनाद्गीता शब्दस्य गायत्री शद्धपर्यायवा चकत्वाद्वागायत्री मन्त्रवेद्यः शिवएव अतो गीतार्थ वेद्यः शिवएव ॥ अमृतशब्दस्यार्थस्तु मैत्रारण्योपनिषदि यो वै रुद्रः स

शब्दका अर्थ शंकराचार्य कृत अपरोक्षानुभूति वेदान्त ग्रन्थमें कहा है कि अहं शब्दसे एक पर शिव कहे जाते हैं स्थूल अनेकताको प्राप्त देह अथवा मायावद्ध जीव अहं शब्दवाच्य नहीं है ॥ गीता गंगा गायत्री सीता सत्या सरस्वती यह सब एक वाचक है इस गीता माहात्म्यके वचनसे गायत्रीके अर्थसे युक्त गीता है गायत्रीमन्त्र शिवको कहती है तो गीता भी शिव ही को कहता है अमृत शब्दका अर्थ मैत्रारण्योपनिषद्में कहा है कि जो रुद्र वही भगवान अमृत हैं उनको नमस्कार करता हूँ इसमें फलित यह हुआ कि गीतामृत (शिवज्ञानामृत) को उपनिषदोंसे निकालकर कृष्णने अर्जुनको पिलाया ॥ इसका विशेष व्यवस्था श्री विप्राजेन्द्रस्वामीजीके गीता भाष्यमें है ॥ पद्मपुराणके गीता माहात्म्यमें लिखा है कि जहाँ गीताका पाठ होता है वहाँ ईशानमें (शिवमें) अनन्य (शिवसे अन्य दूसरा

भगवान् यच्चामृतं तस्मै वै नमोनमः ॥ अतः गीता मृतपदेन शिवज्ञानामृतं गृह्यते अधिकं श्रीमद्योगिवर्य विप्रराजेन्द्राचार्यकृत गीताभाष्ये द्रष्टव्यम् ॥ पाद्मे ॥ भगवत्परमेशाने भक्तिरव्यभिचारिणी ॥ जायते सततं तत्र यत्र गीताभिनन्दनम् ॥ १०० ॥ अथ शिवस्य सर्वतः परत्वं व्यापकत्वञ्च दर्शयति ॥ तदुक्तं पाराशरोपपुराणे तृतीयाध्याये ॥ प्रजापतेरपि ब्रह्मा ब्रह्मणो विष्णु रास्तिकाः ॥ विष्णोरपि हर स्तस्मन्मायी साक्षान्महेश्वरः ॥ ततोधिकतरः साम्बः शिवः सत्यादिलक्षणः ॥१॥ अष्टादश पुराणानां निष्ठा काष्ठा महेश्वरे ॥ गुणाभिमानिनो नैव ब्रह्मविष्णु महेश्वराः ॥२॥

नहीं) ऐसी भक्ति उत्पन्न होती है ॥१००॥ शिवका सर्वोपरित्व और व्यापकत्वको सप्रमाण आगे कहते हैं ॥ पराशर उपपुराणके तीसरे अध्यायमें लिखा है कि प्रजापतिसे अधिक ब्रह्मा ब्रह्मासे विष्णु विष्णुसे मायायुक्त महेश्वर सबसे अधिकतर साम्ब शिव हैं जो सत्य, ज्ञान, अनन्त, ब्रह्म, एतादृश गुणोंसे युक्त है ॥ १ ॥ अट्ठारहों पुराणोंकी निष्ठा (भक्ति) काष्ठा (परत्व) वर्णन महेश्वरमें है त्रिगुणाभिमानी ब्रह्म विष्णु रुद्रादिमें नहीं है ॥ २ ॥ पुराणोंमें जहाँ रुद्रका माहात्म्य

उत्कर्षोयः पुराणेषु दृश्यते शाम्भवेषु च ॥ रुद्रस्यासौ स्वरूपेण मुने तत्वात्मनापि च ॥ ३ ॥ उत्कर्षोयः पुराणेषु दृश्यते वैष्णवेषु च ॥ असौ तत्वनात्मना विष्णोर्न स्वरूपेण सत्तमः ॥ ४ ॥ स्कान्दे सूतसंहितायाम् ॥ कानिचिद्वेदवाक्यानि ब्रह्मणा वेदवित्तमाः ॥ रुद्रमूर्ति मुपाश्रित्य शिवेपरम कारणे ॥५॥ विष्णुमूर्ति मुपाश्रित्य ब्रह्ममूर्तिञ्च कानिचित् ॥ आग्नेयी मूर्तिनाश्रित्य श्रुति वाक्यानि कानिचित् ॥ ६ ॥ सूर्यमूर्तिपाश्रित्य श्रुति-वाक्यानि कानिचित् ॥ एवं मूर्त्याभिधानेन द्वारेणैव

लिखा है सो स्वरूपतः (देहभावसे) तत्वतः (परब्रह्म भावसे) जानना ॥ ३ ॥ और विष्णु माहात्म्य कहनेवाले पुराणोंमें जो विष्णुका उत्कर्षता है तत्वतः (ब्रह्मभावतः) स्वरूपतः नहीं इसमें यह फलित हुआ कि विष्णु भगवानकी बड़ाई जहाँ है सो परब्रह्मसे एकता मानकर जैसे तत्वमसि आदि महावाक्योंसे जीवको ब्रह्मस्वरूप माना है तो विष्णु आदि देवोंको ब्रह्मरूप कहनेमें क्या हानि है ॥ ४ ॥ स्कन्द पुराणके सूत संहितामें ऋषियोंके प्रति श्री सूतजीका वचन है कि क्वचित् कदाचित् वेदपुराणोंका वाक्य रुद्रमूर्ति द्वारा परम कारण शिवको कहती है ॥ ५ ॥ तथा विष्णुमूर्ति ब्रह्ममूर्ति द्वारा भी परम कारण शिवको कहती है ॥६॥ सूर्यमूर्ति द्वारा और अन्यान्य मूर्ति द्वारा

मुनीश्वराः ॥ प्रतिपाद्यो महादेवः स्थिति स्तर्वासु-
मूर्तिषु ॥ ७ ॥ शिवपुराणे ॥ परश्चापरमश्चेति परात्पर
मिति त्रिधा ॥ रुद्रो ब्रह्माथ विष्णुश्च प्रोक्ताः श्रुत्यैव
नान्यथा ॥८॥ तेभ्यश्च परमोदेवः परशब्देन बोधितः ॥
पूर्णानन्दमयः शम्भुः प्रादुर्भूतो भवेद्हृदि ॥९॥ तत्रैव
वायु संहितायाम् सप्तविंशति तमेयेपि ॥ वामाङ्गाद-
भवद्विष्णु स्ततोविद्येति सञ्ज्ञितः ॥ हृदयानीलरुद्रोभू
च्छिवस्य शिवसञ्ज्ञितः ॥ १० ॥ दक्षिणाङ्गा न्महेशस्य
जातो ब्रह्मात्म सञ्ज्ञकः ॥ तस्मात्त्रयस्ते कथ्यन्ते जगतः
कारणत्रयम् ॥ कारणत्रयहेतुश्च शिवः परमकारणः ॥११॥
स्कान्देऽपि ॥ ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च परत्वविभूतयः ॥

भी वक्तव्य महादेव ही है जो सब मूर्तियोंमें स्थित है ॥ ७ ॥ शिव
पुराणमें लिखा है कि पर, अपर, परात्पर, रुद्र, ब्रह्मा, विष्णु, है,
इन तीनोंसे परे पूर्णा नन्दमय शिव है जो सबके हृदयमें स्थित है ॥८॥
वहाँ ही वायु संहिताके सताइसवें अध्यायमें लिखा है कि शिवके
बाएँ अङ्गसे विद्यात्मिका शक्ति विष्णु उत्पन्न हुए और दाहिने अंगसे
ब्रह्मा हुए हृदयसे नील रुद्र हुए एहि तीनों जगतका कारण है कारण
त्रयका हेतु परम कारण शिव है ॥९॥१०॥११॥ स्कन्द पुराणमें भी

एतत्त्रयाणा मधिकः शिवः परम कारणः ॥ १२ ॥ अ-
द्यापि ब्रह्म विष्णुभ्यां नज्ञातोयं महेश्वरः ॥ स एव
शङ्करः शम्भुः परब्रह्म नचेतरः ॥१३॥ सत्यं सत्यं पुनः
सत्यं उद्धृत्य करमुच्यते ॥ तस्मात्सएव सर्वेशः शतवारं
मयोच्यते ॥ १४ ॥ कूर्म्मपुराणे श्रीकूर्म्म वचनम् ॥
शिवस्तु सर्वहविषां भोक्ताचैव फलप्रदः ॥ सर्वदेवतनु-
र्भूत्वा सर्वात्मा सर्वसंस्थितः ॥ १५ ॥ पाचनं कुरुते
वन्हिः सोपि तच्छक्ति बोधितः यज्ञानां फलदोदेवो
महादेव नियोगतः ॥ १६ ॥ महाभारते अनुशासनिके

लिखा है ब्रह्मा विष्णु रुद्र परतत्वका विभूति है तीनोंसे अधिक परम कारण शिव है ॥१२॥ अब तक ब्रह्मा विष्णुने शिवको नहीं जाना वही शिवपर ब्रह्म हैं उनसे अतिरिक्त दूसरा परब्रह्म नहीं है ॥ १३ ॥ तीन बार सत्य सत्य बाहू उठाकर व्यासजी सौ दफ़े प्रतिज्ञा करके कहते हैं कि सबका ईश (मालिक) महादेवजी है ॥१४॥ कूर्म पुराणमें श्री कूर्म्म भगवानका वचन है कि सर्वात्मा शिव सब देव रूपसे हविष्य ग्रहण करते हैं और फल देते हैं ॥१५॥ अग्निमें पाचनशक्ति शिवहीसे हुआ है और यज्ञोंका फल महादेव हीके प्रेरणासे प्राप्त होता है ॥१६॥ महाभारतके अनुशासन पर्वमें इन्द्रद्युम्न राजाके प्रति उपमन्यु ऋषिका वचन है कि वही भगवान ईश सब तत्वोंका आदि नाश रहित है और दाहिने अंगसे लोकप्रिय ब्रह्माको उत्पन्न किये तथा सृष्टिके आदिमें

पर्वणि इन्द्रद्युम्नप्रति उपमन्यु वचनम् ॥ स एव भग-
वानीशः सर्वतत्वादि रव्ययः ॥ सोऽसृजद्दक्षिणादङ्गा
द्ब्रह्माणं लोकभावनम् वामपार्श्वा तथाविष्णुं आदौ
प्रभु रथासृजत् ॥१७॥ मैत्रारण्योपनिषदि ॥ ब्रह्मारुद्रो
विष्णुरित्यथ योहखलु वा वाऽस्य राजसोऽशो ऽसौ
ब्रह्माथ योहखलु वास्य तामसोंऽशो ऽसौसयोऽयंरुद्रोऽथ
योहखलु वावाऽस्य सात्विकोंशो ऽसौसएवं विष्णुः सवा
एष त्रिधाभूतो ऽष्टधैकादशधा द्वादशधा परिमित धा-
चोद्भूतउद्भूतत्वाद्भूतेषुचरति प्रतिष्ठा सर्वभूताना मधि-
पतिर्वभूवेत्यसावात्मा ऽन्तर्वहिश्चान्तर्वहिश्च ॥ १८ ॥
महाभारते युद्धपर्वणि ॥ यस्याज्ञया जगत्सृष्टं विरंचिः

वाम भागसे विष्णुको उत्पन्न किये ॥ १७ ॥ मैत्रारण्योपनिषद्में
लिखा है कि उन्हीं सदाशिवके रजोगुण अंशसे ब्रह्मा सतोगुणसे विष्णु
तमोगुणसे रुद्र वही तीनरूप, अष्टमूर्ति, और एकादश रुद्ररूप, बारह
आदित्यरूप, परिमित, अपरिमित, संसारके भीतर, बाहर सब, भूतोंका
अधिपति, आत्मा वही है ॥ १८ ॥ महाभारतके युद्धपर्वमें लिखा है
जिनके आज्ञासे ब्रह्माने जगतको रचा अवर विष्णुने पालन
किया तथा रुद्रने संहार किया ऐसे पिनाकी महादेवको मैं नमस्कार

पालको हरिः॥ संहर्ता कालरुद्राख्यो नमस्तस्मै पिनाकिने ॥ १६ ॥ तथा लिंगपुराणो द्वाविंशत्यध्याये प्युक्तम् ॥ तमसा कालरुद्राख्यं रजसा कनकाण्डजम् ॥ सत्वेन सर्वगं विष्णुं निर्गुत्वे महेश्वरम् ॥ २० ॥ रुद्रप्रसाद्विष्णोश्च जिष्णोश्चैवतु सम्भवः ॥ मन्थानधारणार्थाय हरेः कूर्म्मत्वमेव च ॥२१॥ एकस्य देवदेवस्य ब्रह्मविष्णु महेश्वराः ॥ अंशभूता इतिज्ञानं नाल्पस्य तपसः फलम् ॥ २२ ॥ ब्रह्माण्ड पुराणे द्वितीयपादे सप्तविंशत्यध्याये ॥ अथोवाच महादेवः प्रीतोहं सुरसत्तमौ ॥ युवां प्रसूतौ गात्रेभ्यो मम पूर्वं सनातनौ ॥२३॥

करता हूँ ॥१६॥ लिंग पुराणके बाइशवें अध्यायमें लिखा है कि तमोगुणमें कालरुद्र रजोगुणमें ब्रह्मा सतोगुणमें विष्णु तीनों गुणसे परे महेश्वरको जानो ॥२०॥ शिव हीके प्रसादसे विष्णु इन्द्र आदि देवों की उत्पत्ति है और पृथिवी धारण करनेके हेतु हरिको कूर्म्मत्व उन्हींके प्रेरणासे जानो ॥२१॥ एक देवदेव महादेव हीके अंशसे ब्रह्मा विष्णु रुद्र हुए ऐसा ज्ञान होना थोड़ा तपस्याका फल नहीं है ॥२२॥ ब्रह्माण्डपुराण द्वितीयपाद सत्ताइशवाँ अध्यायमें शिवका वचन है कि तुम सब हमारे देहसे उत्पन्न हो तुम दोनों पर मैं अत्यन्त प्रसन्न हूँ ॥२३॥ हमारा दक्षिण बाहूँ ब्रह्मा वाम बाहूँ विष्णु

अयंमेदक्षिणो बाहुर्ब्रह्मा लोकपितामहः ॥ बामो-बाहुश्च मे विष्णु र्नित्यं युद्धेष्वनिर्जितः ॥ २४ ॥ मत्स्यपुराणे एकचत्वारिंशत्यध्याये ऋषीन्प्रति गिरिजा वाक्यम् ॥ कःस्यैतद्गगनंमूर्तिः कस्याग्निः कश्चमारुतः ॥ कश्चभूः कश्चवरुणः कश्चन्द्रार्क विलोचनः ॥ २५ ॥ कस्यार्चयन्ति लोकेषु लिङ्गम्भक्त्या सुरासुराः ॥ यम्ब्रुवन्तीश्वरंदेवा विधिन्द्राद्या महर्षयः ॥ २६ ॥ अदितिः कस्यमातेयं कस्माज्जातोजनार्दनः ॥ प्रभावम्प्रभश्चैव तेषामपि न वेत्थकिम् ॥२७॥ अथ नारायणोदेवः स्वकांक्षायां समाश्रयत् ॥ यत्प्रेरितः प्रकुरुते जन्मनाना

जो युद्धमें कभी पराजय नहीं होते ॥२४॥ मत्स्य पुराणके एकतालीशवें अध्यायमें ऋषियोंके प्रति गिरिजाका वचन है कि हे ऋषियों! आकाश और अग्नि वायु मूर्ति कौन है पृथ्वी जल मूर्ति कौन है सूर्य चन्द्र अग्नि नेत्रवाला कौन है ॥२५॥ सुर (देवता) असुर (राक्षस) किसका लिंग पूजते हैं ब्रह्मा इन्द्र आदि देवगण जिसको ईश्वर कहते हैं ॥२६॥ और अदिति किसकी माता हैं और विष्णु कहाँसे जायमान हैं ऐसा प्रभाव शिवका क्या तुम सब नहीं जानते हो ॥२७॥ जिस शिवकी प्रेरणासे नारायण नाना योनिमें गर्भवास कर अवतारको ग्रहण करते हैं ॥२८॥ देवी भागवत स्कन्द पाँच अध्याय पाँचमें

प्रकारकम् ॥ २८ ॥ देवीभागवते पञ्चमस्कन्दे पञ्चमाध्याये ॥ विष्णोरंशावतारेस्मिन्नारायण मुनेस्तथा ॥ अंशजे वासुदेवेन किं चित्रं शिवपूजने ॥ २९ ॥ सहि सर्वेश्वरो देवोविष्णोरपिच कारणम् ॥ सुषुप्तस्थान नाथः स विष्णुनाच प्रपूजितः ॥ ३० ॥ तत्रैव प्रथमस्कन्दे द्वितीयाध्याये निर्गुणायां सदानित्या व्यापिका विकृताशिवा तस्यास्तु सात्विकीशक्ति राजसी तामसी तथा॥ महालक्ष्मीः सरस्वती च महाकालीति ताः स्त्रियः ॥ विष्णोरप्यधिको रुद्रो विष्णुस्तु ब्रह्मणोधिकः ॥ तस्मान्न संशयः कार्यः कृष्णेन शिवपूजने ॥ ३१ ॥ तपस्तप्त्वा ऋतुन्कृत्वा दत्वादानान्यनेकशः ॥ नवाञ्छंति यतोलोका

लिखा है कि साक्षान्नारायण ही जब पूजन करते हैं तब उनके अंशसे उत्पन्न कृष्णका शिवपूजन करना कौन आश्चर्य है ॥२९॥ वही शिव सबका ईश्वर और विष्णुका भी कारण है और सुषुप्तिका अधिपति है विष्णु भगवान्‌ने भी पूजन किया है ॥३०॥ विष्णुसे अधिक रुद्र हैं और ब्रह्मासे भी अधिक हैं अतएव कृष्णके शिव पूजन करनेमें कोई सन्देह नहीं है ॥३१॥ तप यज्ञ दान आदि शुभ कर्मोंको करके मनुष्य परमेश्वरसे यही प्रार्थना करता है कि गर्भवाससे छूट जाय ॥३२॥ सो विष्णु भगवान् यदि स्वाधीन है तो उनकी गर्भ-

गर्भवासं सुदुःसहम् ॥३२॥ स कथं भगवान्विष्णुः स्ववशश्चेज्जनार्दनः ॥ गर्भवास सरुचिर्भूयाद्भवेत्स्ववशतायदि ॥३३॥ पद्मपुराणे उत्तरभागे श्रीकृष्णम्प्रति मार्कण्डेय वाक्यम् ॥ त्वं विष्णुः कमलाकान्तः परमात्मा जगद्गुरुः ॥३४॥ तव पूज्यः कथंशम्भु रेतत्सर्वं वदस्व मे ॥३५॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ निर्लेपः सकलाध्यक्षो महापुरुष ईश्वरः ॥ तस्यचेच्छा भवत्पूर्वं जगत्स्थित्यन्त कारिणी ॥३६॥ वामाङ्गादभवन्तस्य सोऽहं विष्णुरिति स्मृतः ॥ जनयामासधातारं दक्षिणाङ्गात्सदाशिवः ॥ ३७ ॥ मध्यतोरुद्रमीशानं कालात्मा परमेश्वरः ॥

वासमें रुचि क्यों हुई ॥३३॥ वहाँ ही स्कन्द पहला अध्याय दूसरेमें लिखा है कि निर्गुण व्यापिका शिवके शक्तिसे सात्विकी राजसी तामसी महालक्ष्मी सरस्वती महाकाली उत्पन्न हुई । पद्मपुराण उत्तर भागमें श्रीकृष्णके प्रति मार्कण्डेय आदि ऋषियोंका प्रश्न है कि आप विष्णु कमलाकान्त परमात्मा जगत्का गुरु हैं फिर आप शिवका पूजन क्यों करते हैं ॥३४-३५॥ तब श्रीकृष्ण भगवान् बोले कि निर्लेप सबका अधिपति महापुरुष शिवकी इच्छा हुई कि जगतका सृष्टिपालन संहार हो ॥३६॥ ऐसा विचारकर वायें अंगसे विष्णुको उत्पन्न किये दहिनेसे ब्रह्माको ॥ और मध्यभागसे रुद्रको उत्पन्न कर तीनोंको आज्ञा

तपस्तपन्तु भोवत्सा अब्रवीदिति तान् शिवः ॥३८॥
सौर संहितायाम् ॥ त्रिमूर्तीनान्तु यः कर्ता निस्त्रैगुण्य
स्त्रिलोचनः ॥ नीलकण्ठो निराधारः शिवः सोम-
कलाधरः ॥३९॥ सौरोपपुराणे विष्णुम्प्रति लक्ष्मीवा-
क्यम् ॥ सर्वात्मा सर्ववित्कर्ता वक्ता धर्ता व्ययः
प्रभुः ॥ त्वं साक्षी सर्वलोकानां त्वत्तः परतरोस्तिकः
॥४०॥ श्री महाविष्णु रुवाच ॥ अस्तिसर्वं वरारोहे
मयितत्तथ्य मेवहि ॥ श्री महेश वराल्लब्धं मदीयं नहि
किंचन ॥ ४१ ॥ एकः सृजति भूतानि मत्समानि
कियन्त्यपि ॥ तत्त्वं वेद्म्यहं देवि मदीयाः केचनाः

दिये कि तप करो वही हम तीनों तप कर रहे हैं ॥३७॥३८॥ सौर संहितामें ब्रह्मा विष्णु महेशका कर्ता त्रिगुणरहित तीन लोचन नील-कण्ठ खण्ड चन्द्रमा ललाटमें धारण करनेवाला शिव है ॥३९॥ सौरोपपुराणमें विष्णुके प्रति लक्ष्मीका वचन है कि सबका आत्मा सब जाननेवाला कर्त्ताधर्त्तावक्ता अव्यय प्रभु और सबका साक्षी आप हैं फिर आपसे परे कौन है ॥४०॥ तब विष्णु भगवान् बोले कि हे लक्ष्मी ! तुमने जो कहा सो सब ठीक है परन्तु श्रीमहादेवके वरसे हमको मिला है हमारा शारीरिक गुण कुछ नहीं है ॥४१॥

परे ॥ ४२ ॥ स्त्रीघ्नो गोघ्नो नृपघ्नश्च तथा विश्वास-
घातकः ॥ कृतघ्नो नास्तिको लुब्धो कदाचिन्मुच्यते
जनः ॥ ४३ ॥ नतु श्रीरुद्र सामान्य दर्शी मुच्येत
बन्धनात् ॥ स्वामी मदीयः श्रीकण्ठ स्तस्यदासोस्मि
सर्व्वदा ॥४४॥ मात्स्ये हिमाचल नारद सम्बादे एक-
शत त्वारिंशतितमेध्याये ॥ शरण्यः शङ्करः शास्ता
शङ्करः परमेश्वरः ॥ ब्रह्मविष्ण्वीन्द्रमुनयो जन्ममृत्यु
जरार्दिताः ॥ तस्यैव परमेशस्य सर्वेक्रिडनकागिरेः
॥४५॥ आस्ते ब्रह्मा यदि च्छातः शम्भुतो भुवनप्रभुः॥

हमारे समान कितनोंको नित्य बनाते हैं इस भेदको मैं ही जानता हूँ
हमारा भक्त कोई-कोई जानते हैं ॥४२॥ स्त्री वध करनेवाला, गौ
मारनेवाला, राजाको मारनेवाला विश्वासघातक कृतघ्न नास्तिक और
लोभी प्रायश्चित्त करनेसे शुद्ध हो जाता है ॥४३॥ परन्तु शिवकी
बराबरीमें जो हमको मानते हैं वे कदापि शुद्ध नहीं होते क्योंकि
श्रीमहादेव हमारा स्वामी है मैं उनका दास हूँ ॥४४॥ मत्स्यपुराणमें
हिमाचलके प्रति नारद ऋषिका वचन है कि शरण देनेवाला शंकर
है जगतका शासनकर्ता परमेश्वर वही हैं ब्रह्मा विष्णु इन्द्र महर्षि
आदि जन्म मृत्यु जरासे पीड़ित होकर उन्हींकी क्रीड़ा है ॥४५॥
ब्रह्मा विष्णु आदि पद वही देते हैं सो गोसाँई तुलसीदासजीके

विष्णुर्युगे युगेयातो नानाजातिर्महातनुः ॥ ४६ ॥ कौर्म्मे उत्तरार्द्धे चतुर्थाध्याये ॥ रजोगुणमयं चान्य द्रूपन्तस्यैवधीमतः ॥ चतुर्मुखस्तु भगवान् जगत्सृष्टौ प्रवर्त्तते ॥ ४७ ॥ सत्वंगुणमुपाश्रित्य विष्णुर्विश्वेश्वरः स्वयम् ॥ सृष्टञ्चपाति सकलं विश्वात्मा सर्वतोमुखः ॥४८॥ तमोगुणं समाश्रित्य रुद्रः संहरते जगत् ॥ एकोपिसन्महादेव स्त्रिधासौसमवस्थितः ॥४९॥ तत्रैव दशमा ध्याये ॥ ब्रह्म विष्णु शिवब्रह्मन् सर्गस्थित्यन्त हेतवः ॥ विभज्यात्मानमेकोऽपि स्वेच्छया शङ्करस्थितः

विनयपत्रिकामें ब्रह्मा पार्वतीसे कहते हैं कि—जिनकी भाललिखी लिपि मेरी सुखकी नहीं निशानी, तिन्ह रंकनको नाक सवाँरत होय आयौं नकवानी। यह अधिकार सब पिए अवरहिं भीख भली मैं जानी॥ जिन्हके इच्छासे ब्रह्मा चउदह भुवनका सृष्टिकर्ता और विष्णु भगवान युग-युगमें अनेक योनिमें अवतार धारण करते हैं ॥४६॥ कूर्म्म पुराण उत्तरार्द्ध अध्याय चौथामें लिखा है शिवका रजोगुणमय रूप ब्रह्मा होकर सृष्टि करता है ॥४७॥ और वही शिव सतोगुण रूपमें विष्णु होकर सर्वात्मा सर्वतोमुखसे पालन करते हैं ॥४८॥ तमोगुणसे रुद्र होकर नाश करते हैं एक ही महादेव तीनो रूप धारण करते हैं ॥ ४९॥ वहाँ ही दशवाँ अध्यायमें लिखा है कि ब्रह्मा विष्णु रुद्र

॥५०॥ मात्स्ये षड्नवतितमेऽध्यायेऽपि ॥ श्री शङ्कर वाक्यम् ॥ कसादिदर्पमथनः केशवः क्लेशनाशनः ॥ त्वष्टाममाज्ञयातद्व ऋविष्यति निरागसम् ॥५१॥ पाद्मे प्युक्तम् ॥ एकएवशिवोज्यायान् द्विधाच बहुधाश्रुतः ॥ वेदेषुच पुराणेषु साङ्गोपाङ्गेषु गीयते ॥५२॥ स्कान्दे नन्दिनम्प्रति श्रीशिव वाक्यम् ॥ ब्रह्मत्वमथविष्णुत्वं रुद्रत्वमथवामृतः ॥ आदित्योभव रुद्रोवा ब्रूहिकिंकर वामिते ॥५३॥ तत्रैव सूत संहितायां महेन्द्रादि देवा-न्प्रति ब्रह्मणोक्तम् ॥ परमाद्वैतविज्ञानं विष्णोःसाक्षान्म

तीनरूप होकर शिव अपने इच्छासे स्वतन्त्र रहते हैं अर्थात् सब देव दानव मनुष्यादि उनके आधीन है वह स्वतन्त्र है किसीके आधीन नहीं है ॥५०॥ मत्स्यपुराण अध्याय छियानवेमें श्रीशङ्कर भगवानका वचन है। श्रीकृष्णके प्रति कि हे केशव! कंस आदि राक्षसोंको मारकर सबका क्लेशनाशक यज्ञकर्ता हमारे प्रसादसे होवोगे ॥५१॥ पद्मपुराणमें लिखा है कि वेद पुराण अङ्ग उपाङ्गोमें एक शिव ही अनेक रूपसे पूज्य माने गये हैं ॥५२॥ स्कन्दपुराणमें लिखा है कि एक समय नन्दीपर शिव प्रसन्न होय कहा कि हे नन्दीश्वर! ब्रह्मपद विष्णुपद आदित्यपद अमृतपद जो तुम कहो मैं तुमको दूँ ॥ ५३॥ वहाँ ही सूत संहितामें इन्द्रादि देवोंके प्रति ब्रह्माका वचन है

मापि च ॥ युष्माकमपि सर्वेषां प्रसादादेव शूलिनः ॥५४॥ दर्व्वीन्यायेन संसारा दुद्धरामि सुरर्षभाः ॥ न स्वातन्त्रेण हे देवाः साक्षाद्विष्णु स्तथैव च ॥५५॥ शिवरहस्ये सप्तमांशे ऋषिन्प्रति अत्रि वाक्यम् ॥ शङ्करस्य प्रसादेन ज्ञानम्भवति धीमताम् ॥ शङ्करस्य प्रसादेन मोक्षो भवति धीमताम् ॥५६॥ न शिवेन समोदेवः सत्यं सत्यं पुनःपुनः सत्यं सत्यं पुनः सत्यं उधृत्यकर मुच्यते ॥५७॥ ऐहिकामुष्मिकानर्थान् शङ्करोभक्तवत्सलः ॥ ददात्येव स्वभक्तेभ्यः स्वतन्त्रः सुरसत्तमः ॥५८॥ शिवान्यदेवा

कि परम अद्वैत विज्ञान विष्णुको हमको तुम सबोंको शिवहीके प्रसादसे उत्पन्न होता है ॥५४॥ हम लोग भी मनुष्योंको संसारसे उद्धार करते हैं परन्तु स्वतन्त्र नहीं है कलछुलके सदृश है अर्थात् जैसे पुरुष कलछुलसे परोसता है परन्तु कलछुल पुरुषके आधीन है स्वतन्त्र कुछ नहीं कर सकती है वैसे ही हम सबोंके द्वारा फलदाता वही है ॥५५॥ शिवरहस्य अंश सातमें ऋषियोंके प्रति अत्रि ऋषिका वचन है कि शंकरहीके प्रसादसे ज्ञान और मोक्ष प्राप्त होता है ॥५६॥ सत्य-सत्य बार-बार सत्य कहता हूँ कि शिवके समान दूसरा देव नहीं है सो सत्य-सत्य बाहू उठाकर कहता हूँ ॥५७॥ भक्तवत्सल शिव ऐहिक (इस लोकका धन पुत्रादि) पारलौकिक (स्वर्ग वैकुण्ठ

स्त्वत्यल्प मैहिका मर्थकामदा ॥ अति प्रीताः प्रयच्छन्ति स्व स्व शक्त्यानुरोधतः ॥ ५६ ॥ तेऽपि देवाः प्रयच्छन्ति प्रसादाच्छंकरान्मुने ॥ देवता सार्वभौमस्तु शङ्करः सर्वकामदः ॥ धर्मार्थकाममोक्षाणां दाता साम्ब शिवः स्वयम् ॥ ६० ॥ आदित्योपपुराणे ॥ क्रमेण लभ्यतेऽन्येषां मुक्तिराराधनाद् द्विजाः ॥ आराधनान्महेशस्य तस्मिजन्मनि मुच्यते ॥ ६१ ॥ कौर्म्मे पूर्वार्द्धे एकोनत्रिंशेध्याये ॥ ब्रह्माकृतयुगे देव स्त्रेतायां भगवान् रविः ॥ द्वापरेदैवतं विष्णुः कलौदेवो महेश्वरः ॥६२॥ ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च सर्वएवकलिष्वपि ॥ पूज्यते भगवान्

कैलाश आदि) फल स्वतन्त्र होकर भक्तोंको देते हैं ॥५८॥ और देवता प्रसन्न होकर अपने-अपने शक्तिके मोताबिक एहलोकका फल देते हैं ॥५६॥ सो भी शिवहीके प्रसादसे देते हैं धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, दाता सार्वभौम देवता (सब कामना पूरण करनेवाला) स्वतन्त्र शिव ही है ॥६०॥ आदित्योपपुराणमें लिखा है और देवताओंके आराधनसे कई जन्मके बाद मुक्ति होती है शिवके आराधनसे मनुष्य इसी जन्मसे मुक्त हो जाता है ॥६१॥ कूर्म्मपुराण पूर्वार्द्ध उनतीसवाँ अध्यायमें लिखा है कि सतयुगका देवता ब्रह्मा त्रेतामें सूर्य द्वापरमें विष्णु कलिमें रुद्र, ब्रह्मा विष्णु रुद्र कलिमें पूजे

रुद्र श्चतुर्युगपिनाकधृक् ॥६३॥ लैङ्गे चत्वारिंशतितमे ध्यायेप्युक्तम् ॥ कलौदेवो महादेवः शङ्करो नीललोहितः ॥ प्रकाशते प्रतिष्ठार्थं धर्मस्य विकृता कृतिः ॥६४॥ येतम्विप्रा निषेवन्ते येन केनापि शङ्करम् ॥ कलिदोषान्विनिर्जित्य स जाति परमं पदम् ॥६५॥ उशनसोप पुराणे प्रथमाध्याये ब्रह्माणम्प्रति अष्टाशीति सहस्र ऋषि वाक्यम् ॥ नयत्र कलिवाधास्यात्सत्व वृद्धिश्च जायते ॥ हरौ भक्तिदृढायत्र तत्स्थानं दर्शयाधुना ॥६६॥ पराशरोपपुराणे द्वितीयाध्याये ॥ सर्वकारण

जाते हैं और शिव चारों युगोंमें पूजनीय है ॥६२-६३॥ लिङ्गपुराणके चालिसवें अध्यामें लिखा है कि धर्मके प्रतिष्ठाके हेतु और कलिका घोर पाप हरनेके हेतु महादेव शंकर नीललोहित प्रकाशमान है ॥६४॥ जो पुरुष किसी तरहसे उनका सेवन करते हैं वे कलि दोषको जीतकर परमपदको प्राप्त होते हैं ॥६५॥ उसनश उपपुराणके पहला अध्यायमें ब्रह्माके प्रति अट्ठासी हज़ार ऋषियोंका वचन है कि जहाँ कलिका बाधा न हो सतोगुणकी वृद्धि हो और महादेवमें दृढ़ भक्ति हो वह स्थान हम सबोंको आप बताइए क्योंकि कलि घोर पापी आया ॥६६॥ पराशर उपपुराणके दूसरे अध्यायमें लिखा है कि सबका कारण ईशान अम्बाके साथ सत्य ज्ञान अनन्त लक्षणसे युक्त

मीशानः साम्बः सत्यादि लक्षणः ॥ न विष्णुः न विरंचिश्च न रुद्रो नापरः पुमान् ॥ ६७ ॥ सएवसर्ववेदान्ते सादरं प्रतिपाद्यते ॥ वेदानुसारै स्मृतिभिः पुराणैर्भारतादिभिः ॥६८॥ स्मृतयश्च पुराणानि भारतादीनिसत्तम ॥ शिवमेव सदासाम्वं हृदिकृत्वा ब्रुवन्तिहि ॥६९॥ शिवदृष्टिस्तु कर्तव्या सर्वत्र सर्वजन्तुभिः ॥ राजदृष्टि र्यथामात्ये क्रियते सर्वजन्तुभिः ॥७०॥ राजाधिराजः सर्वेषां त्र्यम्बक स्त्रिपुरान्तकः ॥ तस्यैवानुचराः सर्वे ब्रह्मविष्णु सुरादयः ॥७१॥ मुक्तिहेतु परिज्ञानंतत्प्रसादेन केवलम् ॥

शिव है ब्रह्मा विष्णु रुद्र अथवा और कोई उनके बराबर नहीं हो सकता ॥६७॥ वही शिव वेद-वेदान्त और वेदानुसार स्मृतिपुराण भारत आदिसे कहे जाते हैं ॥६८॥ स्मृतिपुराण भारत आदि अन्य देवका माहात्म्य कहते समय शाम्ब शिवको हृदयमें रखते हैं ॥६९॥ देवासुर मनुष्य सब शिवरूप है ऐसी दृष्टि करना परन्तु शिव और देवोंके रूप हैं ऐसा दृष्टि नहीं करना क्योंकि दीवानको राजा कह सकते हैं परन्तु राजाको दीवान नहीं कह सकते ॥७०॥ राजाधिराज महादेव त्रिपुरान्तक हैं उनका सेवक ब्रह्मा विष्णु आदि देव हैं ॥ ७१॥ ज्ञान मुक्ति उत्पन्न होनेका कारण शिव ही हैं विष्णु ब्रह्मा

नैवविष्णवादिदेवाना म्प्रसादेन न संशयः ॥७२॥ विहाय सामत्र मीशानं यजतेदेवतान्तरम् ॥ तेमहाघोर संसारे पतन्ति परिमोहिताः ॥७३॥ सर्वमन्यत्परित्यज्य शिवएवशिवङ्करः ॥ ध्येयइत्याह परमा श्रुतिराथर्वणा खलु ॥७४॥ कौर्म्मे पूर्वार्द्धे प्रथमाध्याये ॥ वर्णाश्रमाचारवतां पुसांदेवो महेश्वरः ॥ ज्ञानेन भक्तियोगेन पूजनीयो नचान्यथा ॥७५॥ नन्दीश्वरोपंपुराणे ॥ अन्तसत्वमयः शम्भुः कर्पूराभस्तुरीयकः ॥ दृष्ट्यासंहारकत्वेन भ्रान्त्या वल्गन्तितामसः ॥७६॥ परमाज्ञानिनो मूढ़ा वदन्तितामसं

आदि देवोंके प्रसन्न होनेसे नहीं होती ॥७२॥ शिवको छोड़ जो अन्य देवोंका भजन करते हैं वे मोहित होकर घोर संसारसागरमें पड़ते हैं ॥७३॥ सबको छोड़ एक शिव ही उपासना करने योग्य है ऐसा अथर्व वेदकी श्रुति कहती है ॥७४॥ कूर्म्मपुराण पूर्वार्द्ध अध्याय पहिलामें लिखा है कि वर्णाश्रमके आचार करनेवाले मनुष्योंको भक्तियोग और ज्ञानयोगसे शिव ही पूजनीय है ॥७५॥ नन्दीश्वर उपपुराणमें लिखा है कि शिव भीतरसे सतोगुण है क्योंकि कपूरके समान श्वेतवर्ण और तूरीयके देवता है संहार करनेके हेतु शिव रुद्रका भेद न जानकर भ्रमसे अज्ञानी पुरुष उनको तामस कहते हैं ॥ ७६॥ परम अज्ञानी मूढ़ शिवको तामस कहते हैं निद्रा आलस्यके

शिवम् ॥ निद्रालस्यवशित्वाच्च कृष्णत्वात्तामसोहरिः ॥७७॥ स्कान्दे ब्रह्मखण्डे ॥ विरक्ताः कामभोगेभ्यो येप्रकुर्वंत्यहैतुकिम् ॥ भक्तिम्परांशिवेधीरा स्तेषांमुक्तिर्न-संशयः ॥७८॥ विषयानभिसन्धाय येकुर्वन्तिशिवेर-तिम् ॥ विषयैर्नाभिभूयन्ते भुञ्जन्ते तत्फलान्यपि ॥ ॥७९॥ ऐहिकामुष्मिकं भुक्त्वा चान्तेशिवमयम्भवेत् ॥ नपुनर्जायतेलोके मातुर्गर्भेकदाचन ॥८०॥ एतादृशं महादेवं त्यक्त्वायेऽन्यमुपाशते ॥ सदुर्भग इतिज्ञेयः सत्यं सत्यं मयोच्यते ॥८१॥ सौरोपपुराणे चत्वारिं-

वशी होनेसे और कृष्णवर्ण होनेसे विष्णु तामस है ॥७७॥ स्कन्द-पुराण ब्रह्मखण्ड उत्तरभागमें लिखा है कि संसारी कामना भोगसे रहित होकर जो शिवकी भक्ति करते हैं सो परम उत्तम मुक्तिको प्राप्त करते हैं ॥७८॥ धनपुत्र स्वर्गादि विषयकी इच्छासे जो भक्ति करते हैं सो विषयोंमें बद्ध न होकर विषयोंका फल भोगते हैं ॥७९॥ इस लोकका सुख और परलोकका स्वर्गादि सुख भोगकर अन्तमें शिवरूप हो जाते हैं ॥८०॥ पुनः माताके गर्भमें नहीं आते आवा-गमनसे रहित मुक्तिको देनेवाले शिवको छोड़ जो अन्य देवोंकी उपासना करते हैं वे दुर्भागी हैं मैं सत्य-सत्य कहता हूँ ॥८१॥ सौर उपपुराणके चालीसवें अध्यायमें लिखा है कि चौदहों विद्या और

शतितमेऽध्याये ॥ चतुर्दशसुविद्यासु गीयते चन्द्र-
शेखरः ॥ वेदान्तायच्च गायन्ति मुनयः संशितव्रताः
॥८२॥ तेनतुल्योदाविष्णु ब्रह्मावा यदिगद्यते ॥ षष्टि-
वर्षसहस्राणि विष्ठायां जायतेकृमिः ॥८३॥ पद्मपुराणे
शिवगीताया मप्युक्तम् ॥ वन्येषुयादृशीप्रीति र्वर्तते
परमेशितुः ॥ उत्तमेष्वपिनास्त्येव तादृशी ग्रामजेष्वपि
॥८४॥ तन्त्यक्त्वा तादृशंदेवं यःशेवेतान्यदेवताम ॥
सहिभागीरथीन्त्यक्त्वा कांक्षते मृगतृष्णिकाम ॥८५॥
पाराशरोपपुराणे पञ्चमाध्याये प्युक्तम् ॥ विप्रःसमस्त-
मर्त्यानां देवताहिनसंशयः ॥ विप्रादपिच भूदेवाद्वरिष्ठा
देवताःस्मृताः ॥८६॥ आधिक्यं सर्वदेवेभ्यो मनुते शङ्कर-

वेदान्त तथा बड़े-बड़े तप करनेवाले मुनि सब जिन्हका गान करते हैं ऐसे शिवके बराबरमें विष्णु ब्रह्मा आदि देवोंको माननेवाले पुरुष साठ हजार वर्ष मलके क्रिमि होते हैं ॥८२॥८३॥ पद्मपुराणमें शिवगीतामें लिखा है कि वनके उत्पन्न वस्तुओंमें शिवकी प्रीति विशेष होती है ग्रामके उत्पन्न वस्तुओंमें विशेष प्रीति नहीं होती ऐसे सलिल देवको छोड़कर जो अन्य देवका उपासन करते हैं वे गंगाके तीरमें मृगजलके पीछे दौड़ते हैं ॥८४॥८५॥ पराशर उपपुराणके

स्यय: ॥ संसारसागरंतीर्त्वा मुक्तिपारंसगच्छति ॥८७॥ अधिक्यंसर्वमानानां यथावेदस्यविद्यते ॥ तथारुद्रस्य देवाना माधिक्यं विद्यतेऽनघ ॥८८॥ सर्वेषामपि-देवानां वरिष्ठ: परमेश्वर: ॥ वरिष्ठयोर्हि सम्बन्धो युज्य-तेतु परस्परम् ॥ अतोविप्रस्य सम्बन्ध: शिवेनैवहि युज्यते ॥८९॥ शिवरहस्ये तृतीयांसेऽपि ॥ ब्राह्मणाना-मधिपति: शिवएवसनातन: ॥ क्षत्रियाणांहरि: प्रोक्त-स्सोपिशङ्करकिंकर: ॥९०॥ पाराशरोपपुराणे पञ्चमा-ध्याये ॥ सङ्करा:सर्वदेवाश्च बृषलस्तु पुरन्दर: ॥ पिता-

पाँचवाँ अध्यायमें लिखा है सब मनुष्योंका देवता ब्राह्मण है और भूदेव (ब्राह्मण) से श्रेष्ठ देवता है ॥८६॥८७॥ सब देवोंमें शिव श्रेष्ठ हैं ऐसा जो मानते हैं वे संसाररूपी सागरसे पार होकर मुक्ति पाते हैं ॥८८॥ सब प्रमाणोंमें जैसे वेदका प्रमाण श्रेष्ठ है वैसे ही सब देवोंमें श्रेष्ठ रुद्र हैं ॥ सब देवोंमें श्रेष्ठ शिव और मनुष्योंमें श्रेष्ठ ब्राह्मण, बड़ेको बड़े ही के पास जाना चाहिए अत: ब्राह्मणको विशेषत: शिवका उपासना करना ॥ ८९ ॥ शिवरहस्यके तृतीय अंशमें लिखा है ब्राह्मणका अधिपति शिव हैं क्षत्रियोंका विष्णु हैं सो विष्णु भी शिवके किंकर हैं ॥ ९० ॥ पराशर उपपुराणके पाँचवें अध्यायमें लिखा है सब देव शंकर हैं इन्द्र शूद्र हैं ब्रह्मा वैश्य हैं

महस्तु वैश्यश्च क्षत्रियः परमोहरिः ॥६१॥ ब्राह्मणोभग-वान्रुद्रः सर्वेषामुत्तमोत्तमः ॥ ब्रह्मभूतस्य ब्राह्मण्यं रुद्र-स्य नैवहेतुजम् ॥ ब्राह्मणोवै सदालोके ब्राह्मणन्तुपधा-वति ॥६२॥ वातुलतन्त्रे ॥ रुद्रएवसदासाक्षाद् ब्राह्मणो-ब्रह्मभावतः ॥ प्रजानाम्पालकोराजा विष्णुः सर्वस्य-पालकः ॥६३॥ एतदुक्तं महाभारतेऽपि ॥ शिवोदेवो द्विजोब्रह्मा क्षत्रियस्तु हरिःस्मृतः॥ इन्द्रोवैश्य स्तथैवान्येय क्षाद्याः शूद्र जातयः ॥६४॥ पराशरोपपुराणे सप्तमा-ध्यायेऽपि इन्द्रस्यैव प्रसादेन वृषलो जायते भुवि ॥ विरिंचिनः प्रसादेन कुलेवैश्यस्य जायते ॥६५॥

विष्णु क्षत्रिय हैं ॥६१॥ भगवान रुद्र ब्राह्मण हैं और सब देवोंमें उत्तमसे भी उत्तम हैं रुद्रमें ब्राह्मणत्त्व ब्राह्मरूप होनेसे है न कि ब्राह्मण कुलमें पैदा होनेसे अतएव ब्राह्मणको ब्राह्मण ही के पास जाना उचित है ॥६२॥ वातुलतन्त्रमें लिखा है कि ब्रह्मरूप होनेके कारण रुद्र ब्राह्मण हैं प्रजाओंके पालन करनेके हेतु विष्णु क्षत्री हैं ॥६३॥ महाभारतमें भी लिखा है कि शिव देव हैं ब्रह्मा द्विज हैं विष्णु क्षत्री हैं इन्द्र वैश्य हैं यक्ष यम शूद्र हैं ॥६४॥ पराशर उपपुराण अध्याय सातमें लिखा है कि इन्द्रके प्रसादसे शूद्र कुलमें जन्म होता है ब्रह्माके प्रसादसे वैश्य कुलमें विष्णुके प्रसादसे क्षत्री कुलमें और

विष्णोश्चैव प्रसादेन कुलेराज्ञां विजायते ॥ महादेव प्रसादेन ब्राह्मणो जायते भुवि ॥९६॥ रक्षकश्च भवेद्राजा महादेव प्रसादतः ॥ वाणिज्यकृषिको वैश्यो भवेद्रुद्र प्रसादतः ॥९७॥ शूद्रश्शूश्रुषुरेवस्या त्प्रसादेन द्विजन्मनाम् ॥ प्रसादेनैव रुद्रस्य ब्राह्मणो ब्राह्मणो भवेत् ॥ ९८ ॥ महादेवस्य तुल्यन्तु विद्यते यदि दैवतम ॥ ब्राह्मणस्यापि तुल्यस्तु विद्यते नहि संशयः ॥ ९९ ॥ पुनस्तत्रैव ॥ पत्र पुष्पादिभिर्नित्यं भक्त्या वेदोक्तवर्त्मना ॥ लिंगे दिने दिने देवम्पूजयेच्छिव

महादेवके प्रसादसे ब्राह्मण कुलमें जन्म होता है ॥९५॥९६॥ राजा रक्षक होता है महादेव ही के प्रसादसे वाणिज्य कृषी आदि कर्म वैश्यका रुद्र ही के प्रसादसे है ॥ ९७ ॥ और शूद्रका सेवा आदि धर्म उन्हींके प्रसादसे है रुद्र ही के प्रसादसे ब्राह्मणमें ब्राह्मणत्व होता है ॥ ९८ ॥ महादेवके बराबर यदि कोई देवता होय तो ब्राह्मणके बराबर मनुष्य हो सकता है ॥९९॥ पुनः वहाँ ही पाँचवें अध्यायमें लिखा है पत्र पुष्प फल जल आदि सामग्रियोंसे नित्य शिवलिंगका पूजन करना बाद ब्रह्मा विष्णु आदि देवोंका पूजन करना स्वतन्त्र और देवपूज्य नहीं है ॥२००॥ पुनः वहाँ ही अध्याय छः में लिखा है कि जाति आश्रमके

सञ्ज्ञकम् ॥२००॥ तच्छेषत्वेच विष्णुञ्च ब्रह्माणं देवता-न्तरम् ॥ अर्चयेद्भुक्ति मुक्त्यर्थं नस्वतंन्त्र तया द्विजाः ॥१॥ पुनस्तत्रैव षष्ठाध्याये ॥ जन्मना लब्ध जातीना माश्रमाणान्तथैव च ॥ प्राधान्येन महादेवः पूज्यो नान्योऽस्ति सिद्धये ॥२॥ तत्प्राप्त्यर्थं महा-विष्णु स्सर्वैः पूज्योस्ति सिद्धये ॥ पितामहोपि सर्वात्मा तदर्थं पूज्यएवहि ॥३॥ ब्रह्मपुराणे ॥ न शमो न पर-स्तस्मा न्महादेवेति कीर्तनात् ॥ उपेयुर्दानवादेवा पिशा चावयमीरिणः ॥४॥ शिवरहस्ये सप्तमाशे दशमाध्याये॥ शिवमुत्सृज्य योन्यस्मिन्पूजनञ्च करिष्यति ॥ सा पूजा

भीतर रहकर प्रधान मानकर महादेव ही पूज्य हैं ॥१॥ शिव ही के प्राप्ति हेतु ब्रह्मा विष्णु भी पूज्य हैं ॥२॥ ब्रह्मपुराणमें लिखा है कि महादेव नाम ही से उनके सामान और उनसे बड़ा कोई नहीं है उनका पिशाच सहकारी हैं अतएव देवता राक्षस दोनों हमपिशाच हैं, हमपिशाच हैं ऐसा कहकर उनके शरणमें आते हैं। पिशाच शब्दका अर्थ पिशित जो (मांस) उसको आचमन (भक्षण) जो करे सो पिशाच है तो यज्ञ मांस देवता और साधारण मांस राक्षस ग्रहण करते हैं अतएव दोनों पिशाच हैं ॥३॥४॥ शिवरहस्य अंश सात अध्याय दशमें लिखा है कि शिवको छोड़कर जो अन्य देवका पूजन करते हैं

तत्कृतान्यत्र भस्मसाद्भवति ध्रुवम् ॥ ५ ॥ प्रज्वलद्वह्नि मुत्सृज्य यथान्यत्रहुतं हविः ॥ वृथा भवति सा पूजा तदन्यत्र कृताकृता ॥ ६ ॥ वर्णाश्रम धर्मनिर्णये ॥ न स्वतोवै हरिः पूज्यो न ब्रह्मा न पुरन्दरः ॥ शिवेन-सहितास्सर्वे पूज्यादेवा न संशयः ॥७॥ वीरतन्त्रे ब्राह्मणस्य शिवोदेवः क्षत्रियस्य जनार्दनः ॥ वैश्यस्य-भास्करोदेवः शूद्राणां सर्वदेवताः ॥८॥ ब्रह्मगीतायाम् ॥ अविशेषेण सर्वन्तु यः पश्यति महेश्वरम् स एव साक्षा-द्विज्ञानी स शिवः सतुदुर्लभः ॥९॥ पाराशरोपपुराणे द्वि-तीयाध्याये प्युक्तम् ॥ सर्वस्मादधिकत्वंये नवदन्ति पिना-

उनका पूजाका फल भस्म हो जाता है ॥५॥ जैसे बरती हुई अग्निको छोड़कर राखमें हवन करना वैसे ही शिवको छोड़कर अनन्य देवोंका पूजन है ॥६॥ वर्णाश्रमधर्म निर्णयमें लिखा गया है कि ब्रह्मा विष्णु इन्द्र आदि देवता स्वतन्त्र नहीं पूजनीय हैं शिवके साथ सब पूज्य हैं ॥७॥ वीरतन्त्रमें लिखा है कि ब्राह्मणका देवता शिव हैं क्षत्रीका विष्णु वैश्यका सूर्य और शूद्रोंको सब देवोंका उपासना करना चाहिए ॥८॥ ब्रह्मगीतामें लिखा है कि सब देवोंसे श्रेष्ठ जो शिवको देखते हैं वे ही ज्ञानी और शिवरूप हैं ॥९॥ पराशर उपपुराणके दूसरे अध्यायमें लिखा है कि सब देवोंसे अधिक जो शिवको नहीं मानते

किनम् ॥ सममन्यैर्वदन्त्येन न्तेमहापातकैर्युताः ॥१०॥ महादेवाधिकं विष्णुं मनुतेयश्च मानवः तस्यवंशस्य साङ्कर्यं मनुमेया विपश्चिताः ॥११॥ तत्रैव एकादशाध्याये ऽपि ॥ महादेवसमं विष्णुं ब्रह्मणं देवतान्तरम् ॥ मन्यन्ते विप्रमोहेन मनुष्याः पापकर्मिणः ॥१२॥ शिवरहस्ये श्रीशङ्कर वचनम् ॥ ममलिङ्गंनयेदेवि समं विष्णवादि पूजनम् ॥ ये कुर्वन्ति महापापा स्तेषां दुःखमनर्गलम् ॥१३॥ शिवलिङ्गार्चनं साम्या द्विष्णुरूपादि पूजनम् ॥ मद्रोहएव परमः सुघोर नरकावहः ॥१४॥ ब्रह्मविष्णवादि साम्येन मयिधीर्नरकावहा ॥

हैं और बराबर कहते हैं वे महापापी हैं ॥१०॥ श्रीमहादेवसे अधिक जो विष्णुको मानते हैं उनके वंशमें वर्णसङ्कर दोष बुद्धिमान सब जानें ॥११॥ पुनः वहाँ ही ग्यारहवें अध्यायमें लिखा है कि महादेवके समान विष्णु ब्रह्मा आदि देवोंको मोहवश पापी मनुष्य मानेंगे ॥१२॥ शिवरहस्यके सातवें अंशमें श्रीशङ्कर भगवानका भगवतीके प्रति वचन है कि हमारे लिङ्गको विष्णु आदि देवोंके समान मानकर जो पूजते हैं उनको घोर नरक मिलता है और हमारा द्रोही है ॥१३॥१४॥ वहां ही गणोंके प्रति शिवका वचन है कि ब्रह्मा विष्णु आदि देवताओंको हमारे समान मानना ही नरकका रास्ता है एक पीठपर ब्रह्मा विष्णु

एकपीठेच मल्लिङ्ग मन्यदेवादि पूजनम् ॥१५॥ ब्रह्म विष्णु सुराणाञ्च समं मद्दर्शन न्तथा ॥ मन्नाम मन्य-नाम्नैव समंपश्यन्ति ये नराः ॥ ममाप्रीतिकरम्पाप कारणन्तद्द्गणोत्तमाः ॥१६॥ तत्रैव त्रयोदशा ध्याये ॥ विष्ण्वादि देवतासाम्यं योवदेदीश्वरे शिवे ॥ सदुर्भगः शिवद्वेष्टाद्वेषस्तत्साम्यधिश्शिवे ॥१७॥ रुद्रः विश्वाधिकः श्रेष्ठो देवोत्तम इतिश्रुतिः ॥ अतोविश्वाधिको रुद्रः कथं विष्णुसमोभवेत् ॥१८॥ महेश्वरातिरिक्तंयो भ्रमेणा-प्युपधावति ॥ सचाण्डाल इतिज्ञेयः सत्यं सत्यं न संशयः ॥१९॥ यस्याः पुत्रो महादेवं दूषयिष्यति

आदि देवोंको हमारे सदृश मानकर जो पूजते हैं तथा हमारे नामको अन्य देवताओंके नामके बराबर मानते हैं वे हमारे अप्रिय हैं और पापके कारण हैं ॥१५॥ ॥१६॥ वहाँ ही तेरहवें अध्यायमें ऋषियोंके प्रति व्यासका वचन है कि विष्णु आदि देवोंको जो ईश्वर शिवके बराबर मानते हैं वे दुर्भागी शिव द्वेषी हैं शिवको और देवताओंके सदृश मानना ही शिव द्वेष है ॥१७॥ रुद्र विश्वसे अधिक देवोत्तम हैं ऐसा श्रुति कहती है सो विष्णुके बराबर कैसे हो सकते हैं ॥१८॥ शिवको छोड़कर भ्रममें पड़कर जो इधर-उधर दौड़ते हैं वे चाण्डाल हैं सत्य सत्य मैं कहता हूँ ॥१९॥ जिस स्त्रीका पुत्र महादेवकी

दुर्भगः ॥ दुर्भगा तस्य जननी जन्मतस्य वृथा ध्रुवम् ॥२०॥ ब्रह्महत्यार्जितम्पापं कदाचिन्नाश मेष्यति ॥ शिवनिन्दार्जितं पापं न नश्यत्येव सर्वथा ॥२१॥ शिव-निन्दक जिह्वाग्रं यम स्तप्तास्त्रधारया ॥ सदादहति तीव्रेणक्षुधितः क्रोधसंयुतः ॥२२॥ अशिवाराधनोद्युक्ता शिवार्चन पराङ्मुखाः ॥ अशिवम्प्राप्नुवन्त्येव कुम्भी-पाकादि लक्षणम् ॥२३॥ ये मायातीत मद्वैतं शिवमेव भजन्तिये ॥ कदापि जननीगर्भे नविशन्त्येव सर्वथा ॥२४॥ तथा कौर्म्मे त्रिंशत्यध्याये ॥ यथारुद्रनमस्कारः सर्वकाम फलोध्रुवः ॥ अन्यदेव नमस्कारा न्नतत्फल

निन्दा करता है उसका जगतमें जन्म वृथा है और उसकी माता दुर्भगा है ॥२०॥ ब्रह्महत्या ऐसा घोर पाप यत्न करनेसे नष्ट हो जाता है परन्तु शिवनिन्दा रूप पाप कदापि नष्ट नहीं होता ॥२१॥ शिव निन्दककी जिह्वाको यम अग्नितप्त हथियारोंसे क्रोधयुत हो काट लेते हैं ॥२२॥ शिवके आराधनसे विमुख होय अशिव (अन्यदेव) के पूजनमें तत्पर पुरुषोंको अशिव (अमङ्गल) रूप कुम्भीपाक आदि नरक प्राप्त होता है ॥२३॥ जो मायासे अतीत शिवको भजन करते हैं वे कदापि माताके गर्भमें नहीं आते ॥२४॥ कूर्म्मपुराणके तीसवें अध्यायमें लिखा है कि रुद्रका नमस्कार जैसा फल देनेवाला है

मवाप्नुयात् ॥२५॥ काशीखण्डे नवमाध्याये ॥ अर्थ-हीना यथावाणी धर्महीना यथातनुः ॥ पतिहीना यथानारी शिवहीना तथाक्रिया ॥२६॥ दर्भहीना यथासन्ध्या तिलहीनञ्च तर्पणम् ॥ हविर्हीनो यथा-होमः शिवहीना तथाक्रिया ॥ २७ ॥ तत्रैव ॥ चरितानि विचित्राणि गुह्यानि निगमानि च ॥ ब्रह्मादिनाञ्च सर्वेषां दुर्विज्ञेयोसिशङ्कर ॥२८॥ आदि-त्योप पुराणे ॥ न माम्यहं देववरम्पुराण मुपेन्द्र वन्द्ये-न्द्र सुरादिजुष्टम् ॥ शशाङ्क सूर्याग्नि मयं त्रिलोचनं ध्यानाभिगम्यं जगतः प्रकाशम् ॥२९॥ गरुड़पुराणे

अन्य देवका नमस्कार वैसा फल नहीं देता ॥२५॥ काशीखण्डके नौवें अध्यायमें लिखा है कि अर्थहीन जैसी वाणी धर्महीन जैसा शरीर और पतिहीन जैसी स्त्री शिवहीन वैसे ही क्रिया जानना ॥२६॥ कुशहीन सन्ध्या तिलहीन तर्पण हविष्यहीन होम जैसा है वैसा ही शिवहीन कर्म है ॥२७॥ पुनः वहां ही लिखा है कि हे शिव ! आपके गुह्यभेदका विचित्र चरित्र ब्रह्मा, विष्णु आदि देव भी नहीं जानते ॥२८॥ आदित्य उपपुराणमें लिखा है कि देवताओंका देवता पुराण इन्द्रादि देवताओंसे युक्त सूर्य चन्द्र अग्नि नेत्र जगतका प्रकाश रूप शिवको मैं नमस्कार करता हूँ ॥२९॥ गरुड़पुराणके

प्रेतकल्पे गरुड़म्प्रति श्रीकृष्ण वाक्यम् ॥ वेदस्मृति पुराणज्ञः परमार्थं नवेत्तियः ॥ विडम्बकस्य तस्यैव तत्सर्वं काकभाषितम् ॥३०॥ अन्यथा परमन्तत्वं जनाः क्लिश्यन्ति चान्यथा ॥ अन्यथा शास्त्रसद्भावो व्याख्यां कुर्वन्ति चान्यथा ॥३१॥ पठन्तिवेदशास्त्राणि बोधयन्ति परस्परम् ॥ न जानन्तिपरन्तत्वं दर्वीपाकरसंयथा ॥३२॥ दिव्यवर्ष सहस्रायुः शास्त्रान्तं नैवगच्छति ॥ तस्मात्सारं विजानीया त्क्षीरंहंस इवाम्भसि ॥३३॥ अद्वैतंहि शिवः प्रोक्तः क्रियायास विवर्जितः ॥

प्रेतकल्पमें गरुड़के प्रति श्रीकृष्णका वचन है कि—जो वेदस्मृति पुराणको पढ़ता है परन्तु उसके परम अर्थको नहीं जानता है ऐसे पाखण्डीका कहा हुआ काकके बोलनेके सदृश है ॥३०॥ परम तत्त्व कुछ दूसरे ही तरफ है अज्ञानी मनुष्योंका कोशिश दूसरी ही तरफ है शास्त्रका सद्भाव दूसरा है व्याख्या अपने मनका दूसरा ही करते हैं ॥३१॥ वेदशास्त्र पढ़ते और पढ़ाते हैं परन्तु परम तत्वको नहीं जानते जैसे कलछी सब पाकको करती है रसको नहीं जानती ॥३२॥ देवताओंके वर्षसे हज़ार वर्षकी आयु हो तो भी शास्त्रका अन्त नहीं हो सकता अतः हंसके समान सार वस्तुको जानना चाहिये ॥३३॥ अद्वैत जो शिव क्रिया कलापसे वर्जित गुरुके उपदेशसे प्राप्त होते हैं

गुरुवक्त्रेण लभ्येत नाधीतागम कोटिभिः ॥३४॥
सत्सङ्गश्च विवेकश्च निर्मलं नयनद्वयम् ॥ यस्यनास्ति
नरःसोन्धः कथंनस्या दमार्गगः ॥३५॥ एकभक्तोपवा-
साद्यै र्नियमैःकायशोषणैः ॥ मूढ़ाः परोक्ष मिच्छन्ति
ममामाया विमोहिताः ॥३६॥ देह ताडनमात्रेण कामुक्ति
रविवेकिनाम् ॥ वल्मीकताडनादेव मृतः कुत्रमहोरगः
॥३७॥ जटाभारा जिनैर्युक्ता दाम्भिका वेषधारिणः ॥
भ्रमन्ति ज्ञानिवल्लोके भ्रामयन्ति जनानपि ॥३८॥ गृहा-
रण्यसमालोके गतव्रीडा दिगम्बराः ॥ चरन्तिगर्दभा-
द्याश्च विरक्तास्ते भवन्तिकिम् ॥३९॥ मृद्भस्मोद्धूल-

करोड़ों वेद विद्याके पढ़नेसे नहीं मिलते ॥३४॥ सत्संग और विवेक
(विचार) मनुष्योंका दो शुद्ध नेत्र है दोनोंसे हीन अन्धा है तो वह
क्यों नहीं कुमार्गमें जायगा ? ॥३५॥ एक भुक्त उपवास आदि ब्रतोंसे
शरीरको दुःख देकर बहुतसे मूढ़ मनुष्य हमारे मायासे मोहित कुमार्गमें
होकर हमको प्रत्यक्ष करना चाहते हैं ॥३६॥ परन्तु विवेकरहित
पुरुषोंको देहके दुःख देनेसे मुक्ति नहीं मिलती वल्मीक (दियकाड)
के पीटनेसे साँप नहीं मरता ॥३७॥ जटा भार और मृगछालाको लिये
दम्भसे भरे ज्ञानीके सदृश पाखण्डी लोकमें बहुत घूमते हैं और
लोगोंको भ्रममें डालते हैं ॥३८॥ लज्जासे हीन शीत उष्णको सहन

नादेव यदिमुक्तिर्भवत्यथ ॥ मृद्भस्मवासी श्वानित्यं स किं मुक्तोभविष्यति ॥४०॥ तत्रैव षोड़शाध्यायेऽपि ॥ गरुड़ उवाच॥ नानाविधशरीरस्था अनन्ता जीवराशयः॥ केनोपायेन मोक्षेश मुच्यते वदमे प्रभो ॥४१॥ श्रीभगवान उवाच ॥ शृणुताक्ष्यं प्रवक्ष्यामि यन्मांत्वं परिपृच्छसि ॥ अस्तिदेवः परब्रह्मः स्वरूपीनिष्कलः शिवः ॥४२॥ सर्वज्ञः सर्वकर्ताच सर्वेशो निष्कलोद्वयः ॥ निर्गुण स्सच्चिदानन्द स्तदंशा जीव सञ्ज्ञकाः ॥

करनेवाला गदहा क्या त्यागी कहा जायगा ? कदापि नहीं ॥३९॥ माटी राख लपेटनेसे यदि मुक्ति हो तो कुत्ता तो सदा मिट्टी राख ही में रहता है तो क्या वह मुक्त हो जायगा ? कदापि नहीं ॥४०॥ पुनः वहाँ ही अध्याय १६ में लिखा है कि गरुड़ विष्णु भगवानसे पूछा है कि अनेक प्रकारके शरीर धारण करनेवाले अनन्त जीव हैं कौन ऐसा सलिल उपाय है जिससे सब मोक्षको प्राप्त हो जायँ ॥४१॥ बाद विष्णु भगवानने कहा है कि हे गरुड़ ! सुनो मैं कहता हूँ एक परब्रह्म स्वरूप निष्कल शिव देव है जो सर्वज्ञ सबका कर्ता और सबका ईश निर्गुण सत चित् आनन्द स्वरूप है उसीके अंशसे सबके सब जीवराशि हुए हैं जैसे अग्निसे लुत्ती होती है अनादि अविद्या वासनासे बद्ध जीव उन्हींके जाननेसे मुक्त होता है ॥४२-४३॥ पद्मपुराणके शिवगीतामें लिखा है कि जैसे काष्ठके संयोगसे आगमें से लुत्ती उठती है

अनाद्य विद्योपहता यथाग्नौ विस्फुलिङ्गकाः ॥४३॥ पाद्मे शिवगीतायाम् ॥ विस्फुलिङ्गा यथावह्ने र्जायन्ते काष्ठयोगतः ॥ अनाद्यविद्योपहता स्तद्वदंशा महेशितुः ॥४४॥ सौरोपपुराणे चतुर्थाध्याये ऋृषिन्प्रति श्रीसूत वाक्यम् ॥ चतुर्ष्वपिच वेदेषु पुराणेषुच सर्वदा ॥ श्री महेशात्परो धर्म्मो नदृष्टो नच वैश्रुतः ॥४५॥ ब्रह्मा विष्णु र्वलारातिः सर्वेयस्य वशेस्थिताः ॥ उत्पत्तिः सर्वदेवानां सएव ध्येयउच्यते ॥४६॥ नास्तिशम्भोः परोधर्मो नास्त्यर्थः शंङ्करात्परः ॥ शिवादन्यत्सुखंनास्ति मोक्षोनैव हरात्परः ॥४७॥ यदाचर्मव दाकाशं वेष्टयिष्यन्ति मानवाः ॥

वैसे ही अनादि वासनासे युक्त जीव शिवसे निकलते हैं ॥४४॥ सौर उपपुराणके चौथा अध्यायमें ऋषियोंके प्रति श्री सूतजीका वचन है कि चारों वेद अट्ठारहों पुराणोंमें शिवसे परे दूसरा धर्म देखने सुननेमें नहीं आया ॥४५॥ ब्रह्मा विष्णु इन्द्र आदि सब देव जिनके वशमें हैं और उन्हींसे सबकी उत्पत्ति है अतः वही ध्यान करने योग्य है ॥४६॥ शिवसे परे दूसरा कोई धर्म नहीं और शिवसे परे दूसरा अर्थ नहीं शिवसे अन्य सुख नहीं और शिवके बिना मोक्ष नहीं है ॥४७॥ चामसे आकाशको मढ़ दें तो शिवके बिना जाने दुःखका अन्त हो सकता है अर्थात् चामसे आकाशका मढ़ना असम्भव है वैसे ही

तदा शिवमविज्ञाय दुःखस्यान्तो भविष्यति ॥४८॥ श्रेष्ठत्वं ब्रह्मणोयेन ध्येयत्वं येनसार्ङ्गिणा ॥ विष्णुत्वं येनशक्रस्य तस्मादन्यः परोनहि ॥४९॥ ऋषय उचुः केचिल्लोका महेशानं त्यक्त्वा केशवकिंकरा ॥ तत्र किं कारणंब्रूहि वदसंशय नाशकः ॥५०॥ अन्तकाले स्मरन्त्येव प्रायेण गरुड़ध्वजम् ॥ विद्यमाने शिवे-विष्णोः प्रभोश्रीपार्वतीपतौ ॥५१॥ सूत उवाच ॥ यदा यदा प्रसन्नोभू द्भक्तिभावेन धूर्जटिः ॥ विष्णुनाराधितो भक्त्या तदासौ दत्तवान् वरान् ॥५२॥ त्वत्तःपरं प्रभुंनैव

शिवके बिना दुःख छूटना असम्भव है ॥४८॥ जिन्होंने ब्रह्माको श्रेष्ठ बनाया विष्णुको ध्यान करने योग्य बनाया इन्द्रको विष्णुत्व दिया उनसे परे कौन हो सकता है ॥४९॥ ऐसा सूतका वचन सुन सौनकादि ऋषि सब बोले कि हे सूत! संशयनाशक कोई-कोई मनुष्य लोकमें सर्वश्रेष्ठ शङ्करको छोड़कर विष्णुका भक्त होते हैं इसका क्या कारण है ॥५०॥ और सर्वोत्तम सर्वप्रभु महादेवके रहते ही अन्तकालमें विशेष करके विष्णु ही का स्मरण सब लोग करते हैं ॥५१॥ तब सूतजी बोले कि भक्तिपूर्वक जब-जब विष्णु भगवानने शिवका आराधन किया तब-तब प्रसन्न होकर शिवने वर दिया ॥५२॥ तुम्हारे बराबर प्रभुत्वकी ख्याति किसीकी नहीं होगी और

प्रायेण ज्ञास्यतिस्फुटम् ॥ विरलाः केचिदेतद्वै निष्ठां वेत्स्यन्तितत्वत्तः ॥५३॥ हेतुनातेन विप्रेन्द्रा शिवंजानन्ति केचन ॥ प्रायेण विष्णुनामानि गृह्णन्ति वरदानतः ॥५४॥ विष्णोःस्मरण मात्रेण सर्वपाप क्षयोभवेत् सम्भुप्रसाद एवैष नात्रकार्य्या विचारणा ॥५५॥ यःशम्भु तत्वतोवेत्ति सतुनारायणः स्वयम् ॥ यस्तुनारायणम्वेत्ति सशक्रो विबुधेश्वरः ॥५६॥ य इन्द्रंवेत्ति देवेशं लोकपालो जलाधिपः ॥ एवंसर्वान्लोकपालान् जानन्ति सइहामरः ॥५७॥ सर्वदेवमयंविप्रं योजानाति सवेदवित् ॥ रहस्यंवेत्ति वेदस्य सएव हरवल्लभः ॥५८॥ जन्मादिकारणंशम्भुं विष्णुब्रह्मादि पूर्वजम् ॥

इस भेदको कोई-कोई मनुष्य जानेंगे ॥५३॥ इसी कारणसे शिवको कोई-कोई मनुष्य जानते हैं शिवके वरदानसे प्रायः विष्णुका नाम स्मरण करते हैं ॥५४॥ विष्णुके स्मरण मात्रमें सब पापोंका नाश होता है सो शिव ही का प्रसाद है इसमें कोई सन्देह नहीं है ॥५५॥ जो शिवको जानता है सो नारायण है जो नारायणको जानता है सो इन्द्र है जो देवेश इन्द्रको जानता है सो लोकपाल है जो लोकपालोंको जानता है सो देवता है ॥५६-५७॥ सर्वदेवमय जो ब्राह्मणको जानता है और वेदोंका रहस्य जो जानता है वही शिवका प्रिय है ॥५८॥

नजानन्ति महामूर्खाः विष्णुमाया विमोहिताः ॥५९॥ कश्चाण्डालः शिवम्ब्रुया त्साधारण्येन विष्णुना ॥ यस्यप्रसादाद्वैकुण्ठः प्राप्तवानीदृशंपदम् ॥६०॥ अज्ञान-तामसा मूढ़ा मायया मोहिताश्चये ॥ ते सर्वे कथयि-ष्यन्ति विष्णुः श्रेष्ठः शिवादिति ॥६१॥ पुराणानाञ्च-भेदम्वै आज्ञात्वा वहवोजनाः ॥ सूर्यं गणेशं शक्तिञ्च श्रेष्ठत्वंप्रवदन्तिच ॥६२॥ तत्रैव चत्वारिंशतितमे ऽध्या-ये ऽपि ॥ ऋषयउचुः ॥ सूतभद्रं समाचक्ष्व सेवकोय-स्य माधवः ॥ श्रीमहेशस्य विष्णोश्च तुल्यत्त्वं ब्रुवते-कथम् ॥६३॥ ब्रुवन्ति तुल्यतां केचि द्वैपरीत्येन

जन्मका आदि कारण विष्णु ब्रह्माका पूर्वज (पिता पितामह) शिवको विष्णु मायासे मोहित पुरुष नहीं जानते हैं ॥५९॥ कौन चाण्डाल विष्णुको शिवके बराबरमें कहेगा कि जो विष्णु बैकुण्ठ ऐसा धाम शिव ही के प्रसादसे पाये ॥६०॥ अज्ञानी तामस मूढ़ मायासे मोहित पुरुष शिवसे श्रेष्ठ विष्णुको मानते हैं ॥६१॥ पुराणोंका असली मतलब न जानकर बहुत मनुष्य सूर्य गणेश अथवा शक्तिको श्रेष्ठ मानते हैं ॥६२॥ वहाँ ही चालीसवें अध्यायमें सौनकादि ऋषि सूतसे पूछते हैं कि हे सूत! शिवके सेवक माधवको बहुत मनुष्य बराबर क्यों कहते हैं ॥६३॥ कोई बराबर कहते हैं और कोई विष्णु

केचन ॥ एकत्वं केचिदीशेन केशवस्य वदन्तिहि ॥६४॥ अत्र सिद्धान्तमर्यादां ब्रुहितत्वेन सूतज ॥ अवाधायेन चास्माकं संशयो मे निवर्तते ॥६५॥ श्रीसूत उवाच ॥ शृणवन्तु ऋषयः सर्वे श्रुतिसिद्धान्त-मुत्तमम् ॥ महेशान्न परन्तत्वं सर्ववेदेषु गीयते ॥६६॥ वैकुण्ठप्रभृतीनान्तु महेशकृपया पुनः ॥ महेशस्यचदा सोऽयं विष्णुस्तेनानुकंपितः ॥६७॥ श्रुतिस्मृतिपुराणेषु सिद्धान्तोयं यथार्थतः ॥ इन्द्रोपेन्द्रादयः सर्वे महेशस्यैव किंकराः ॥६८॥ वेदान्तवेद्य मीशानं पार्वतीरमणं प्रभुम् ॥ योजानाति सवैकुण्ठो दुःखहा सर्वदेहिनाम्

भगवान ही को बड़ा मानते हैं कोई दोनोंको एक ही मानते हैं ॥६४॥ इसमें कौन सिद्धान्त है उसको आप कहिये जिसमें हम सबोंका सन्देह नष्ट होय ॥६५॥ सूतजी बोले हे ऋषियो ! वेदका सिद्धान्त मैं कहता हूँ सुनो सब वेदोंमें महेशसे परे दूसरा देवता नहीं है और वैकुण्ठमें रहनेवाले विष्णु आदि देवता शिवके दास हैं और उन्हींकी कृपासे सब विभव उन सबोंको मिला है इन्द्र आदि देवता भी शिव ही के किंकर हैं वेद स्मृति पुराणोंका यथार्थ सिद्धान्त यही है ॥६६॥ ॥६७॥ ॥६८॥ वेदान्त वेद्य पार्वती पति शिवको जो जानते हैं वह विष्णु रूप है और सबका दुःख हरनेवाले हैं ॥६९॥ अद्वैत

॥६९॥ अद्वैतं शिवमीशान मज्ञात्वा नैवमुच्यते ॥
घोरे कलियुगेप्राप्ते श्रीशङ्कर पराङ्मुखाः ॥ भविष्यन्ति
न रास्सर्वे इतिद्वैपायनो ब्रवीत् ॥७०॥ आदित्योप
पुराणे मनुम्प्रति भानु वचनम् ॥ सएवात्मा महादेवः
सर्वेषामेवदेहिनाम् ॥ ज्ञानेन भक्तियोगेन ज्ञातव्यः
परमेश्वरः ॥७१॥ यम्प्रपश्यन्ति विद्वांसो योगेन क्षालि-
ताशयाः ॥ नियम्य करणग्रामं सएवातो महेश्वरः
॥७२॥ ब्रह्म विष्णवीन्द्र चन्द्राद्या यस्यदेवस्य किङ्करा ॥
यस्यप्रसादा ज्जीवन्ति सदेवः पार्वतीपतिः ॥७३॥
वायवीय संहिताया मपि ॥ यस्यपादरजः स्पर्शाद्ब्र-
ह्मत्वं प्राप्तवानजः ॥ सार्ङ्गिणापि तथामूद्ध्र्ना धार्यते कः

(एक) शिवको बिना जाने मुक्त नहीं होता और सूतजी ऋषियोंसे
कहते हैं कि व्यासने हमसे कहा है कि घोर कलिके आनेपर बहुत
मनुष्य शिवसे विमुख हो आयँगे ॥७०॥ आदित्य उपपुराणमें मनुके
प्रति श्री सूर्यका वचन है कि सब देहियोंका आत्मा महादेव हैं जो
ज्ञानयोग और भक्तियोगसे प्राप्त होते हैं ॥७१॥ यम नियमादि
अष्टांगयोगसे साधन द्वारा योगी जिनको प्रत्यक्ष करते हैं ॥७२॥
ब्रह्मा विष्णु इन्द्र चन्द्रमा आदि देवता शिवके किंकर हैं और उन्हींके
प्रसादसे जीते हैं ॥७३॥ वायुसंहितामें भी लिखा है कि शिवके

शिवात्परः ॥७४॥ स्कान्दे माहेश्वर खण्डान्तर्गत केदारखण्डे प्रथमा ध्याये चोक्तम् ॥ अष्टादशपुराणेषु गीयतेवैपरः शिवः ॥ तस्माच्छि वस्य माहात्म्यं वक्तुं कोपि नपार्यते ॥७५॥ विना सदाशिवंयोहि संसारं तर्तुमिच्छति ॥ समूढोहि महापापी शिवद्वेषी नसंशयः ॥७६॥ सूत संहितायाम् ॥ तमहं प्रत्ययं व्याजा त्सर्वेजानन्ति जन्तव ॥ तथापि शिवरूपेण नविजानन्ति मोहिताः ॥७७॥ प्रसादादेव रुद्रस्य श्रुत्युत्पन्नात्म विद्यया ॥ बहूनां जन्मनामन्त्येजानन्त्येव शिवंबुधा

चरणकी धूलिके स्पर्शसे ब्रह्मा अज हुए और विष्णु भी मस्तकपर धारण करते हैं तो उनसे परे कौन है ॥७४॥ स्कन्दपुराणके महेश्वरखण्डके अन्दर केदारखण्डके पहिले अध्यायमें लिखा है कि अट्ठारह पुराणमें शिव ही का माहात्म्य है अतः उनके महात्म्यके पार कोई नहीं जा सकता ॥७५॥ बिना सदाशिवके जो संसारसे पार होना चाहते हैं वे मूढ़ महापापी शिवद्वेषी हैं ॥७६॥ सूतसंहितामें लिखा है कि सब मनुष्य अन्यान्य देवता द्वारा शिवको जानते हैं शिवमायासे मोहित होकर शिवको शिवरूपसे नहीं जानते हैं ॥७७॥ शिवके प्रसादसे और वेदोक्त कर्म कर ज्ञान प्राप्त होनेसे बहुत जन्मके बाद शिवको मनुष्य जानता है ॥७८॥ और किसी भक्तका वचन है

॥७८॥ तथा न्यदप्युक्तम् ॥ विद्यानवाया शिवभक्ति-कारिणी लक्ष्मीर्नवा याचकतापहारिणी ॥ पुत्रोनवा पण्डितमण्डलाग्रणीः सानैव सानैव सनैवनैव ॥७९॥ स्कान्दे माहेश्वरखण्डान्तर्गत केदारखण्डे विंशतितमे ध्याये ॥ निर्गुणंपरमात्मानं विद्धिलिङ्गस्वरूपिणम् ॥ पराशक्तिस्तथाज्ञेया निर्गुणा सास्वती सती ॥८०॥ एकएवशिवोह्यात्मा लिङ्गरूपी निरञ्जनः प्रकृत्यासहते-सर्वे त्रिगुणा विलयंगताः ॥८१॥ तत्रैव पञ्चविंशतिमे ध्याये॥ ब्रह्मापितंनजानातिमस्तक स्परमेष्ठिनः ॥ विष्णु-

कि वह विद्या नहीं है जो पढ़कर शिवभक्ति न हुई और वह धन वृथा है जो याचकका तापहरण नहीं किया और वह पुत्र नहीं है जो पण्डितोंकी मण्डलीमें बैठकर शास्त्रार्थ न किया ॥७९॥ स्कन्द-पुराणके केदारखण्डके बीसवें अध्यायमें लिखा है कि निर्गुण पर-मात्मा ही का लिङ्ग रूप है और उनकी शक्ति निर्गुण निरन्तर उन्हींके साथ रहती है ॥८०॥ एक शिव ही आत्मा लिङ्ग रूपसे निरन्तर रहते हैं और प्रकृतिके साथ होकर त्रिगुण (सत्व १, रज २, तम ३) का लय करते हैं ॥८१॥ वहाँ ही अध्याय पचीसमें लिखा है कि शिव लिङ्गका अन्त लेनेके लिये ब्रह्मा ऊपर गये और विष्णु नीचे गये परन्तु अन्त न पाकर थकित हो दोनों लौट

र्गतोहि पातालं नदृष्टोहि तथैवच ॥८२॥ एकत्रिंशत्य-ध्याये ऽपि ॥ नीलं मुक्ता प्रवालञ्च वैदूर्यं चन्द्रमेव च ॥ गोमेदं पद्मरागञ्च मारतं काञ्चनन्तथा ॥ ८३ ॥ राजतं ताम्रमारञ्च तथा नागमयम्परम् ॥ रत्न धातु मयान्येव लिंगानि कथितानि ते ॥८४॥ तथा लैङ्गे ॥ शिवभक्तोनयोराजा भक्तोन्येषु सुरेषु यः ॥ स्वपतिं युवतिस्त्यक्त्वा यथा राजेषु राजति ॥८५॥ शिवक्षेत्र समीपस्था नदानद्यो द्विजोत्तमाः ॥ वापी कूप तडागाश्च शिवक्षेत्र मितिस्मृतम् ॥ ८६ ॥ धनञ्च तुष्टिपर्यन्तं शिवमर्चयतो भवेत् ॥ येवाञ्छन्ति महाभोगान् राज्यञ्च

आये ॥८२॥ वहाँ ही एकतीसवें अध्यायमें लिखा है कि नीलमणि मोती मुङ्गा वैदूर्य्यमणि चन्द्रकान्तमणि गोमेदमणि पद्मरागमणि मरकतमणि सुवर्ण चान्दीतामा नागमणि इन सब धातु और मणियोंका लिङ्ग पूजनीय है ॥८३॥८४॥ लिङ्गपुराणमें लिखा है कि जो राजा शिवको छोड़कर अन्य देवताका भक्त होता है सो वैसा ही है कि जैसे युवती स्त्री अपने पतिको छोड़कर दूसरे पतिके पास जाती है ॥८५॥ शिव-क्षेत्रके समीप वापी कूप पोखरा नदी नद आदि जलाशय जो हो सो शिवतीर्थ है ॥८६॥ इच्छापूर्ति धन शिवके अर्चनसे मिलता है और जो देवताओंका राज्य तथा महाभोगकी इच्छा करें सो सदाकाल

त्रिदशालयम ॥ तेर्चयन्तु सदाकालं लिङ्गरूपं महेश्वरम् ॥८७॥ शिवरहस्ये तृतीयांशे उत्तरार्द्धे चतुश्चत्वारिंशत्यध्याये ॥ अक्षयस्य सुखस्यासु दाताशङ्कर एव मः ॥ अतस्तदर्चनं कार्यं तद्व्रतं परमं व्रतम् ॥८८॥ तेनैवैहि व्रतेनाशुसंसार विषसोषणम् ॥ अतस्तद्व्रतमुत्कृष्टं नारीणां च विशेषतः ॥ ८९ ॥ अहोनजानाति विमूढ़चित्ता पतिं पतीनां परमेश्वरं परम् ॥ अज्ञातवेदान्त विचारराशिः सापापराशिः खलु दुःखराशिः ॥९०॥ संसाररोगनाशाय शिवपूजैवमौषधम् ॥ कल्पितं तेनतत्सेवा कर्तव्याऽति प्रयत्नतः ॥९१॥ सूत संहितायां

शिवलिङ्गका पूजन करें ॥ ८७ ॥ शिवरहस्य उत्तरार्द्धके चौआलिसवें अध्यायमें लिखा है कि अक्षय सुखका दाता शिव हैं अतः उनका पूजन सब व्रतोंसे उत्तम व्रत हैं ॥ ८८ ॥ और उनके व्रतसे शीघ्र ही संसाररूपी विषका नाश होता है अतएव उनका व्रत सब व्रतोंसे उत्तम है स्त्रियोंके लिए विशेष कर्तव्य है ॥ ८९ ॥ बहुत पतिव्रता स्त्री वेदान्त विचारको न जानकर पति ही में प्रेम रखती है पतिका भी पति परमेश्वर शिवको नहीं जानती है वे स्त्रियाँ पाप और दुःखकी राशी हैं ॥९०॥ शिवने संसाररूप रोगका औषधरूप शिव पूजनको कहा है अतः शिवपूजा अवश्य करना चाहिए ॥९१॥

यज्ञवैभवखण्डस्योपरिभागे द्वितीयाध्याये शिव रुद्र भेद निरूपणं शिवाधिक्यञ्च प्रदर्शितम् ॥ यस्यमाया-गतं सत्यं शरीरंस्यात्तमोगुणः ॥ संहाराय त्रिमूर्तीनां सरुद्रस्यान्नचापरः ॥९२॥ तथायस्य तमः साक्षाच्छरीरं सात्विकोगुणः ॥ पालनाय त्रिमूर्तीनां स विष्णुः स्यान्न चापरः ॥९३॥ रजोयस्य शरीरस्या त्तदेवोत्पाद-नाय च ॥ त्रिमूर्तीनां सवैब्रह्मा भवेद्विप्रास्तथापरः ॥९४॥ ब्रह्मणोविग्रहंरक्तं कृष्णं विष्णोश्चविग्रहम् ॥ रुद्रस्य विग्रहं शुल्कं चिन्तयेद्भुक्तिमुक्तये ॥ ९५ ॥ शौल्कं सत्वगुणाज्जातं रागोजातो रजोगुणात् ॥ कार्ष्णं तमो-गुणाज्जात मितिविद्या त्समासतः ॥९६॥ परतत्वैकता-

सूतसंहिता उत्तर भागके दूसरे अध्यायमें शिवरुद्रका भेद शिवाधिक्य लिखा है कि जिनका शरीर सात्त्विक गुणतम तीनों मूर्तियोंमें संहार कार्य वही रुद्र हैं ॥ ९२ ॥ जो शरीर सत्वमय गुण सात्त्विक तीनों मूर्तियोंमें पालन कार्य वही विष्णु हैं ॥९३॥ जिनका शरीर रजोगुण, सृष्टिकार्य भी रजोगुण वही ब्रह्मा हैं ॥९४॥ ब्रह्मा लालवर्ण विष्णु कृष्णवर्ण रुद्र श्वेतवर्ण है ऐसा ध्यान करनेसे भोग मोक्ष प्राप्त होता है ॥९५॥ लाल रजोगुणसे कृष्ण तमोगुणसे श्वेत सतोगुणसे उत्पन्न हुआ ॥९६॥

बुद्ध्या ब्रह्माणं विष्णु मीश्वरम् ॥ परतत्त्वतयावेदा वदन्ति स्मृतयोपि च ॥ ९७ ॥ पुराणानि समस्तानि भारतप्रमुखान्यपि ॥ परतत्त्वैकता बुद्ध्या तान्वरं प्रवदन्ति च ॥ ९८ ॥ तथापिरुद्रः सर्वेषा मुत्कृष्टः परिकीर्तितः ॥ स्वशरीरतया यस्मा न्मनुते सत्त्वमुत्तमम् ॥९९॥ परतत्त्वप्रकाशस्तु रुद्रस्यैव महत्तरः ॥ ब्रह्मविष्णवादिदेवानां नतथा मुनिपुङ्गवाः ॥२००॥ रुद्रः कथंचित्कार्य्यार्थे मनुते रुद्ररूपतः ॥ न तथा देवताः सर्वा ब्रह्मस्फूर्त्यल्पतावलात् ॥१॥ हरिब्रह्मादिदेवान्ये पूजयन्ति यथावलम् ॥ अचिरान्नपरं प्राप्ति स्तेषामस्ति

परम सदाशिवसे ब्रह्मा विष्णु रुद्रको एकता मानकर ब्रह्मभावसे वेदस्मृतियोंमें इन सबोंको भी ब्रह्मरूप कहा है ॥ ९७ ॥ और अट्ठारह पुराण महाभारतादि इतिहासोंमें भी परम सदाशिवसे एकता मानकर ब्रह्मरूप प्रतिपादन किया है ॥९८॥ तथापि इन तीनोंमें रुद्र श्रेष्ठ हैं क्योंकि शरीरसे सात्त्विक है ॥९९॥ परम सदाशिवका प्रकाश जो रुद्रमें है सो ब्रह्मा विष्णु आदि देवोंमें नहीं है ॥२००॥ रुद्र रौद्ररूपसे जो कार्य कर सकते हैं सो और देवता नहीं कर सकते क्योंकि और देवताओंमें ब्रह्मस्फूर्तिकी न्यूनता है ॥१॥ हरि ब्रह्मा आदि देवोंका जो पूजन करते हैं उनको परम शिवकी प्राप्ति जल्दी

क्रमेण हि ॥ २ ॥ रुद्रंयेवेदविच्छ्रेष्टाः पूजयन्ति यथा वलम् ॥ तेषामस्ति परप्राप्ति श्चिरान्नक्रमेण तु ॥ ३ ॥ रुद्राकारतया रुद्रो वरिष्ठो देवतान्तरात् ॥ इति निश्चयबुद्धिस्तु नराणां मुक्तिदायिनी ॥ ४ ॥ परतत्वादपि श्रेष्ठो रुद्रो विष्णुः पितामहः ॥ इति निश्चयबुद्धिस्तु सत्यं संसारदायिनी ॥ ५ ॥ रुद्रो विष्णुः प्रजानाथः स्वराट् सम्राट् पुरन्दरः ॥ परतत्वमितिज्ञानं नराणां मुक्तिकारणम् ॥ ६ ॥ आमात्ये राजबुद्धिस्तु न दोषाय फलाय हि ॥ तस्माद्ब्रह्ममतिर्मुख्या सर्वत्र नहि संशयः ॥ ७ ॥ अस्तिरुद्रस्य विप्रेन्द्राः अन्त-

नहीं होती कुछ कालमें क्रमसे होती है ॥ २ ॥ जो वेदवित (वेदको जाननेवाला) पुरुष रुद्रका पूजन करते हैं उनको परम शिवकी प्राप्ति शीघ्र ही होती है क्रमसे नहीं ॥३॥ रुद्राकार जो रुद्र और देवताओंसे श्रेष्ठ हैं ऐसा निश्चय जिसको है उसको मुक्ति मिलती है ॥४॥ परम सदाशिवसे श्रेष्ठ रुद्र ब्रह्मा विष्णु हैं ऐसी बुद्धि संसार बन्धनको देनेवाली है ॥५॥ परम सदाशिवरूप रुद्र ब्रह्मा विष्णु इन्द्र आदि देवता हैं ऐसा ज्ञान होना मुक्तिका कारण है ॥६॥ क्योंकि दीवानमें राजाका भाव करनेसे दीवान प्रसन्न होकर फल देता है अतः ब्रह्मकी बुद्धि सबमें करना उचित है ॥ ७ ॥ रुद्रको अन्तः सतोगुण बाहर

रसत्वं वहिस्तमः ॥ विष्णोरन्तस्तमस्सत्वं बहिरस्ति रजोगुणः ॥ ८ ॥ अन्तर्बहिश्च विप्रेन्द्राः अस्तितस्य प्रजापतेः ॥ अतोपेक्षागुणसत्वं मनुष्या विवदन्ति हि ॥ ९ ॥ हरिःश्रेष्ठो हरः श्रेष्ठो इत्यहो मोहवैभवम् ॥ सत्वाभावा त्प्रजानाथं वरिष्टं नैवमन्यते ॥ १० ॥ अनेकजन्म सिद्धानां श्रौतस्मार्तानुवर्तिनाम् ॥ हरः श्रेष्ठो हरेः साक्षा दितिबुद्धिः प्रजायते ॥ ११ ॥ महापापवतां नृणां हरिः श्रेष्ठो हरादिति ॥ बुद्धि-र्विजायते तेषां सदासंसारएवहि ॥१२॥ रुद्रः स्वेनेव

तमोगुण है विष्णुको भीतर तमोगुण बाहर सतोगुण है ॥ ८ ॥ ब्रह्माको बाहर भीतर रजोगुण है, रुद्र विष्णु दोनोंमें सतोगुण होनेसे हरश्रेष्ठ हरिश्रेष्ठ है ऐसा विवाद मनुष्य करते हैं बहुत मोहकी बात है कि सतोगुणके अभाव होनेसे ब्रह्माको श्रेष्ठ कोई भी नहीं कहते हैं॥ ९ ॥ १० ॥ अनेक जन्मके पुण्य इकट्ठा होनेसे तथा श्रौत (वेदोक्त) स्मार्त (स्मृति पुराणोक्त) कर्मोंके अनुष्ठानसे मनुष्योंको ऐसी बुद्धि उत्पन्न होती है कि हरश्रेष्ठ हैं हरिसे है ॥ ११ ॥ और महापापी पुरुषोंको हरि श्रेष्ठ है हरसे ऐसी बुद्धि उत्पन्न होती है और उनको सदा संसार बन्धनमें ही रहना पड़ता है ॥ १२ ॥ रुद्र अपने स्वरूपसे ब्रह्मा विष्णुको अथवा उनके

रूपेण विष्णोश्च ब्रह्मणस्तथा ॥ सेवनं नैवकुरुते विभूतेर्वा द्वयोरपि ॥१३॥ केवंल कृपयारुद्रो लोकानां हितकाम्यया ॥ स्वविभूत्यात्मना विष्णो ब्रह्मण श्चापरस्य च ॥ करोति सेवाहेविप्रा कदाचित्सत्यमी- रितम् ॥ १४ ॥ एतावन्मात्रमालंम्य रुद्रं विष्णुं प्रजापतिम् ॥ मन्वतेहि सममंमर्त्या मनुष्याः परिमो- हिताः ॥ १५ ॥ रुद्रादुत्कर्ष मन्येषां ये वाञ्छन्ति विमोहिताः ॥ पच्यते नरके तीव्रे सदाते नहि संशयः ॥ १६ ॥ केचिद्द्वैतं समासृत्य वैडाल वृत्तिकानराः ॥ साम्यमन्येन रुद्रस्य प्रवदन्ति विमोहिताः ॥ १७ ॥ देहाकारेण चैकत्वे सत्यपि द्विजपुङ्गवाः ॥ शिरसा-

विभूतिका सेवन नहीं करते हैं ॥ १३ ॥ ब्रह्मा विष्णुके तपसे प्रसन्न होकर रुद्रने स्वयं अथवा अवतार लेकर लोकहितार्थ स्तुति प्रणाम आदि किये हैं ॥१४॥ इतना ही मात्र अवलम्ब लेकर बहुतसे मोहयुक्त मनुष्य तीनोंको समान मानते हैं ॥१५॥ रुद्रसे बड़ा जो मोहित पुरुष और देवताओंको मानते हैं वे घोर नरकमें पड़ते हैं ॥१६॥ कोई-कोई द्वैत मतको लेकर विलराभक्तके सदृश मोहित पुरुष तीनोंको सम मानते हैं ॥१७॥ देहके हिसाबसे सब देह एक ही

पादयोः साम्यं सर्वथा नास्तिहिद्विजाः ॥ १८ ॥
यथास्यापानयोः साम्यं छिद्रत्वेपि न साम्यते ॥ तथै-
कत्वेपि देवानां रुद्रसाम्यं न विद्यते ॥ १९ ॥
बहुनोक्तेनकिं सर्वा स्त्रिमूर्तीनां विभूतयः ॥ वरिष्ठाहि
विभूतिभ्य स्तेवरिष्ठा नसंशयः ॥ २० ॥ तेषुरुद्रोवरिष्टश्च
ततोमायोऽपरः शिवः ॥ मायाविशिष्टात्सर्वज्ञा त्साम्बः
सत्यादिलक्षणः ॥ २१ ॥ शिवस्वरूप मालोक्य
प्रवदामि समासतः ॥ शिवादन्यतयाभान्तं शिवएव
नसंशयः ॥ २२ ॥ शिवादन्यतयाभान्तं शिवंजोवेद
वेदतः ॥ सवेद परमं तत्वं नास्ति संशयकारणम् ॥ २३ ॥

है परन्तु सिर पादका दरजा बराबर नहीं है ॥१८॥ मुख पैखानाका रास्ता छिद्र तो दोनों है परन्तु बराबर नहीं हैं तैसे ही सब देव एक ही हैं, परन्तु रुद्रके बराबर कोई नहीं है ॥१९॥२०॥ सूतजी सौनकादि ऋषियोंसे कहते हैं कि हे ऋषिश्वरों ! बहुत कहनेमें क्या है और देवताओंके विभूतिसे त्रिमूर्तिका विभूति श्रेष्ठ है ॥२१॥ और इन तीनोंमें रुद्र श्रेष्ठ हैं रुद्रसे श्रेष्ठ मायायुक्त सदाशिव और इनसे श्रेष्ठ वेद वेदान्तसे वेद्य सत्यज्ञान अनन्त आदि लक्षणोंसे युक्त साम्ब शिव हैं ॥२२॥ शिवस्वरूपको देखकर प्रतिज्ञाकर मैं कहता हूँ कि शिवसे अन्य शिव ही हैं दूसरा नहीं है ॥२३॥ शिवसे अन्य शिव ही है

यः शिवः सकलं साक्षा द्वेदवेदान्त वाक्यतः ॥
समुक्तो नात्रसन्देहः सत्यमेव मयोदितम् ॥ २४ ॥
स्कान्दे प्युक्तम् ॥ सात्विकत्वं तूरीयत्व मविनाशित्व
मेवच ॥ साक्षित्व परदेवत्वं शिवत्वञ्चशिवेस्मृतम्॥२५॥
दक्ष यज्ञे वीरभद्र वाक्यम् ॥ कौर्म्मे ॥ वयंत्यहनुचराः
सर्वे सर्वस्यामिततेजसः ॥ भागोभवद्भ्यो देयस्तु
नास्मभ्य इति कथ्यताम् ॥२६॥ देवा उचुः ॥ प्रमा-
णम्वोनजानीमो भागेमन्त्रा इतिप्रभुम् ॥ मन्त्रा उचुः
सुरायुयं तमोपहतचेतसः ॥ येनाध्वरस्य राजानं पूजये
युर्महेश्वरम् ॥२७॥ ईश्वरः सर्वभूतानां सर्वदेवतनुर्हरः ॥

दूसरा नहीं है ऐसा निश्चय वेदसे जिसने जान लिया है उसीने परम-
तत्वको जाना इसमें कुछ संशय नहीं है ॥ २४ ॥ सब वेदवेदान्त
वाक्योंसे एक शिव ही कहे जाते हैं ऐसा निश्चय जिसने कर लिया
है सो मुक्त हो गया इसमें कुछ सन्देह नहीं मैं सत्य-सत्य कहता
हूँ ॥२५॥२६॥ स्कन्दपुराणमें लिखा है कि सात्त्विक तूरीय (जाग्रत
स्वप्न सुषुप्ति तीनोंसे परे चौथा) अविनाशी (नाशरहित) सर्वसाक्षी
परदेवता शिवत्त्व (कल्याण देनेवाला) शिव है दूसरा नहीं है ॥२७॥
शिवको छोड़कर यज्ञादि कर्म करनेवाला एक दक्षप्रजापतिके अतिरिक्त
दूसरा नहीं हुआ उनकी दुर्दशा और उनके साथ देवताओंकी जो

पूज्यते सर्वयज्ञेषु सर्वाभ्युदय सिद्धिदः ॥ २८ ॥ वीर-भद्रोपि दीप्तात्मा शक्रस्यैवोद्यतं करम् ॥ व्यष्टम्भयद-दीनात्मा तथान्येषां दिवौकसाम् ॥२६॥ निहत्य मुष्टि-नादन्ता न्यूषणश्चैव न्यपातयत् ॥ वह्नेर्हस्तद्वयंछित्वा जिह्वामुत्पाट्य लीलया ॥ ३० ॥ तथाविष्णुं सगरुडं

दुर्दशा हुई है सो सब पुराणोंमें लिखी है दो-चार पुराणोंसे निकाल कर मैं यहाँ लिखता हूँ ॥ कूर्म्मपुराणमें लिखा है एक समय दक्ष प्रजापतिने शिवका अपमान कर यज्ञ आरम्भ किया सब देव गन्धर्व ऋषि यज्ञमें आये परन्तु शिव न बुलाये गये तब शिवने क्रोधकर वीरभद्र नामक गणको उत्पन्न कर भेजा कि यज्ञ नाश करो वीरभद्रने अपने कोटिगणोंके साथ यज्ञमें पहुँचे देवता सब पूछे कि तुम सब कौन हो तब वीरभद्रने कहा कि हम सब अप्रमेय तेजवाले शिवका अनुचर हैं और यज्ञमें तुम सबोंका भाग है हम लोगोंका भाग क्यों नहीं हुआ सो कहो ॥ २८ ॥ तब देवता सब बोले कि वेदमन्त्रोंमें तुम सबोंका भाग नहीं लिखा है अतः नहीं दिया गया ऐसा देवताओंका वचन सुनते ही झटसे वेदमन्त्र मूर्तिरूप हो कहने लगा कि हे देवताओ ! तुम सब तमोगुणसे हतचित्त होकर सब यज्ञोंका राजा महेश्वरका पूजन नहीं करते हो ॥२६॥ सब जीवोंका ईश्वर और सब देवरूप शिव यज्ञोंमें पूजे जाते हैं और सब मंगल सिद्धिको देनेवाले हैं ॥३०॥ ऐसा वेदमन्त्रोंका वचन सुन वीरभद्र महाक्रोधसे

समायातं महाबलम् ॥ विव्याध निशितैर्बाणै स्तम्भ-
यित्वा सुदर्शनम् ॥३१॥ शिवरहस्ये सप्तमांशे भगव-
त्याश्चागमनकाले दूरादेव सर्वे देवा देवपत्न्यश्च
प्रणेमुः ॥ लक्ष्मीमुख्या देवपत्न्यो दूराद्दृष्ट्वा शिव-
प्रियाम् ॥ हृष्टाः सत्वरमुत्थाय प्रणेमुर्विनयान्विताः
॥३२॥ दूराद्दृष्ट्वा सुराश्चाम्बां ब्रह्मविष्णुपुरोगमाः ॥
प्रणेमुर्दण्डवद्भूमौ मुनिवृन्द निषेविताः ॥ ३३ ॥
दक्षेणापमानेकृते दधीचिवाक्यम् ॥ रेरेदक्षदुराचार
दम्भाचार परायण ॥ न करोषि कथं पूजा मङ्गलायै

युक्त हो इन्द्र आदि देवताओंका बाहू स्तम्भन कर दिया ॥ ३१ ॥
और मुक्कासे मारकर सूर्य्यका दाँत तोड़ दिये अग्निका दोनों
हाथ काटकर जीभ उखाड़ लिये ॥ ३२ ॥ और विष्णु भगवान
गरुड़पर चढ़े आये उनका चक्रसुदर्शनको स्तम्भन कर तीव्र
वाणोंसे बेधन किया और वीरभद्रने सैकड़ों गरुड़ उत्पन्न किया
उन गरुड़ोंके भयसे विष्णुको पटककर गरुड़ भाग गया ॥ ३३ ॥
इत्यादि वहाँ बहुत विस्तारसे लिखा है संक्षेपमें मैंने यहाँ
लिखा है ॥ शिवरहस्यके सातवें अंशमें लिखा है पिताके गृहमें
यज्ञ होना सुनकर भगवती बिना बुलाये आई दूर ही से भगवतीको
देखकर लक्ष्मी सरस्वती आदि देवस्त्रियोंने खड़ी होकर प्रणाम

यथाविधि ॥ ३४ ॥ इयमेवहि कल्याणी विष्णुमाता यशस्विनी ॥ इयमेवेन्द्र वन्हयर्क ब्रह्मादि जननी-स्मृता ॥ ३५ ॥ यत्पादपद्ममनिशं ध्यात्वासम्पूज्य सादरम् ॥ विष्णुर्विष्णुत्वमापन्नः सेयं भगवतीशिवा ॥३६॥ दक्षते गर्वनिर्वाहः कमाश्रित्य भविष्यति ॥ नास्तिकोप्यत्र देवेशो गर्वनिर्वाहकस्तव ॥ ३७ ॥ यज्ञ-नाशार्थं वीरभद्रमागतं दृष्ट्वा दक्षम्प्रति विष्णु वाक्यम् ॥ रुद्रमव्यभिचारेण येर्चयन्त्यहर्निशं मुदा ॥ ते सर्वे प्यतिदुर्धर्षाः सत्यं सत्यं न संशयः ॥ ३८ ॥

करती भई ॥ ३४ ॥ और दूर ही से भगवतीको देखकर ब्रह्मा विष्णु आदि देवतागण ऋषियोंके साथ दण्डवत किये ॥ ३५ ॥ परन्तु राजा दक्षने भगवतीका सम्मान नहीं किया तब क्रोधयुक्त होकर दधीचि ऋषिने दक्षसे कहा कि अरे दक्ष दुराचारी दम्भसे यज्ञ करनेवाला सब मंगल देनेवाली भगवतीका पूजा तुम क्यों नहीं करते हो ॥३६॥ यही भगवती कल्याण देनेवाली विष्णुकी माता हैं और इन्द्र अग्नि सूर्य ब्रह्मा आदि देवोंकी भी यही माता हैं ॥३७॥ जिनके चरण-कमलका ध्यान और पूजन करके विष्णु विष्णुत्वको प्राप्त हुए वही शिवा भगवती हैं ॥ ३८ ॥ हे दक्ष ! तुम्हारे गर्वका निर्वाह करनेवाला कोई देव नहीं है न मालूम किसके बलपर इतना अभिमान

अगस्त्येन यदापीताः समुद्राः सप्तलीलया ॥ तदा-लक्ष्मी समेतेन मया तदुतरेस्थितम् ॥३६॥ अगस्त्येन ततस्त्यक्तो निःसृतश्च मयाततः ॥ एतादृशं हि सामर्थ्यं तेनप्राप्तं शिवार्चया ॥४०॥ श्रीमहादेवशपथं समुल्लंघ्य भ्रमान्मया ॥ यतः स्थितं ततः प्राप्यं मयादुःखं त्वया-सह ॥४१॥ सुदर्शनाभिधं चक्र मेतस्मिन्न भविष्यति ॥ शैवचक्र मिदंयस्मा दशैव क्षयकारकम् ॥ ४२ ॥ शर-ण्योस्माक मधुना नास्त्येवहि जगत्रये ॥ शङ्करद्रोहिणां

तुमको हुआ है ॥ ३९ ॥ दधीचि ऋषि दक्षमें ऐसा कहकर यज्ञ छोड़कर चले गये और सबको शपथ दिये कि सब यज्ञको छोड़ दो तब तक शिवके क्रोधसे उत्पन्न वीरभद्र यज्ञ नाश करनेके हेतु पहुँचे तब विष्णु भगवानने दक्षसे कहा कि हे दक्ष! शिवके जो अनन्य भक्त होते हैं वे बड़े दुर्धर्ष (उग्र) होते हैं मैं सत्य-सत्य कहता हूँ ॥ ४० ॥ अगस्त्य ऋषिने खेल ही में सातों समुद्रोंको पी गये तब मैं लक्ष्मीके साथ उनके पेटमें चल गया ॥ ४१ ॥ पुनः जब उन्होंने समुद्रोंको त्याग किया तब हम बाहर निकले ऐसी शक्ति उनको शिवपूजा ही से मिली रही ॥४२॥ दधीचि ऋषिने जब शपथ दिया उसी समय हमको यहाँसे उठ जाना चाहता रहा परन्तु भ्रमसे रह जानेके कारण तुम्हारे साथ

लोके कः शरण्यो भविष्यति ॥ ४३ ॥ मामिन्द्रस्त्वा विधिस्त्वान्यं शिवद्रोहपरं यमः ॥ विलोक्य सहसाक्रूरः स कृपां न करिष्यति ॥४४॥ तत्रैवदक्षयज्ञे वीरभद्रः प्राह ॥ रेरेदक्ष दुराचार त्वमेवं कर्तुमिच्छसि ॥ श्रीमहादेव माहात्म्यं किं न जानासि साश्वतम् ॥ ४५ ॥ इत्युक्त्वा शूलमादाय वीरभद्रो रुषेक्षणः ॥ हरिं विदार्य भूपृष्ठे पातयामास सत्वरम् ॥४६॥ ततो विधीन्द्रदक्षादीन्विदार्य पृथिवीतले ॥ पातयामास शीघ्रेण क्रोधाक्रान्त रुषेक्षणः ॥ ४७ ॥ तत्रैव ॐकार वाक्यम् ॥

हमको भी दुःख सहना पड़ेगा ॥४३॥ हमको एक सुदर्शन चक्रका बल है सो तो वीरभद्रपर नहीं लगेगा क्योंकि शिवका दिया चक्र अशैवके मारनेके हेतु है शिवभक्तपर नहीं चलता है ॥४४॥ हम सबोंको शरण देनेवाला इस समय तीनों लोकमें कोई नहीं है क्योंकि शिव द्रोहीको कौन शरण देगा ॥४५॥ हम अथवा इन्द्र ब्रह्मा आदि कोई भी शिवद्रोह करें तो वह क्रूर यम अवश्य दण्ड देता है कुछ दया नहीं करता है ॥४६॥ इतनी बातचीत होती ही रही तब तक महाक्रोधयुक्त त्रिशूल लिये वीरभद्र पहुँचे और दक्षसे बोले अरे दक्ष दुराचारी शिवको छोड़कर तुम यज्ञ करते हो क्या शिवका माहात्म्य नहीं जानते हो ॥४७॥ ऐसा कहकर त्रिशूलसे विष्णुको विदारण कर

सएवदेवजनकः सएवान्धक सूदनः ॥ सएवविष्णु संहर्ता सएव मदनान्तकः ॥ ४८ ॥ सएव ब्रह्मसहर्ता सएवाऽखिल शासकः ॥ एतादृशं शिवंमत्वा सच्चिदानन्द लक्षणम् ॥ पूजयध्वं प्रयत्नेन मुक्त्यर्थं भवसाधनैः ॥ ४९ ॥ तथास्कान्दे माहेश्वरखण्डान्तर्गत केदारखण्डे द्वितीयाध्याये सतीवाक्यम् ॥ हेभृगोत्वं नजासि हेकश्यपमहामते ॥ अत्रे वशिष्ट मेकस्त्वं शक्रकिं कृतमद्यते ॥ ५० ॥ हे विष्णोत्वं महादेवं जानासि परमेश्वरम् ॥ ब्रह्मन् किं त्वं न जानासि महादेवस्य विक्रमम् ॥ ५१ ॥ पुरापञ्चमुखो भूत्वा गर्वितोऽसि सदाशिवम् ॥ कृतश्चतुर्मुखोयेन विस्मृ-

पृथ्वीपर गिरा दिये ॥४८॥ और महाक्रोधसे लाल-लाल नेत्रकर ब्रह्मा इन्द्र दक्ष आदि सबको मारकर गिरा दिये ॥४९॥ तब ॐकार मूर्ति रूप होकर कहने लगा शिव ही सब देवताओंका पिता है और अन्धकको मारनेवाला विष्णुका नाशक कामदेवको भस्म करनेवाला है ॥५०॥ और ब्रह्मा इन्द्र यमका नाशक अखिल जगतके शासन करनेवाले सच्चिदानन्द शिवका पूजन करो संसाररूप बन्धनसे छूटकर मुक्ति मिलनेके हेतु ॥५१॥५२॥ पुनः स्कन्दपुराणके माहेश्वर खण्डके

तोऽसि तदद्भुतम् ॥ ५२ ॥ तत्रैव विष्णुम्प्रति दक्ष वाक्यम् ॥ रक्षरक्षमहाविष्णो त्वंहिनः परमोगुरुः ॥ दक्षेणप्रार्थ्यमानोहि जगादमधुसूदनः ॥५३॥ श्रीमहाविष्णु रुवाच ॥ अवज्ञाहिकृतादक्ष त्वयाधर्म मजानता ॥ ईश्वरावज्ञया सर्वं विफलंच भविष्यति ॥५४॥ अपूज्या यत्र पूज्यन्ते पूजनीयो न पूज्यते ॥ त्रीणि तत्र प्रवर्तेत दुर्भिक्षं मरणं भयम् ॥५५॥ यो यं रुद्रो महातेजा यज्ञरूपः सदाशिवः ॥ यज्ञवाह्य कृतोमूढ़ तच्च दुर्मन्त्रितन्तव ॥ ५६ ॥ रुद्रकोपाच्च कोह्यत्र समर्थोत

अन्तर्गत केदारखण्डके दूसरे अध्यायमें आये ऋषियोंके प्रति भगवतीका वचन है कि हे भृगु ! हे कश्यप ! हे अत्रि ! हे वशिष्ठ ! हे इन्द्र ! तुम सब क्या अनर्थ करते हो जो शिव विमुख यज्ञमें आये हो ॥५३॥ हे विष्णु ! तुम तो परमेश्वर महादेवको जानते ही हो और हे ब्रह्मा ! महादेवके पराक्रमको तुम भूल गये बड़ा आश्चर्य है कि जो पूर्वकालमें पाँच मुखका तुम हुए एक मुख काटकर शिवने चार मुखका बनाया ॥५४॥५५॥ जब वीरभद्र यज्ञका नाश करने लगे तब दक्षने विष्णुसे कहा कि हे महाविष्णु ! रक्षा कीजिये क्योंकि आप ही हम सबोंके परम गुरु हैं ऐसा दक्षकी प्रार्थना सुनकर विष्णु भगवान बोले कि ॥५६॥ हे दक्ष ! धर्मको नहीं जानकर तुमने

वरक्षणे ॥ नपश्यामिच तम्विप्रं त्वाम्वैरक्षति दुर्मतिः ॥५७॥ केवलं कर्ममाश्रित्य निरीश्वर पराजनाः ॥ निरयंते च गच्छन्ति कोटियज्ञ शतैरपि ॥५८॥ ईश्वरस्यचये भक्ताः शान्तास्तद्गतमानसाः ॥ कर्मणोहि फलंतेषां प्रददाति महेश्वरः ॥ ५९ ॥ तथा भागवते दक्षम्प्रति सती वाक्यम् ॥ यद्व्यक्षरंनाम गिरेरितं-नृणां सत्कृत्प्रसङ्गा दघमाशु हन्तितत् ॥ पवित्रकीर्तिं तमलंघ्यसाशनं भवानहोद्वेष्टि शिवं शिवेतरः ॥६०॥

शिवका अपमान किया अतः सब व्यर्थ हो गया ॥ अपूज्योंका जहाँ पूजा हो, पूज्यकी नहीं पूजा हो, वहाँ भय दुर्भिक्ष मरण तीनों प्राप्त होते हैं ॥ दुष्ट मन्त्रियोंके कहनेमें पड़कर यज्ञरूप सदा शिवको तुमने यज्ञसे बाहर कर दिया ॥ रुद्र कोपसे बचानेवाला कोई ऋषि और देवता नहीं है जो तुमको बचावे ॥५७॥ शिवको त्यागकर केवल कर्म ही के बलपर रहकर सौ करोड़ यज्ञ भी करे तो नरक ही मिलता है ॥५८॥ और जो शान्तचित्त होकर अनन्य (शिवसे अन्य दूसरा नहीं है) ऐसे भक्तको कर्मका फल सदाशिव देते हैं ॥५९॥ श्रीमद्भागवतमें दक्षके प्रति सतीका वचन है कि दो अक्षरका शिव ऐसा नाम प्रसङ्गसे एक दफे भी मनुष्य कह दे तो शीघ्र ही पापोंका नाश करता है पवित्र कीर्ति और अलंघ्य महिमा है जिनका हे पिता ! ऐसे शिवसे द्वेष करते हो तो शिव (कल्याण)

अतस्तवोत्पन्न मिदं कलेवरं न धारयिष्ये सितिकण्ठ गर्हिणः ॥ यग्धस्यमोहाद्धि विशुद्धमन्धसो जुगुप्सित- स्योद्धरणं प्रचक्षते ॥६१॥ भविष्यपुराणे तृतीयपर्वणि दशमाध्याये वाल्मीकीय कथा प्रसङ्गेन दक्षयज्ञवर्णन पूर्वक शङ्कराचार्योत्पत्तिः ॥ राम राम रमेत्येवं सहस्रा- ब्दंजजापह ॥ वल्मीकान्निःसृतोयस्मा तस्माद्वाल्मीकि- रुत्तमः ॥६२॥ तत्पश्चात्सशिवोभूत्वा तत्र वासमकार- यत् ॥ अद्यापि संस्थितः स्वामी मृगव्याधः सनातनः ॥६३॥ सर्वेदेवगणा दक्षं नमस्कृत्य चरन्ति हि ॥

तुम्हारा न हो ॥६०॥ और तुम्हारे शिवनिन्दकके वीर्यसे उत्पन्न शरीरको मैं त्याग करती हूँ जैसे निन्दितका अन्न भोजन करनेपर वमन कर देना उचित है ॥६१॥ भविष्यपुराण तीसरे पर्व अध्याय दशमें वाल्मीकिके कथा प्रसङ्गसे दक्षयज्ञ वर्णन और शङ्कराचार्यकी उत्पत्ति लिखी है कि वाल्मीकि पहले व्याधा रहे राम राम एक हजार वर्ष जप करते करते वेमउट लग गया तब वाल्मीकि नाम पड़ा ॥६२॥ तिसके बाद शिवका तप करते करते शिव रूप हो गये और मृगव्याध शिव नामसे वहाँ ही रहने लगे जो आजतक हैं ॥६३॥ सब देवगण दक्ष प्रजापतिको नमस्कार करते रहे, परन्तु मृगव्याध शिव नहीं नमस्कार करते रहे अतः दक्षने क्रोधकर यज्ञ रचना कर

भूतनाथो महादेवो न ननाम कदाचन ॥६४॥ तदा-क्रुद्धः स्वयं दक्षः शिवभागं न दत्तवान् ॥ मृगव्याधः शिवः क्रुद्धो वीरभद्रो बभूव ह ॥६५॥ तेनैव पीडितादेवा मुनयः पितरोऽभवन् ॥ तदावै यज्ञपुरुषो भयभीतः समन्ततः ॥ ६६ ॥ मृहरूपो ययौतूर्णं दृष्टवा व्याधः शिवोभवत् ॥ तदातु भगवान्ब्रह्मा तुष्टाव मधुरैः स्वनैः ॥६७॥ इति श्रुत्वा वीरभद्रो रुद्रः संहृष्टमानसः ॥ स्वांस देहात्समुत्पाद्य द्विजगेह मचोदयत् ॥६८॥ विप्रभैरवदत्तस्य गेहंगत्वा सवै शिवः ॥ पुत्रोऽभूत्कलौ घोरे शंकरो नाम विश्रुतः ॥ कृत्वा शंकरभाष्यञ्च शैवमार्गं मदर्शयत् ॥६९॥ शिवरहस्ये तृतीयांशे ब्रह्म-वाक्यम् । रे रे दक्ष दुराचार किमित्यध्वर दीक्षितः ॥

शिवका भाग नहीं दिये तब वही मृगव्याध शिव क्रोधकर वीरभद्र हुए ॥६४॥६५॥ और देवता ऋषियोंको पीड़ित कर यज्ञ नाश करने लगे तब यज्ञ पुरुष मृगरूप होकर भागा शिव व्याधरूप हो मारा तब ब्रह्माकी स्तुतिसे प्रसन्न हुए ॥६६॥६७॥ और वर दिये कि कलिमें हमारे अंशसे भैरवदत्त नामक ब्राह्मणके घर शङ्कराचार्य्य उत्पन्न होंगे जो शङ्करभाष्य बनाकर शैव मार्गको देखावेंगे ॥६८॥६९॥

भवत्सहाय करणान्मृतो नारायणः स्वयम् ॥७०॥ एतादृशापत्कालोऽयं अशांकर समागमात् ॥ मेरुवत्स-नितः सोऽयं मृतो नारायणोऽधुना ॥७१॥ मुरकंशाद-दयोदैत्या यच्छौर्य्यश्रवणादपि ॥ पलायन्तीति तरसा सोऽयं नारायणोमृतः ॥ ७२ ॥ यस्य शंखध्वनिं श्रुत्वा दैत्यायान्ति दिगन्तरम् ॥ सोऽयं नारायणस्तेन वीर-भद्रेणसंहतः ॥७३॥ गोवर्धना चलोयेन कराग्रेणधृतः

शिवरहस्यके अंश तीनमें दक्ष यज्ञकी कथा लिखी है कि जब वीरभद्र सब देवताओंका अङ्ग भंग किये तब विष्णु भगवान् दक्षका रक्षा करनेके लिए वीरभद्रसे युद्ध करने लगे दशो अवतारका रूप धारण कर अपना माया बढ़ायें तब वीरभद्रने कहा कि कोटिहों नारायणको मैं मारकर नरकको भेज दिया आज तुमको भी मैं अब ही नाश करता हूँ ऐसा कहकर दशो अवतारोंको मार डाला तब ब्रह्माजी आकर विलाप करने लगे, अरे दक्ष दुराचारी तुम्हारा सहायता करनेसे स्वयं नारायण मारे गये ॥७०॥ शिव विमुख यज्ञमें आनेसे यह महान आपत्काल प्राप्त हुआ है जो साक्षान्नारायण मर गये ॥७१॥ मुर कंश आदि दैत्य जिनका नाम सुननेसे कम्पायमान हो जाते रहे सो नारायण आज मृत्युके वश हो गये ॥७२॥ जिनके शंखका ध्वनि सुनकर दैत्य सब दिगन्तको भाग जाते रहे वही नारायण आज मृत्युके वश हो गये ॥७३॥ जिनके शंखका ध्वनि सुनकर दैत्य

स्वयम् ॥ सोऽयं नारायणस्तेन वीरभद्रेण संहतः ॥७४॥ रावणस्ताडितोयेन सर्वलोकैक रावणः ॥ सोऽयं नारायणस्तेन वीरभद्रेण संहतः ॥७५॥ हिरण्याक्षोहतो येन हिरण्यकशिपुर्हतः ॥ सोऽयं नारायणस्तेन वीरभद्रेण संहतः ॥७६॥ एवं शोकेन बहुधा प्रलपन्तं चतुर्मुखम् ॥ वध्वापाशेन सहसा वीरेशः प्राहसंस्मितः ॥७७॥ स्तुत्याप्रसन्नो वीरभद्रः पुनः संस्कारयत्तदा ॥ सर्वेषामङ्गभङ्गञ्च यथावच्चकृतं पुनः ॥ ७८ ॥ शिवः पतिश्च

सब दिगन्तको भाग जाते रहे वही नारायण आज मृत्युशय्यापर पड़े हैं ॥७४॥ गोवर्धन पहाड़को जिन्होंने कन अंगुलियोंपर उठा लिया उन्हीं नारायणको वीरभद्रने आज मार डाला ॥७५॥ सब लोकोंका राजा रावणको जिसने मार डाला उनको वीरभद्रने आज मार डाला ॥७६॥ हिरण्याक्ष और हिरण्यकशिपुको मारनेवाले नारायणको वीरभद्रने आज मार डाला ॥७७॥ ऐसे शोकसे विलाप करते हुए ब्रह्माजीको वीरभद्रने पाशमें बाँधकर गिरा दिये और कहे कि शिव विमुखोंकी यही गति होती है बाद ब्रह्माजीने वीरभद्रकी स्तुति की है वीरभद्र प्रसन्न होकर नारायणको जिला दिये और सब देवोंका जो अंग भंग किये रहे सो सब जोड़ दिये वहाँ बहुत विस्तारसे यह कथा है मैं ग्रन्थ बढ़नेके भयसे संक्षेपमें लिख दिया हूँ ॥७८॥ शिव ही

भर्ताच माता बन्धुः सखासुहृत् ॥ अतस्तत्पूजनं धर्मः परमः परिकीर्तितः ॥७१॥

इति श्री श्रीमद्योगिवर्य्य विप्राजेन्द्र स्वाम्यात्मज पं० कालिकेश्वरदत्त संग्रहीते सिद्धान्तरत्नाकरे तृतीयखण्डे प्रथमस्तरङ्गः ।

पति माता-पिता भाई मित्र सब है अतः उनका पूजन सधवा स्त्रीको भी करना परम धर्म है ॥७१॥

इतिश्री सिद्धान्तरत्नाकरे तृतीयखण्डे भाषाटीकायां प्रथमस्तरङ्गः ।

द्वितीयस्तरंगः

श्रीगणेशाय नमः ॥ शिवतनुं शिवमच्युत मव्ययम् ॥ सशिवमुत्तम शैव समर्चितम् ॥ शिवशिवा शिवदं शिवदं शिवम् ॥ शिवदृशं शिवलोक शिवं भजे ॥१॥ त्वं विश्वकर्ता तव नास्तिकर्ता त्वं बिश्व हर्ता तव नास्ति हर्ता ॥ त्वं विश्वशास्ता तव नास्ति शास्ता त्वं विश्वनाथस्तवनास्ति नाथः ॥२॥ शिवस्य आदिगुरुत्वम् ॥ तदुक्तम् ॥ शिवपुराणे उत्तरार्द्धे वायु

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीगणेश गुरुवर्यके पद सरोजको ध्याय । मन्त्र अर्थ अरु भेदको आगे कहों बुझाय ॥ शिवरूपी शरीरसे अच्युत नाशरहित शिवका पूजन अनन्य शैव करते हैं और शिव शक्ति कल्याण देनेवाले हैं ऐसा समझकर भजन करते हैं ॥१॥ हे शिव ! आप विश्वका कर्ता हैं आपका कर्ता कोई नहीं है संसारका नाश करनेवाला आप हैं आपका नाश करनेवाला कोई नहीं और आप जगतका शासक हैं आपका शासक कोई नहीं विश्वका नाथ आप हैं आपका नाथ कोई नहीं है ॥२॥ शिव ही सबका आदिगुरु हैं सो शिवपुराण उत्तरार्द्ध ज्ञानसंहिताके अध्याय सत्ताइसमें ब्रह्मा

: संहितायां सप्तत्रिंशेऽध्याये ॥ मन्त्ररत्नञ्चसूत्राख्यं पञ्चाक्षरमयम्परम् ॥ मयोपदिष्टन्तत्सर्वं युवयोरद्यविस्मृतम् ॥३॥ ददामि च पुनः सर्वं यथापूर्वं ममाज्ञया ॥ यतो युवांबिना तेन नक्षमौसृष्टिरक्षणे ॥ ४ ॥ पुनस्तत्रैव ज्ञानसंहितायां तृतीयाध्याये ॥ ॐकार प्रभवं मन्त्रं कलांपंचकसंयुतम् ॥ ॐतत्वमसीत्युक्तं महावाक्यं हरस्य च ॥ ५ ॥ पुनर्मन्त्रं तथान्यच्च गायत्रीलक्षणं महत् ॥ पुनर्मृत्युज्जयं मन्त्रं पञ्चाक्षरमतः परम् ॥६॥ चिन्तामणिं तथामन्त्रं दक्षिणामूर्तिसञ्ज्ञकम् ॥ पञ्चमन्त्रन्तथालब्ध्वा जजाप भगवान् हरिः ॥७॥ वर्णा-

विष्णुके प्रति शिवजीका वचन है कि ॥ सूत्ररूप सब मन्त्रोंमें रत्न पञ्चाक्षर (नमः शिवाय) मन्त्र पूर्वकालमें हमने उपदेश किया तुम दोनोंको सो भूल गया है ॥३॥ पुनः इस समय देता हूँ क्योंकि विना उस मन्त्रके तुम दोनों सृष्टि पालन नहीं कर सकते हो ॥४॥ पुनः वहाँ ही ज्ञान संहिताके अध्याय तीनमें लिखा है कि ॥ अ० उ० म० अर्द्धचन्द्र (˘) विन्दु (०) यह पांच कलाओंसे युक्त ॐकार और ॐ तत्वमसि वेदका महावाक्य शिवको कहती हैं ॥५॥ गायत्री मन्त्र १ मृत्युञ्जय मन्त्र २ पञ्चाक्षर मन्त्र ३ चिन्तामणि मन्त्र ४ दक्षिण मूर्ति मन्त्र ५ इन पांच मन्त्रोंको शिवसे प्राप्तकर विष्णु

श्रमधर्म निर्णये ॥ देवानां यो गुरुः प्रोक्तस्तस्यापि गुरुरीश्वरः ॥ सदाशिवोनचान्योहि गुरुः शास्ता परात्परः ॥८॥ कामिके ॥ ॐकारंपितृरूपेण गायत्रिं बेदमातरम् ॥ पितरौ जोन जानाति सविप्रस्त्वन्यरेतजः ॥९॥ शुकरहस्योपनिषदि ॥ तत्वमसीत्यभेदवाचकमिदं येजपन्ति तेशिवसायुज्य मुक्तिभाजो भवन्ति ॥१०॥ ऋग्वेदविधाने ॥ निष्कृतिर्नहिवेदानां मन्त्राणां कलि-दोषतः ॥ अतस्तद्दोषनाशार्थं गायत्रीमाश्रयेद्द्विजः ॥११॥ शिवरहस्ये सप्तमांशे गायत्रीमन्त्रवेद्यः शिवएव ॥

भगवानने जप किया ॥६॥७॥ वर्णाश्रमधर्म निर्णयमें लिखा है कि देवताओंका गुरु जो वृहस्पति उनका गुरु ईश्वर सदाशिव हैं और सबका शासन करनेवाला परात्पर वही हैं ॥८॥ ॐ कार शिव रूप पिता गायत्री भगवती रूप माता है इन दोनोंको जो ब्राह्मण नहीं जानता वह वर्णसंकर है ॥९॥ शुकर रहस्योपनिषदमें लिखा है कि ॥ तत्वमसि महावाक्यसे और शिवसे अभेद मानकर जो जप करते हैं वे शिवसायुज्य मुक्तिके भागी होते हैं ॥१०॥ ऋग्वेद विधानमें लिखा है कि कलिकालके दोषसे वेद और मन्त्रोंकी शक्ति कम हो गई है उस दोषके शान्तिके लिए द्विज गायत्रीका जप करें ॥११॥ शिवरहस्य अंश सातमें लिखा है कि गायत्री शिवको कहती है ॥

पञ्चाक्षरश्च गायत्री श्रौतंमन्त्रद्वयं स्मृतम् ॥ उभयो दैवतंयस्मान्महादेवोमहेश्वरः ॥ १२ ॥ गायन्तं त्रायते यस्मा द्गायत्रीभर्गचिह्निता ॥ संसारभर्जकोभर्गः शिव-एवेति निश्चितः ॥१३॥ प्रलये समनुप्राप्ते वेदालीयन्ति यत्रवै ॥ यायत्र्यामेव गायत्री भर्गशब्देशिवात्मके ॥१४॥ तथा सूतसंहितायाम् यज्ञवैभवखण्डे षष्ठाध्यायेऽपि ॥ योनोस्माकंधियश्चिन्ता अन्तर्यामीस्वरूपतः ॥ प्रचोद-यात्प्रेरयेच्च तस्य देवस्य सुव्रत ॥ १५ ॥ दीप्तस्य सर्व-जन्तूनां प्रत्यक्षस्य स्वभावतः सवितुः स्वात्मभूतन्तु

पञ्चाक्षर गायत्री दोनों मन्त्र वैदिक (वेदका है) और दोनोंका देवता शिव हैं ॥१२॥ जप करनेवाले पुरुषोंको रक्षा करतो है अतः उसका गायत्री नाम है वह गायत्री भर्गशब्दसे युक्त है संसारका भर्जक (नाश करनेवाला) शिव भर्गशब्दसे कहे जाते हैं ॥१३॥ प्रलयके समय चारों वेद गायत्रीमें लय होते हैं और गायत्री शिवात्मक जो भर्गशब्द है उसीमें लय होती है ॥१४॥ और अमरकोशमें भी हर स्मर भर्ग महेश त्रिपुरान्तक शिवका नाम है ऐसा लिखा है ॥ सूत संहिता यज्ञवैभव खण्ड अध्याय छः में लिखा है जो हम सबोंके बुद्धिको अन्तर्यामी होकर प्रेरणा करें उस देवमें ॥१५॥ जो देव सूर्यके प्रकाश रूप सब जीवोंमें व्यापक और पूजनीय है ॥१६॥ तेज चैतन्य रूप जो भर्ग (शिव) द्विजोंसे भजनीय है और तत् शब्दसे कहे

वरेण्यं सर्वजन्तुभिः ॥ १६ ॥ भजनीयंद्विजैर्भर्गस्तेजश्चै-
तंन्य लक्षणम् ॥ तच्छब्दवाच्य सर्वज्ञं जगत्सर्गादि-
कारणम् ॥१७॥ स्वमायाशक्तिसम्पन्नं शिवरुद्रादिस-
ञ्ज्ञितम् ॥ नीलग्रीवं विरूपाक्षं मन्त्रमूर्त्युपलक्षितम्
॥१८॥ आदित्यदेवतायास्तु प्रेरकं परमेश्वरम् ॥ आदि-
त्येनपरिज्ञातं वयंधीमह्युपास्महे ॥ १९ ॥ सूर्योमुख्यं
शरीरंस्याच्छिवस्य परमात्मनः ॥ इतिस्कान्दवचना-
च्छिवस्य सूर्यमण्डलमध्यवर्तित्वं स्फुटीकृतम्—
विष्णुधर्मोत्तरे याज्ञवल्क्यः ॥ आदित्यान्तर्गतं यच्च
ज्योतिषां ज्योतिरुत्तमम् ॥ हृदये सर्वभूतानां जीवभूतः
स तिष्ठति ॥ २० ॥ हृदयाकाशेचयोजीवः साधकैरूप

जाते हैं सर्वज्ञ जगत सृष्टिका आदिकारण अपने मायाशक्तिसे युक्त
शिव रुद्र नीलकण्ठ त्रिनेत्र संज्ञा जिनका है वही गायत्री मन्त्र मूर्ति
हैं ॥१७॥१८॥ सूर्यका प्रेरक और सूर्य द्वारा प्राप्त होनेवाले शिवका
हम सब उपासना करते हैं ॥१९॥ सूर्य शिवका मुख्य शरीर हैं इस
स्कन्दपुराणके वचनसे सूर्य मण्डलमें रहनेवाले शिव हुए।
विष्णुधर्मोत्तरमें याज्ञवल्क्यका वचन है कि सब ज्योतियोंमें उत्तम
ज्योति जो सूर्यमें रहनेवाला है वही ज्योति सब जीवोंके हृदयाकाशमें
जीव रूपसे विराजमान है ॥२०॥ हृदयाकाशमें जो जीव रूपसे

वर्ण्यते ॥ स एवादित्यरूपेण वह्निर्नभसि राजते ॥२१॥ प्राणागया इति प्रोक्तास्त्रायते तानथापि वा ॥ गायत्रीति भवेन्नाम केवलं त्रायतीति वा ॥ २२ ॥ सवितृप्रकाश-करणात्सावित्रीत्यभिधाभवत् ॥ जगतः प्रसवित्रीति हेतुनातेनवापि च ॥२३॥ अनागतान्तु ये पूर्वां मव्य-तीतान्तु पश्चिमाम् ॥ संध्या नोपासते विप्राः कथं ते ब्राह्मणाः स्मृताः ॥२४॥ सायं प्रातः सदासंध्यां येन विप्रा उपासते ॥ कामं तान् धार्मिको राजा शूद्रकर्मसु योजयेत् ॥२५॥ व्यासः ॥पतिग्रहान्नदोषाच्चपातकादुप पातकात् ॥ गायत्री प्रोच्यते तस्माद्गायन्तन्त्रायते यतः

रहता है वही सूर्यरूपसे आकाशमें विराजमान है ॥२१॥ प्राणका नाम गया है उसको जो त्राण करे उसको गायत्री कहते हैं प्राणकी रक्षा करनेवाली है अतः गायत्री नाम हुआ ॥२२॥ सविता जो सूर्य उनमें प्रकाशको देनेवाली इससे सावित्री नाम हुआ अथवा जगतका (प्रसव) उत्पत्ति करनेवाली है इससे सावित्री नाम हुआ ॥२३॥ जो प्रातः सायं सन्ध्या नहीं करते हैं वह ब्राह्मण कैसे हो सकते हैं ॥२४॥ राजाका धर्म है कि जो ब्राह्मण प्रातः सायं संध्या न करते हों तो उनको शूद्र कर्ममें लगावे ॥२५॥ व्यास स्मृतिमें लिखा है कि पतिग्रह और दुष्ट अन्न भोजनपातक और उपपातकसे

॥२६॥ काशीखण्डे ॥ उदयास्तमयादूर्ध्वं यावत्स्याद् घटिकात्रयम् ॥ तावत्सन्ध्या मुपासीतप्रायश्चित्तमतः परम् ॥ २७ ॥ विष्णुधर्मोत्तरे ॥ ईश्वरं पुरुषाख्यन्तु सत्यधर्माणमच्युतम् ॥ भर्गाख्यं विष्णुसञ्ज्ञन्तु ज्ञात्वा त्वमृतमिच्छति ॥२८॥ रुद्रेण च तथा दृष्टः प्रभवः सर्वचेतसाम् ॥ स विष्णुर्भुवनाधारो यस्येदं सकलं जगत् ॥२९॥ देवेन शिवइत्युक्तस्तद्भर्गोविष्णुरुच्यते ॥ सक्तिमान्सपरब्रह्म विष्णुः शक्तिर्नसंशयः ॥ ३० ॥ अन्यत्रापि सावित्रीशब्दस्यार्थः ॥ सप्त व्याहृतियुतासा चतुर्थपदसंयुता ॥ विशेषात्त्रायते यस्मात्सावित्री तेन

त्राण करती है अतः उसका गायत्री नाम है ॥२६॥ काशीखण्डमें लिखा है कि सूर्योदयसे तीन दण्ड बाद तक और सूर्यास्तसे तीन दण्ड बाद सन्ध्या कर सकते हैं इससे अधिक समय बीत जानेपर प्रायश्चित्त करना उचित है ॥२७॥ विष्णुधर्मोत्तरमें लिखा है कि ईश्वर पुरुष सत्य धर्मा अच्युत भर्ग शब्दसे कहे जाते हैं उनको जो जानता है सो अमृत हो जाता है ॥२८॥ और वही विष्णु जगतका आधार सब तेजोंका तेज जिनको रुद्रने देखा है ॥२९॥ गायत्रीमें देव शब्दसे शिव और उनका जो (भर्ग) तेज सो विष्णु है शक्तिमान् शिव शक्ति विष्णु है ॥३०॥ सावित्री शब्दका अर्थ और भी

कीर्तिता ॥३१॥ निर्वाणतन्त्रे ॥ गायत्र्यापुटितं कृत्वा इष्टमन्त्रं जपेत्सतम् ॥ इष्टमन्त्रेण पुटितां गायत्रीं प्रजपेत्सतम् ॥ ३२ ॥ एतद्‌जपं महेशानि आधाराधेय मुत्तमम् ॥ विनाधारं महेशानि आधेयेन बिना तथा ॥ ३३ ॥ नाधारं सिध्यते भद्रे आधेयञ्चनसिध्यति ॥ सर्वेषु विष्णुमन्त्रेषु सौरे गाणपते तथा ॥ ३४ ॥ अग्निपुराणे षोडशाधिकद्विशततमेऽध्यायेऽपि ॥ गायञ्छिष्यान् यतस्त्रायेद्भार्यां प्राणास्तथैव च ॥ ततः स्मृतेयं गायत्री सावित्रीयन्ततोयतः ॥३५॥ औषध्यादिकम्पचति भ्राजृदिसौतथा भवेत् ॥ भर्गस्याद्‌भ्राजत

किसीने कहा है सात व्याहृतियोंसे युक्त और चतुर्थ पदसे युक्त विशेष रूपसे रक्षा करती है अतः सावित्री उसका नाम है ॥३१॥ निर्वाण-तन्त्रमें लिखा है कि गायत्रीसे संपुटित करके गुरुमन्त्रका एक माला जप करे यह जप आधाराधेय उत्तम है क्योंकि विष्णु मन्त्र, गणेश मन्त्र, सूर्य मन्त्र आदि सब मन्त्र बिना आधारके आधेय और बिना आधेयके आधार सिद्ध नहीं होता ॥३२॥३३॥३४॥ अग्निपुराणके दो सौ सोलहवें अध्यायमें लिखा है कि जो पुरुष जप करते हैं उनके शिष्य और स्त्री प्राणका रक्षा करती है अतः गायत्री सावित्री उसका नाम है ॥३५॥ अन्न औषधि आदिकोंको परिपक्क करनेवाला

इति बहुलंछन्दईरितम् ॥ ३६ ॥ शिवंकेचित्पठन्तिस्म शक्तिरूपं पठन्ति च ॥ तत्पदंपरमंविष्णार्देवस्य सवितुस्मृतम् ॥ ३७ ॥ योनोस्माकंयश्चभर्गः सर्वेषां प्राणिनांधियः ॥ प्रचोदयात्प्रेरयेद्धि भोक्तृणां सर्वकर्मसु ॥३८॥ आदित्यान्तर्गतंयच्च भर्गाख्यंवै मुमुक्षुभिः ॥ जन्ममृत्यु विनाशाय दुःखस्यत्रिविधस्य च ॥३९॥ लिङ्गमूर्तिशिवंस्तुत्वा गायत्र्यायोगमाप्तवान् ॥ निर्वाणं परमंब्रह्म वशिष्ठोऽन्यश्च शङ्करात् ॥४०॥ गायत्रीतन्त्रे गायत्री ध्यानम् ॥ मकरन्दरसामोदे परब्रह्मसुखास्पदे ॥

तेजको भर्ग कहते हैं भ्राजृदिप्तौ धातुसे भर्ग हुआ भ्राजते शोभते इति भर्गः (अपने तेजसे शोभायमान जो हो उसको भर्ग कहते हैं) ॥३६॥ गायत्री मन्त्रसे शिव शक्तिको मानते हैं और सूर्यमें रहनेवाला भर्गाख्य तेज (शिव तेज) वही विष्णुका परमपद है ॥३७॥ जो भर्ग (शिव) प्रेरणा करें हम सबोंको शुभ कर्मोंमें ॥३८॥ सूर्यमें रहनेवाला भर्गाख्य तेज (शिव तेज) जन्म मृत्युका नाश करनेवाला है तथा त्रिविध दुःख (आध्यात्मिक १, आधिदैविक २, आधिभौतिक ३) अथवा कायिक वाचिक मानसिक दुःखका नाश करनेवाला है ॥३९॥ वशिष्ट ऋषि तथा और ऋषि सब गायत्रीसे लिङ्गमूर्ति शिवका स्तुति करके निर्वाणपदको प्राप्त किये ॥४०॥ गायत्रीतन्त्रमें गायत्रीका ध्यान

चन्द्रमण्डलमध्यस्ते शिवपर्य्यङ्कशायिनी ॥४१॥ विष्णोः परम्पदंशिवएवेति तदुक्तम् नृसिंहतापिन्युपनिषदि ॥ नयत्र सूर्य्यस्तपति नयत्र वायुर्वाति नयत्र चन्द्रमा भाति नयत्र नक्षत्राणि भांति यत्र नाग्निर्दहति यत्र न मृत्युः प्रविशति यत्र न दुःखं सदानन्दं परमानन्दं शान्तं शाश्वतं सदाशिवं ब्रह्मादिवन्दितं योगिध्येयम् यत्र गत्वा ननिर्तन्ते योगिनः तदेतदृचाभ्युक्तम् तद्विष्णोः परमंपदं सदापश्यन्ति सूरयः ॥ ४२ ॥ विष्णु गीतायाम् ॥ यम्प्राप्य न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम ॥

लिखा है कि कमल वनमें विहार करनेवाली परब्रह्म सुखको देनेवाली चन्द्रमण्डलमें रहनेवाली तथा शिवके पलङ्गपर सोनेवाली गायत्री देवीका मैं ध्यान करता हूँ ॥४१॥ विष्णुका परम्पद शिव है इसमें प्रमाण आगे लिखते हैं नृसिंहतापिनी उपनिषद्में लिखा है कि ॥ जहाँ सूर्य्य प्रकाशमान नहीं होते वायु नहीं बहते चन्द्रमा और तारागण नहीं भासमान होते अग्नि नहीं बरते मृत्यु नहीं मारते जहाँ दुःखरहित सदा परमानन्द शान्त निरन्तर रहनेवाले सदाशिव हैं जो ब्रह्मा विष्णु आदि देवोंसे वन्दित और योगियोंसे ध्यान करने योग्य जहाँ पहुँचनेपर योगी पुनः संसारमें नहीं आते वे ही वेदोंके ऋचासे कहे जाते हैं और वही विष्णुका परम्पद है ॥४२॥ विष्णु

पुरुषः सपरः पार्थः भक्त्यालभ्यस्त्वनन्यया ॥४३॥ एतां विभूतियोगञ्च ममयोवेत्ति तत्वतः ॥ सोऽविकम्पेन योगेन युज्यते नात्र संशयः ॥४४॥ अहंहि सर्वयज्ञानां भोक्ताच प्रभुरेव च ॥ नतु मामभियानन्ति तत्वेनातः श्चवन्ति ते ॥४५॥ कठोपनिषदि ॥ विज्ञानसारथिर्यस्तु मनः प्रग्रहवान्नरः ॥ सोध्वनः परमाप्नोति तद्विष्णोः परमम्पदम् ॥४६॥ कौर्म्मे प्रथमाध्याये ॥ स्वात्मानमचलं ब्रह्म यत्रविष्णोः परम्पदम् ॥ आनन्दमचलं

गीतामें विष्णु भगवानका वचन है कि जहाँ जानेसे मनुष्य पुनः संसारमें नहीं आता है वही हमारा परम धाम है और वह परम पुरुष अनन्य भक्तिसे प्राप्त होता है ॥४३॥ और इस विभूतियोगसे जो तत्वतः (ब्रह्मभावतः) हमको जानते हैं वही स्थिर योगी हैं ॥४४॥ हम ही सब यज्ञोंका भोक्ता प्रभु हैं परन्तु जो हमको स्वरूपतः (विष्णु रूपतः) जानते हैं सो पुनः संसारमें आते हैं अर्थात् विष्णु राम कृष्ण आदि देवोंको जो तत्वतः ब्रह्मरूप सच्चिदानन्द शिवरूपसे उपासना करते हैं सो मुक्त हो जाते हैं जो स्वरूपतः उनका उपासना करते हैं सो पुनः संसारमें जन्म लेते हैं ॥४५॥ कठोपनिषदमें लिखा है कि बुद्धिरूपी सारथी मनरूपी लगामको लगाकर जो चलते हैं वे परमार्गपर पहुँचते हैं और वही विष्णुका परम्पद परशब्दसे पूर्णानन्दमय शिव है इसका प्रमाण पीछे लिख आये हैं ॥४६॥ कूर्म्मपुराणके

ब्रह्म स्थानं तत्पारमेश्वरम् ॥४७॥ अपश्यदैश्वरं तेजः शान्तं सर्वत्रगंशिवम् ॥ श्वात्मानमक्षरं व्योम यत्र-विष्णोः परम्पदम् ॥४८॥ सूर्य गीतायाम् ॥ चित्प्रधा-नोमहाविष्णुः सूर्यस्तेजः प्रधानकः ॥ शक्तिः प्रधाना-सादेवी विश्वशक्ति प्रकाशिनी ॥ ४९ ॥ ज्ञानप्रधानो गणपो सत्प्रधानः सदा शिवः ॥ एषां त्रयाणां भावा-नामतोऽत्रानुभवः समम् ॥ तद्विष्णोरिति वाक्येन तदेव परमम्पदम् ॥५०॥ ब्रह्माण्डपुराणे सप्तविंशेऽध्यायेऽपि॥ पदंयत्परमंविष्णो स्तदेवाखिल देहिनाम् ॥ पदं परम-

अध्याय पहलामें लिखा है कि आत्मा अचल ब्रह्म परमेश्वर (शिव) जहाँ रहते हैं वही विष्णुका परम्पद है ॥४७॥ शान्त सर्वत्र व्यापक शिव आत्मा अक्षर (नाश रहित) वही विष्णुका परम्पद हैं उनको ब्रह्मा देखते भये ॥४८॥ सूर्य्यगीतामें लिखा है कि चैतन्य प्रधान विष्णुमें है तेज प्रधान सूर्य्य हैं सब शक्ति देनेवाली देवीमें शक्ति प्रधान है गणेशमें ज्ञान प्रधान है सतोगुण प्रधान सदाशिव हैं इन पाँचोंसे परे निष्कल शिव ब्रह्म जो उपनिषदोंसे कहे गये हैं वही विष्णुका परम्पद हैं ॥४९॥५०॥ शिवमें तीन भेद हैं शिव, सदाशिव, महेश, शिव निष्कल ब्रह्म, सदाशिव, सगुण निर्गुण, महेश रुद्र सगुण, इन सब विषयोंको द्वितीयखण्डमें प्रमाणके साथ लिख

मद्वैतं सशिवः साम्बविग्रहः ॥ ५१ ॥ न तस्य परमं किञ्चित्पदं समधि गम्यते ॥५२॥ एषचैव प्रजाः सर्वाः सृजत्येषस्वतेजसा ॥ एषचक्रीचवक्षोजः श्रीवत्सांकित लक्षण ॥५३॥ श्रीमद्भागवते द्वितीयस्कन्दे ॥ नयत्र-कालोनिमिषां परः प्रभुः कुतोनुदेवा जगतां यईशिरे ॥ परंपदंवैष्णवमामनन्ति तद्यन्नेतिनेतित्यतदुत्सीसृक्षवः ५४ शुल्क यजुर्वेदे ॥ तद्विष्णोः परमंपदथंसदापश्यन्ति सूरयः दिविचक्षुराततम् ॥ ५५ ॥ विष्णु पुराणे ॥ शक्तयो यस्य चैकस्य ब्रह्मविष्णु महेश्वराः ॥ भवन्त्य

दिया है ॥ ब्रह्माण्डपुराणके अध्याय सत्ताइसमें लिखा है कि अद्वैत शिव पार्वती विष्णुका परम्पद है और सब जीवोंका भी वही परम्पद हैं ॥५१॥ और वही महेश्वर जानने योग्य है जो उसका परम्पद कोई नहीं है ॥५२॥ और वही ब्रह्मा होकर सृष्टि करता है विष्णु होकर पालन करता है तथा रुद्र होकर संहार करता है ॥५३॥ श्रीमद्भागवतके स्कन्द दो में लिखा है कि जहाँ काल और निमिष (पलक) की गति नहीं और वहाँ देवता सब भी नहीं जाते वही विष्णुका परम्पद है जिसको वेदकी श्रुति नेति-नेति (निषेध मुखसे) कहती है ॥ ५४ ॥ शुल्क यजुर्वेदके अध्याय छः मन्त्र पांचमें लिखा है कि वही विष्णुका परम्पद है जिसको ज्ञानी सब देखते हैं और आकाशमें उसका नेत्र फैला हुआ है ॥५५॥ विष्णुपुराणमें लिखा है

भूतपूर्वस्य तद्विष्णोः परमम्पदम् ॥५६॥ सामवेदे अष्टादशाध्यायेऽपि ॥ तद्विप्रासाविपन्यवो जागृवांसः समिन्धते विष्णोर्यत्परमं पदम् ॥५७॥ तथा भगवद्गीतायां श्रीकृष्णोक्तम् ॥ उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः ॥ यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः ॥५८॥ न तद्भासयते सूर्यो न शशाङ्को न पावकः ॥ यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धामपरमं मम ॥५९॥ शुकरहस्योपनिषदि ॥ यो वेदादौस्वरः प्रोक्तः वेदान्ते च प्रतिष्ठितः ॥६०॥ तस्यप्रकृतिलीनस्य यः परः समहे-

कि जिसकी एक शक्ति ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र होकर कार्य करती है वही विष्णुका परम्पद है ॥५६॥ सामवेदके अध्याय अठारहमें लिखा है कि विष्णुका जो परम्पद है उसको ज्ञानी लोग विशेष करके स्तुति करते हैं ॥५७॥ भगवद्गीतामें अर्जुनके प्रति श्रीकृष्णचन्द्रने कहा है कि उत्तम पुरुष हमसे अन्य परमात्मा नाशरहित ईश्वर (शिव) हैं जो तीनों लोकोंका पालन पोषण करता है ॥५८॥ सूर्य चन्द्रमा जिसको प्रकाशमान नहीं करते जहाँ जानेपर मनुष्य पुनः संसारमें लौटके नहीं आता वही हमारा परमधाम है ॥५९॥ शुक रहस्योपनिषदमें लिखा है कि जो वेदके आदि और अन्तमें कहे गये हैं माया-युक्त सदाशिव उनसे परे शिव हैं ॥६०॥६१॥ भर्ग शब्दका अर्थ गायत्री

श्वरः ॥६१॥ भर्गशब्दस्यार्थस्तु गायत्र्यर्थ प्रकरणे मैत्रा-
रण्योपनिषदि ॥ चैषभर्गाख्यो भाभिर्गति रहस्यहीति
भर्गो भर्जयतीति वैषभर्ग इति रुद्रो ब्रह्मवादिनोऽथ
॥६२॥ त्रिपुरातापिन्युपनिषदि ॥ अथैतस्य परंगह्वरं-
व्याख्यास्यामो महानुसमुद्भवम् तदिदं ब्रह्मसाश्वतं
परो भगवान्निर्लक्षणो निरंजनो निरूपाधिरहितो देवः
उन्मीलते पश्यति विकाशते चैतन्यभाववं कामयत
इति स एकोदेवः शिवरूपीदृश्यत्वेन विकासते भर्गो-
देवोमध्यवर्तितूरीयमक्षरं साक्षात्तूरीयं सर्वान्तर्भूतम्
भर्गोदेवस्य धीत्यनेनाऽऽधाररूपशिवात्माऽक्षरं गणयते
॥६३॥कूर्म्म पुराणे ॥ गायत्र्यास्तु परं नास्ति देविचेह-
के अर्थ प्रकरणमें मैत्रारण्योपनिषदमें लिखा है कि भा जो तेज तद्रूप-
गति जिसका अथवा भर्जयति (संहार करनेवाला) शिवको ब्रह्मज्ञानी
सब भर्ग कहते हैं ॥६२॥ त्रिपुरातापिनी उपनिषदमें लिखा है कि
परम गहन वस्तुको मैं कहता हूँ जो महामन्त्र गायत्रीसे कहे जाते हैं
सबसे श्रेष्ठ भगवान निरञ्जन उपाधिरहित वही एक देव शिवरूप
भर्गो देवस्य धीमहि इसके भीतर रहनेवाला तूरीय (चौथा) जाग्रत् १
स्वप्न २ सुषुप्ति ३ समाधि ४ अवस्थामें रहनेवाला और सबमें
व्यापक है ॥६३॥ कूर्म्मपुराणमें लिखा है कि गायत्रीसे परे इस

चपावनम् ॥ तस्मात्तामभ्यसेन्नित्यं ब्राह्मणो हृदये शुचिः ॥६४॥ गायत्री तन्त्रे ॥ प्रथमाष्टाक्षरंभद्रे साम-वेदेति चोच्यते ॥६५॥ तृतीयाष्टाक्षरंभद्रे यजुर्वेदेति चोच्यते ॥ चतुर्थाष्टाक्षरं भद्रे अथर्वेतीह कथ्यते ॥६६॥ आगमसन्दर्भे—ज्ञानदर्पणे गायत्री ब्राह्मणसर्वस्वेच ॥ निर्धूमञ्चपरं ज्योतिस्तैलाग्निवर्ति योगतः ॥ तज्ज्योतिः परमं ब्रह्म सएव परमः शिवः ॥ ६७ ॥ विद्युत्पुंजप्रती-काशा कुण्डला कृतिरूपिणी ॥ परब्रह्मस्यगृणीपञ्चासद्व-र्णरूपिणी ॥६८॥ शिवस्यनर्तकीनित्यापरब्रह्म प्रपूजिता ॥

लोकमें दूसरा मन्त्र नहीं है अतः ब्राह्मण उसका नित्य जप करे ॥६४॥ गायत्रीतन्त्रमें लिखा है कि पहला आठ अक्षरका एक पद ऋगवेद दूसरा आठ अक्षरका एक पाद सामवेद तीसरा आठ अक्षर यजुर्वेद और सावित्रीका जो आठ अक्षरका चौथा पाद है सो अथर्व-वेद है ॥६५॥६६॥ आगमसन्दर्भमें और ज्ञानदर्पणमें तथा गायत्री ब्राह्मण सर्वस्वमें लिखा है कि तैलवर्त्तिके योगसे निर्धूम जैसी ज्योति होती है उसी ज्योतिके सदृश परब्रह्म परमशिव हैं ॥६७॥ और उन्हींमें लपटी हुई कुण्डलके आकृति उनकी शक्ति गायत्री है पर ब्रह्मसे पूजित शिवका नटी ब्राह्मणोंको आनन्द देनेवाली गायत्री है ॥६८॥६९॥ अग्निपुराणमें लिखा है कि जो दोनों सन्ध्या

ब्राह्मणस्यैव गायत्री सच्चिदानन्द रूपिणी ॥६६॥ अग्निपुराणे ॥ कुर्वन्तोऽपीह पापानि ये त्वां ध्यायन्ति पावनिम् ॥ उभेसन्ध्येन तेषां हि विद्यते नहि देवि पातकम् ॥७०॥ गायत्री तन्त्रे ॥ प्रणवत्रयसंयुक्ता ब्राह्मणेषु प्रकीर्तिता: ॥ क्षत्रादौपरमेशानि सर्वत्र प्रणवद्वयम् ॥७१॥ अथ भरद्वाजकृत गायत्र्यर्थो वर्ण्यते ॥ अथाहमर्थं गायत्र्या प्रवक्ष्यामि समासत: ॥ द्विजोत्तमानां सद्भक्त्या जपादीनि प्रकुर्वताम् ॥७२॥ अनेकजगदुत्पत्तिस्थितिप्रलयकारिणी भूतमुपकथ्यमानं निरूपमंतेज: सूर्यमण्डलाभिधेय परब्रह्माभिधीयते सवितु:

गायत्रीका ध्यान जप करते हैं उनसे कुछ पाप भी हो जाता हो तो वह नष्ट हो जाता है ॥७०॥ गायत्रीतन्त्रमें लिखा है कि तीन ॐ कारके साथ ब्राह्मणको गायत्रीका जप करना चाहिये क्षत्री वैश्यको दो ॐ कारके साथ जप करना ॥७१॥ भरद्वाज ऋषिने गायत्रीका जो अर्थ किया है सो आगे लिखते हैं ॥ जो ब्राह्मण भक्तिपूर्वक गायत्रीका जप करते हैं उनको अर्थ ज्ञानसे पूर्ण फल प्राप्त हो इसलिये गायत्रीका अर्थ कहता हूँ ॥७२॥ असंख्य कोटि ब्रह्माण्डोंका उत्पत्ति पालन नाश करनेवाला जो सूर्य्यमण्डल विषे ब्रह्मतेज सवितु: सब जीवोंका रक्षक वरेण्यं वर्णन करके योग्य

सर्वस्य भूतजातस्य प्रसवितुरित्यर्थः वरेण्यं वरणीयं प्रार्थनीयं भर्गः भजतां पापभर्जनहेतुभूतं तेजः देवस्य वृष्टिदानादि गुणयुक्तस्य महादेवस्य (देवशब्दः पिनाकीर्ति निघण्टुः) धीमहि ध्यायामि यो सादित्येपुरुषः सोहमस्मीति चिन्तयामि धियः बुद्धयः यत्तेजः सवितुर्देवस्य वरेण्यमस्माभिरभिध्यातम् भर्गो भजतां पापभर्जनहेतुभूतं धीमह्युपास्महे नः अस्माकं धियः बुद्धिं श्रेयस्करेषु प्रचोदयात् प्रेरयेत् ॥ एषाव्याख्यातु गायत्र्याः सर्वपाप प्रणाशिनी ॥ विज्ञातव्याप्रयत्नेन द्विजैः सर्वशुभेच्छुभिः ॥ ७३ ॥ अथ याग्यवल्क्यकृत गायत्र्यर्थः ॥ ॐकार पूर्विकांतिस्रोगायत्रींयश्च विन्दति ॥

भर्गः भजन करनेवाले पुरुषोंका पापोंको भुंजनेवाला जो तेज देवस्य देवशब्द शिवको कहता है इस निघण्टुके प्रमाणसे महादेवका जो तेज सूर्य्यमें रहनेवाला जो शिव तेज वही मैं हूँ ऐसा ध्यान करे जो हम सबोंके बुद्धिको कल्याणकारी कर्मोंमें प्रेरणा करें यह भरद्वाज ऋषिका किया हुआ गायत्रीका व्याख्या भक्तिको बढ़ानेवाली और पूर्ण फल देनेवाली है ॥७३॥ याग्यवल्क्य ऋषिका किया हुआ गायत्रीका अर्थ आगे लिखते हैं ॥ तीन ॐ कारके साथ जो गायत्रीको जानते हैं उन्हींका ब्रह्मचर्य ठीक है और वे ही कुलीन

चरित्रं ब्रह्मचर्य्यस्य सर्वैश्रोत्रिय उच्यते ॥७४॥ एवं यस्तु विजानाति गायत्रीं ब्राह्मणस्तु सः ॥ अन्यथा शूद्रधर्मास्या द्वेदानामपि पारगः ॥७५॥ तच्छब्देन तु यच्छब्दो बोद्धव्यः सततं बुधैः ॥ उदाहृते तु तच्छब्दे तच्छब्दस्यादुदाहृतः ॥ ७६ ॥ सवितासर्वभूतानां सर्व-भावान्प्रसूयते ॥ सवनात्पावनाच्चैव सविता तेन चोच्यते ॥ ७७ ॥ वरेण्यं वरणीयञ्चजन्मसंसार भीरु-भिः ॥ आदित्यान्तर्गतं यच्चभर्गाख्यंस्वै मुमुक्षुभिः ॥ जन्ममृत्युविनाशाय दुःखस्य त्रिविधस्य च ॥७८॥ भ्रस्रपाकेभवेद्धातुर्यस्मात्पाचयतेह्यसौ ॥ भ्राजते दीप्यते

ब्राह्मण हैं ॥७४॥ गायत्रीको जो इस प्रकार जानते हैं वही ब्राह्मण हैं जो नहीं जानते हैं और चारो वेद पढ़े हो तो भी शूद्र ही के सदृश है ॥७५॥ तत् शब्दका अर्थ ॐ तत् सत् शब्द ब्रह्मका वाचक है (ॐ तत् सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधस्मृतः) ब्रह्मविद्योपनिषदमें लिखा है कि (पंचाक्षर मयंशम्भुं परब्रह्म स्वरूपिणम्)॥७६॥ सवितुः सब जीवोंका सवितारक्षक पवित्र करनेवालेको सविता कहते हैं ॥७७॥ वरेण्यं संसार बन्धके भयसे वरेण्य पूजनीय जो सूर्य मण्डलके भीतर रहनेवाला भर्गाख्य तेज यानी शिवतेज सो जन्म मृत्यु तथा त्रिविध दुःखोंका नाशक है ॥७८॥ (भ्रस्रपाके) धातुसे

ह्यस्माज्जगदन्ते हरत्यपि ॥७९॥ दीव्यते क्रीड़तेह्यस्मा दुच्यते शोभते दिवि ॥ तस्माद्देव इति प्रोक्तः स्तूयते सर्व दैवतैः ॥८०॥ धर्मार्थकाममोक्षेषु बुद्धिवृत्तिं पुनः पुनः ॥ यो नः श्चिन्तयामोवयं भर्ग धियो यो नः प्रचोदयात् ॥८१॥ वृहदारण्यकोपनिषदि ॥ भूमिरन्त-रिक्षं द्यौरित्याष्टावक्षराणि अष्टाक्षरं हवा एकं गायत्र्यै-पदम् ॥ ऋचोयजुंषि सामानित्यष्टावक्षराणि अष्टाक्षरं वा एकं गायत्र्यै पदम् ॥ प्राणोपानव्यान इत्यष्टाक्षराणि हवा एकं गायत्र्यै पदम् ॥ यथास्याएतदेव तूरीयं पदं

भर्ग शब्द बनता है जिसको परिपक्क करे अन्तमें अपने तेजसे जगतका नाश करे उसको भर्ग कहते हैं ॥७९॥ देवस्य दिव जो आकाश इसमें रहनेवाले देवको देव कहते हैं जिसका सब देवगण स्तुति करते हैं वही देव शिव आशाधिपति हैं ॥८०॥ धीमहि उसी देवका हम सब ध्यान करते हैं धियोयोनः प्रचोदयात् जो हम सबोंके बुद्धिको प्रेरणा करे धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, आदि शुभ कर्मोंमें ॥ सूर्यमण्डलके भीतर उसी देवका हम सब ध्यान करते हैं ॥८१॥ वृहदारण्यकोपनिषदमें इस प्रकार गायत्रीका अर्थ लिखा है कि भू र्भुवः स्वः आठ अक्षर एक गायत्रीका पद है महाभारतमें लिखा है कि (भुवनं भूर्भुवं देवं सर्व लोक महेश्वरम्) तीनों भुवन रूप सब लोकोंका ईश्वर शिव है और आठ अक्षर संयुक्त ऋग यजुः साम रूप

दर्शितम् ॥ परोरजाय एष इत्यादि ॥८२॥ छान्दोग्योपनिषदि ॥ गायत्री वा इदं सर्वं भूतं यदिदं किंच वाग्वै गायत्री वाग् वा इदं सर्वभूतं गायति त्रायते च ॥८२॥ शंकर भाष्यम् ॥ एतावानस्य गायत्र्याख्यस्य ब्रह्मणः समस्तस्य महिमा विभूति विस्तारः त्रिपाद त्रयः पादा अस्य सोऽयं त्रिपाद अमृतं पुरुषाख्यं समस्तस्य गायत्र्यात्मकस्य दिविद्योतमानस्य स्वात्मन्यवस्थितमित्यर्थः ॥८३॥ महीधर भाष्यम् ॥ सवितुः प्रेरकस्यान्तर्य्यामिणो आदित्यान्तर्गत पुरुषस्य वा ब्रह्मणो वरेण्यं भर्गः पापानां भर्जनार्थं तेजः वयं धीमहि

एक गायत्रीका पद है और आठ अक्षरसे प्राणापान उदान व्यान समान रूप एक गायत्रीका पद है चौथापद सावित्रीमें परोरजसे सावदोम है ॥८२॥ छान्दोग्योपनिषदका जो मन्त्र है उसका अर्थ शंकराचार्यने इस प्रकार लिखा है कि गायत्री रूप ब्रह्म ही का यह सब महिमा विस्तार है वह त्रिपाद भूत, भविष्य, वर्तमान तीनों कालमें रहनेवाला अमृत अविनाशी पुरुष शिव (योवैरुद्रः स भगवान् यश्चमृतं तस्मैवै नमो नमः) इस मैत्रारण्योपनिषद् श्रुति प्रमाणसे अमृत नाम शिवका है पुनः आकाशका अधिपति शिव ही है और सबके हृदयमें रहनेवाले हैं ॥८३॥ और महीधराचार्यने इस प्रकार अर्थ किया है कि सब जीवोंका

॥८४॥ सायण भाष्यम् ॥ सवितुः सर्वान्तर्यामि तया प्रेरकस्य जगत्स्रष्टुः परमेश्वरस्य वरेण्यं सर्वैरूपास्यतया-भजनीयं भर्गः परब्रह्मात्मकं तेजः धीमहि ॥८५॥ माधव भाष्यम् ॥ यः सविता सूर्य्योधियः कर्मणि प्रचोदयात् प्रेरयेत् वरेण्यं सर्वैभजनीयं भर्गः पापानां तापकं तेजः धीमहि ॥८६॥ ऋष्यश्रृङ्गः॥ सर्वात्मनाहि यादेवी सर्वभूतेषु संस्थिताः ॥ गायत्रीमोक्षहेतुर्वै मोक्षस्थानमलक्षणम् ॥८७॥ सामवेदे त्रयोशदखण्डे ऋग्वेदेऽपि गायत्री मन्त्रम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं[1] भर्गो देवस्य धीमहि[2] धियो यो नः प्रचोदयात् ॥

प्रेरक अन्तर्यामी और सूर्यमें रहनेवाला पुरुष परब्रह्मका पापोंका नाशक जो तेज उसका हम सब उपासना करते है ॥ (पुरुषोहवै रुद्रः) इस श्रुति प्रमाणसे पुरुष शब्द शिवको कहता है ॥८४॥ सायणने इस प्रकार अर्थ किया है कि सबमें व्यापक अन्तर्यामी होकर जगतका उत्पादक परमेश्वर (तमीश्वराणां परमं महेश्वरम्) जो ईश्वरोंका भी ईश्वर शिव उनका पापोंका नाशक जो तेज उसका हम सब ध्यान करते हैं ॥८५॥ माधवाभाष्य ॥ जो सविता हम सबोंको बुद्धिको प्रेरणा करें शुभ कर्मोंमें पापोंका ताप पहुँचानेवाला उनका भर्ग जो तेज उसका ध्यान करते हैं ॥८६॥ ऋषिश्रृङ्ग कहते हैं कि सबका आत्मा होकर सबमें रहनेवाली गायत्री मोक्षका हेतु है ॥८७॥

॥ पदच्छेदः ॥

ॐ३ भूः भुवः स्वः तत् सवितुः वरेणियं भर्गः देवस्य धीमहि धिय यः नः प्रचोदयात् ॥

॥ भाष्यम् ॥

अथैवमपि सन्ध्यान्ते चतुर्विंशति मुद्रां प्रदर्श्य जापान्ते चाष्टावनुसन्धाय ऋष्यादि स्मरण पूर्वक व्याहृतित्रय पूर्विकां चतुर्विंशत्यक्षरां गायत्रीं जपे दित्याह ॥ मुद्रा दर्शनेन किं फलं मुद्रा शब्दस्य कोवार्थः तदुक्तं प्रयोग संग्रहे मोदनात्सर्वदेवानां द्राव-णात्पापसन्ततेः ॥ तस्मान्मुद्रेति विख्याता मुनिभि स्तंत्रवेदिभिः ॥ ॐभूरि ति त्रिभुवन मों ब्रह्मैवे त्यर्थः ॥ तदुक्तम् ॥ ज्ञान तन्त्रे॥ प्रणवं मूर्ध्नि सन्ध्याये न्मनसा प्रणवं जपेत् ॥ तमोमात्मा महादेवः प्रकाशयति सर्वदा ॥ कूर्म्म पुराणे पूर्वार्द्धे त्रयस्त्रिंश त्यध्यायेऽपि॥ शंकूकर्ण इतिख्यातः पूजयामास शूलिनम् ॥ जजाप रुद्र मनिशं प्रणवं रुद्र रूपिणम् ॥ एवंसति अनन्या निष्कले तत्वे प्रभाभानो रिवामलेति स्मृत्या ॥ शक्ति-

महेश्वरो ब्रह्म त्रय स्तुल्यार्थं वाचकाः ॥ स्त्री पुं नपुं-
सको भेदः शब्दतो न पदार्थतः इति गन्धर्व तन्त्र
वचना द्भर्गो देवस्य (सुपांसुलुगिति) स्मरणा
द्भर्गस्य देवस्य महादेवस्य परब्रह्मणः सबितुरिव तद्वरेण्यं
शक्त्याख्यं तेजो धीमहि ध्यायाम इत्यर्थः सवितुर्वरराय‌ं
शिवस्तदुक्तं अवधूत गीतायाम् ॥ यत्रा तमस्तं नदिवा
नरात्रि र्नसन्नचासच्छिवएव केवलः ॥ तदक्षरं तत्स-
वितुर्वरेण्यं यतः प्रबृत्ता प्रसिता पुरातनि ॥ इति वच-
नात् ॥ भर्गपदेन शिवएवोच्यते ॥ तत्र प्रमाणम् ॥
याग्यवल्क्य वचनम् ॥ भ्रह्यपाके भवेद्धातु र्यस्मा-
त्पाचयते ह्यसौ ॥ भ्राजते दीप्यते ह्यस्मा द्यगदन्ते
हरत्यपि ॥ कालाग्नि रूपमास्थाय सप्तार्चिः सप्तरस्मि-
भिः ॥ भ्राजते तत्स्वरूपेण तस्मा द्भर्गः स उच्यते॥
भेति भासयते लोकान् रेति रञ्जयते प्रजाः ॥ गइ-
त्यागच्छते तेजस्तं भर्गो भर्ग उच्यते ॥ तथाकूर्म्म-
स्मृतावपि—भर्गः सूर्य्योहरिश्छाया वरेण्यंशक्तिरातनः॥
दीपः शिवोहरिर्धूमः प्रभाशक्तिर्यथा तथेति ऋ॰ प॰

॥५॥ भृङ्गी तन्त्रे प्युक्तम् ॥ यः शिवः सतु गायत्री या गायत्री शिवस्तुः सः ॥ मूढ़ाएवं न जानन्ति ह्यज्ञा- न तमसा वृताः ॥ सकलेनैव रूपेण गायत्री शिव उच्यते ॥ निष्कलेनैव भावेन गायत्री कथ्यते शिवः ॥ देवीपुराणे शिवम्प्रति ब्रह्मादिदेव वाक्यम् ॥ त्वं गायत्री सदादेवी वेदमाता स्वयं भुवा ॥ महाज्ञान परानित्या ज्ञानगम्या नमोऽस्तु ते ॥ शक्ताया जगतः कर्तुं सर्गानुग्रहसंग्रहान् ॥ शक्लृसक्तौ स्मृतो धातुः शिवाशक्ति स्ततः स्मृताः ॥ रुद्रयामल तन्त्रे ॥ गायत्री रहस्येऽपि ॥ देव देवीति यादेवी वेदमाता सरस्वती ॥ गायत्री त्रिपदा देवी त्र्यक्षरी भुवनेश्वरी ॥ सर्वसौख्य प्रजनकं सर्वज्ञानमयं शिवम् ॥ परा परात्मा परमा कला ब्रह्म स्वरूपिणी ॥ तथा शिवरहस्येऽपि ॥ वेदमाताच गायत्री पितावै भर्ग उत्तमः ॥ सएव भग- वाच्छम्भुः स्त्री पुंभावेन तिष्ठति ॥ वेद साराख्य शिव सहस्र नाम्यपि ॥ नमः शिवाय भर्गाय गायत्री वल्ल- भाय च ॥ तथा ॥ आदित्यान्तर्गतं यच्च भर्गाख्यम्वै

मुमुक्षुभिः ॥ जन्ममृत्यु विनाशाय दुःखस्य त्रिविधस्य चेति ॥ अग्निपुराण वचनाद्भर्ग शब्देन शिवएवोच्यते ॥ यश्च भर्गो ययशक्त्या नोस्माकं धियोन्तः करणानि तपो यज्ञादि कर्मसु प्रचोदयात् प्रेरयेदिति महामन्त्रार्थः ॥

॥ भाषार्थः ॥

भूः भुवः स्वः त्रिभुवन ओम् अर्थात शिवमय है ओम् शब्द शिवको कहता है इसमें प्रमाण ज्ञानतन्त्रमें लिखा है कि ॐ कारको मस्तकमें ध्यान कर मनसे जप करना तब ओम्का आत्मा महादेव प्रकाशमान होते हैं ॥ कूर्मपुराण पूर्वार्द्ध अध्याय २३ में लिखा है कि शंकुकर्ण नाम राजा शिवका पूजनकर शिवरूप प्रणव (ॐ) का अहर्निश जप करते रहें सन्ध्याके अन्तमें चौबीस मुद्राको दिखाकर गायत्रीका जप करना अन्तमें आठ मुद्रा दिखाना ॥ मुद्रा दिखानेसे क्या फल और मुद्रा शब्दका क्या अर्थ है सो लिखा है प्रयोगसंग्रहमें लिखा है कि जो सब देवोंको प्रसन्न रखे पापोंको द्रावण (नाशक) उसको मुद्रा कहते हैं ॥ त्रिभुवन ब्रह्ममय है अनन्या निष्कला सूर्यके प्रकाश रूपा जो शक्ति इस स्मृतिके प्रमाणसे तथा शिव ही कि एक शक्ति

ब्रह्माणी, लक्ष्मी, रुद्राणी, होकर सृष्टि, पालन, संहार, करती हैं स्त्री पुरुषका भेद शब्दसे है वस्तुतः एक शिव ही हैं इस गन्धर्वतन्त्रके वचनसे (तत्सवितुर्वरेण्यं) तब न जो ब्रह्मतेज सूर्यमें रहनेवाला वर्ण-नीय (भर्गस्यदेवस्य) शिवका तेज यहाँ (सुपां सुलुक्) पाणिनिका सूत्रसे षष्ठीको प्रथमा हो गया है ॥ (भर्गदेव) शिव देवका प्रकाश रूपा जो शक्ति उसका मैं ध्यान करता हूँ ॥ अवधूत गीतामें लिखा है कि जहाँ अन्धकार नहीं दिन रात्रिका विभाग नहीं सत असत नहीं केवल निष्कल शिव हैं वही अक्षर (नाशरहित) (सवितुर्वरेण्यं) सूर्यके प्रकाश रूप हैं उन्हींसे सब जगत हुआ ॥ सूर्यमें जो साधारण प्रकाश है इस प्रकाशसे विलक्षण (भर्ग तेज है) शिव तेज हैं ॥ जिससे सूर्य भी प्रकाशमान होते हैं गायत्री मन्त्रमें उसी तेजका वर्णन है ॥ भर्ग शब्द शिवको कहता है इसमें प्रमाण याज्ञवल्क्यका वचन है कि भ्रस्जपाके धातुसे भर्ग होता है अपने तेजसे जो सबको परिपक्व करे कालाग्नि रूप होकर अपने तेजसे अन्तमें सबका नाश कर अपने तेजसे शोभायमान रहे उसको भर्ग कहते है—भ, र, ग, तीन अक्षर हैं तीनोंका अर्थ करते हैं, भ अर्थात् लोकको जो भासमान (प्रकाशमान) करे, र प्रजाओंको जो रञ्जन (प्रसन्न रखे), ग तेजमें जो गमन करे उसको भर्ग कहते हैं कूर्म्मपुराणमें भी लिखा है कि भर्ग सूर्य हैं छाया हरि हैं घाम शक्ति है दीप शिव हैं धूम हरि हैं प्रकाश शक्ति है पुनः भृङ्गीतन्त्रमें लिखा है कि जो शिव हैं वही गायत्री है

और जो गायत्री है वही शिव हैं अज्ञानतमसे युक्त मूढ़ इस भेदको नहीं जानते—सगुण निर्गुण दोनों भावसे गायत्रीसे शिव कहे जाते हैं देवीपुराणमें भी शिवके प्रति ब्रह्मादि देवोंका वचन है कि हे शिव ! आप ही गायत्री देवी वेदमाता स्वयम्भुवा ज्ञानगम्य हैं आपको हम सब नमस्कार करते हैं जगतका सृष्टि पालन नाश करनेका जो शक्ति रखता है सक्लृसक्तौ धातुसे शक्ति शब्द बनता है शिवा शक्ति हैं पुनः रुद्रयामल पूर्वतन्त्रमें और गायत्रीरहस्यमें लिखा है कि—देव देवी रूप जो देवी वेदकी माता सरस्वती त्रिपदा त्र्यक्षरी भुवनेश्वरी गायत्री है सब सौख्यको देनेवाला सब ज्ञानमय शिव हैं परा परमात्मारूपा ब्रह्मकला गायत्री हैं—शिवरहस्यमें भी लिखा है कि वेदकी माता गायत्री पिता भर्ग (शिव) वही शिव स्त्री पुरुष दोनों रूपसे रहते हैं वेद साराख्य शिव सहस्रनाममें भी लिखा है कि नमः शिवाय भर्गाय गायत्री वल्लभाय च (गायत्रीका प्रिय पति) सूर्यके मण्डल मध्यवर्त्ति जो भर्गाख्य तेज (शिव तेज) जन्म मृत्यु तथा त्रिविध दुःखका नाश करनेवाला है इस अग्निपुराणके वचनसे भी भर्ग शब्दसे शिव कहे जाते हैं जो भर्ग जिस शक्तिके द्वारा हम सबोंके बुद्धिको प्रेरणा करें तप यज्ञादि शुभ कर्मोंमें तो यही गायत्री अर्थ है बिना अर्थ ज्ञानके मन्त्र जपका पूर्ण फल नहीं होता [यास्कने कहा है कि

स्थाणुरयं भारहारः किलाभूदिध्य वेदं नविजानातियोर्थं योर्थज्ञइत्सकलं भद्र मश्नुते त्यादि] अर्थ जो वेद पढ़ते हैं और उसका अर्थ नहीं

जानते सो खम्भाके सदृश भार वाहकके समान हैं जो अर्थको जानकर पढ़ते हैं सो सब कल्याणको प्राप्त करते हैं ॥ पुनः सुश्रुतमें लिखा है कि

यथा खरश्चन्द भारवाहि भारस्यवेत्ता नतुचन्द नस्य एवंहि शास्त्राणि वहून्यधीत्य चार्थेषुमूढ़ाः खरवद्वहन्ति ॥ अर्थ—जैसे गद्दहापर चन्दनका बोझ लादा गया तो वह बोझ ही मात्र जानता है चन्दनके सुगन्धको नहीं जानता सब पढ़ गया अर्थ नहीं जाननेवाला वैसा ही है ॥ पुनः गन्धर्वतन्त्रमें लिखा है कि ॥

मन्त्रार्थं मन्त्र चैतन्यं योनिमुद्रां नवेत्तियः कथित सूतकं तस्य जपात्सिद्धि र्नजायते ॥ अर्थ—मन्त्रका अर्थ और संस्कारयोनिमुद्रा बन्ध जो नहीं जानते उनको सदा सूतक है जपसे सिद्धि नहीं होती ॥ गायत्रीका अर्थ कई विद्वानोंने अपने बुद्धि विद्याके बलसे चौबीस प्रकारका किये हैं सो सब ठीक है क्योंकि शब्द कामधेनुके सदृश है जिधर चाहे उधर लग सकता है परन्तु हमारा सिद्धान्त है कि पूर्वकालके त्रिकालज्ञ ज्ञानी महर्षियोंने जो अर्थ किये हैं वही ठीक है अतः उन्हीं लोगोंके कथनके माफिक इस खण्डमें लिखता हूँ और मन्त्रका संस्कार इसी खण्डके आगे लिखेंगे योनिमुद्रा—बन्ध शिवसंहितामें लिखा है कि

अपसव्यं गुदे स्थाप्य दक्षिणाञ्च ध्वजोपरि योनिमुद्रा वन्ध एष भवेदासन मुत्तमम् ॥ अर्थ—वामपादके एडीको गुदामें रखना दाहिने पादको लिङ्गके ऊपर रखकर जप करनेसे कैसाहु मन्त्र हो सिद्ध हो जाता है ॥

गायत्री तन्त्रे ॥ राममन्त्रं कृष्णमन्त्रं शिवहीनं वृथा यथा ॥ आदिशून्यं पादहीनं अन्तशून्यं तथैव च ॥८८॥ रुद्रयामले ॥ केवलं योजपेच्छाक्तं मनुः शैवं न योजयेत् ॥ जन्मकोटिषु जप्तेषु नमनुः सिद्धिभाग् भवेत् ॥ ८९ ॥ शिवरहस्ये सप्तमांशे काशीमाहात्मे प्युक्तम् ॥ ये काशीक्षेत्र मनघ मन्यक्षेत्र समं विदुः॥ तेजातना मिमां क्रूरां प्राप्नुवन्ति न संशयः ॥९०॥ शैवदीक्षां विहायास्यां काश्यां तिष्ठति ये जनाः ॥ तेयातना मिमां क्रूरां प्राप्नुवन्ति न सशयः ॥९१॥ शैवपञ्चाक्षर जपं त्यक्त्वा तिष्ठन्ति येजनाः ॥ तेयातना

गायत्रीतन्त्रमें लिखा है कि राममंत्र कृष्णमंत्र शिवमंत्रसे हीन वृथा जैसे हैं वैसे ही आदिशून्य अन्तशून्य पादहीन मंत्र व्यर्थ है ॥८८॥ रुद्रयामलमें जो बिना शिवमंत्रके केवल शक्तिमंत्रका जप करते हैं कोटि जन्म जप करनेपर भी वह मंत्र उनको सिद्ध नहीं होता ॥८९॥ शिवरहस्य अंश सातमें काशीके माहात्म्य प्रसङ्गमें लिखा है कि जो पुरुष काशीक्षेत्रको और तीर्थोंके बराबर मानते हैं वे कठिन भैरवी यातनाको प्राप्त होते हैं ॥९०॥ शिव दीक्षाको छोड़कर जो काशी-वास करते हैं सो भी भैरवी यातनाको प्राप्त होते हैं ॥९१॥ और शिव पञ्चाक्षर मंत्र (नमः शिवाय) का जप त्याग कर जो काशीमें

मिमां क्रूरां प्राप्नुवन्ति न संशयः ॥ ६२ ॥ शिवमन्त्र जपाशक्ता मुक्ता पूर्वं मुनीश्वराः ॥ नशैवमन्त्रादपरो मन्त्रो मुक्ति प्रदायकः ॥६३॥ शैवमन्त्रं विहायान्यं मन्त्रं यः समुपासते ॥ समणिं करगं त्यक्त्वा काचार्थं यतते ध्रुवम् ॥६४॥ शिवपुराणे ॥ अष्टादशानां वि-द्याना मेतेषां भिन्नवर्त्मनाम् ॥ आदिकर्ता कविः साक्षा-च्छूलपाणि रितिश्रुतिः ॥ ६५ ॥ यस्मिन्देशे महाशैवा स्तिष्ठन्ति शिवपूजकाः ॥ तद्देश वासिनः सर्वे कृतार्था नात्र संशयः ॥६६॥ नृणां मरणकालेतु शिव इत्यक्षर द्वयम् ॥ नायाति सहसा नूनं शङ्करानुग्रहम्बिना ॥६७॥

रहते हैं सो कठिन भैरवी यातनाको प्राप्त होते हैं ॥६२॥ पूर्वकालके ऋषि सब शिव मंत्रका जप करके मुक्त हो गये अतः शिव मंत्रसे परे दूसरा मंत्र मुक्ति देनेवाला नहीं है ॥६३॥ शिव मंत्रको छोड़कर जो अन्य मन्त्रोंका उपासन करते हैं वे हाथमें आये मणिको छोड़कर काँचके लिए उद्योग करते हैं ॥६४॥ शिवपुराणमें लिखा है कि भिन्न-भिन्न रास्ताके कहनेवाले अट्ठारह विद्याओंका आदिकर्त्ता कवि शूलपाणि महादेव हैं ऐसा श्रुति कहती है ॥६५॥ जिस देशमें शिव भक्त शिवपूजन करते निवास करते हों उस देशके वासी पुरुष धन्य हैं ॥६६॥ मनुष्यको मरण कालमें शिव ऐसा दो अक्षरका नाम

तत्रैव वायुसंहितायाम् ॥ मन्त्रे षडक्षरे सूक्ष्मे पञ्चब्रह्म तनुः शिवः ॥ वाच्य वाचक भावेन स्थितः साक्षात्स्वभावतः ॥ ९८ ॥ किं तस्य बहुभिर्मन्त्रैः शास्त्रैर्वा बहुविस्तरैः ॥ यस्योन्नमः शिवायेति मन्त्रोयं हृदि संस्थितः ॥९९॥ तेनाधीतं श्रुतं तेन तेन सर्व मनुष्ठितम् ॥ यस्योन्नमः शिवायेति मन्त्राभ्यासस्थिरीकृतः ॥१००॥ सिद्धशङ्कर तन्त्रे ॥ आदौ नमः प्रयोक्तव्यं शिवायेति ततः परम् ॥ सैषापञ्चाक्षरीविद्या सर्वश्रुति शिरोगताः ॥ १ ॥ उत्तमं रुद्रदैवत्यं मध्यमं विष्णु

शिवके अनुग्रहके बिना नहीं आता ॥९७॥ वहाँ ही वायुसंहितामें लिखा है कि षड्क्षर मन्त्रमें (ॐ नमः शिवाय) वाच्य वाचक (शिव वाच्य हैं वाचक मन्त्र है) भावसे पाँचों रूपसे शिव (तत्पुष १, अघोर २, सद्योजात ३, वामदेव ४, ईशान ५) स्थित रहते हैं ॥९८॥ जिसने ॐ नमः शिवाय इस मन्त्रका अभ्यास स्थिर कर लिया है उसको बहुत शास्त्र अथवा और मन्त्रोंको पढ़नेसे कुछ फल नहीं है ॥९९॥ जिस पुरुषने इस मन्त्रका अभ्यास स्थिर कर लिया है उसने सब-कुछ पढ़ चुका सुन चुका कर चुका ॥१००॥ सिद्ध शङ्करतन्त्रमें लिखा है कि आदिमें नमः देकर अन्तमें शिवाय देनेसे पञ्चाक्षर मन्त्र होता है जो सब श्रुतियोंसे श्रेष्ठ है ॥ १ ॥ जिस

दैवतम् ॥ अधमं ब्रह्मदैवत्यमित्याहुरनुपूर्वशः ॥ २ ॥
शिवरहस्ये सप्तमांशे ॥ तान्त्रिका वैदिकाश्चैव तथा
भागवताजनाः ॥ द्विजाराध्यो महादेवो मनुर्जय्यो
द्विजैस्मृतः ॥३॥ एषएवमहामन्त्रो अविमुक्ते विशेषतः ॥
सतारस्तारको मन्त्रस्सर्वेभ्य उपदिश्यते ॥४॥ नातः
परतरोमन्त्रस्तारकः परमेश्वरः ॥ वर्णेभ्योपि परं सारं
तारं शिवमयं किल ॥५॥ पञ्चाक्षरश्चगायत्री श्रौतं
मन्त्रद्वयं स्मृतम् ॥ उभयोर्दैवतं यस्मान्महादेवो महे-
श्वरः ॥ ६ ॥ विप्रैरेवं सदामन्त्रो जपनीयः प्रयत्नतः ॥

मन्त्रका रुद्र देवता हो वह मन्त्र उत्तम है विष्णु देवतावाला मन्त्र मध्यम है और जिस मन्त्रका ब्रह्मा देवता हो सो अधम है ॥२॥ पुनः शिवरहस्यके अंश सातमें लिखा है कि तान्त्रिक, वैदिक, भागवत (विष्णुभक्त) और द्विजोंसे पूजनीय शिव और पञ्चाक्षर मन्त्र है ॥३॥ इसी मन्त्रको ॐ कारके साथ तारक मन्त्र काशीमें शिव सबको उपदेश करते हैं ॥४॥ इससे परे तारक दूसरा कोई मन्त्र नहीं है वर्ण-वर्णमें जिसके सार वस्तु और शिवमय एही तारक है ॥ ५ ॥ पञ्चाक्षर और गायत्री यह दोनों मन्त्र वैदिक हैं दोनों मन्त्र का देवता महादेव हैं ॥ ६ ॥ ब्राह्मणको यह दोनों मन्त्र जप करना चाहिये स्त्री-शूद्रको अन्तमें नमः देकर जप करना चाहिये

स्त्री-शूद्राणां नमोन्तेन जप्यः पञ्चाक्षरः परः ॥७॥ यथोपनयनेशास्त्रे तथापञ्चाक्षरेपि च ॥ गायत्री वत्स-दाजप्यो मन्त्रराजोयमुत्तमः ॥८॥ नगायत्र्याः परोमन्त्रो नचपञ्चाक्षरात्परः ॥ द्विजानानैत्यकं मन्त्रं सर्वेषां चैव काम्यकम् ॥९॥ तान्त्रिकावैदिकाश्चैव तथा भागवता जनाः ॥ द्विजाराध्यो महादेवो मनुर्जप्यो द्विजैः स्मृतः ॥१०॥ जातिप्रसादजनकौ मन्त्रौ द्वौ शाम्भवौ स्मृतौ ॥ वेदमाताचगायत्री वेदमध्यगतस्स्वयम् तस्मान्मत्रद्वयं विप्रस्सर्वथा श्रुतिमध्यगम् ॥ ११ ॥

"शिवाय नमः" ऐसा कहनेसे पौराणिक हो जाता है ॥७॥ जैसे जनेऊमें गायत्रीका जप करना आवश्यक है वैसे ही पञ्चाक्षर मन्त्र-राजका जप करना भी आवश्यक है ॥८॥ गायत्री तथा पञ्चाक्षरसे परे दूसरा मंत्र नहीं है द्विजोंके लिये नैत्यक (नित्यकर्म) काम्यक (सब कामना देनेवाला) है ॥९॥ तान्त्रिक, वैदिक, वैष्णव, आदि द्विजोंसे पूजनीय और जप करने योग्य यह तन्त्र है ॥१०॥ वेदकी माता गायत्री और वेदके मध्यमें रहनेवाला पञ्चाक्षर ये दोनों शैव मन्त्र द्विजातिको अवश्य जप करने योग्य है ॥ अर्थात् जैसे शैव वैष्णव शाक्त सूर्यभक्त गणेशभक्त आदि किसी देवताका भक्त हों परन्तु सन्ध्या गायत्रीका जप अवश्य करते हैं वैसे ही शिवपूजन पञ्चाक्षरका जप करके तब अपने इष्टदेवका पूजनका अधिकारी होते हैं ॥११॥

महाभारते ॥ कृत्वापि सुमहत्पापं हत्वाच भुवन-त्रयम् ॥ सकृत्पञ्चाक्षरं जप्त्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥१२॥ स्कान्दे ब्रह्मोत्तरखण्डे प्युक्तम् ॥ देवानांपरमो देवो यथावैत्रिपुरान्तकः ॥ मन्त्राणाम्परमोमन्त्र स्तथा-सोयं षडक्षरः ॥१३॥ कैवल्यमार्गदीपोय मविद्यासिन्धु वाडवः ॥ महापातकदावाग्निः सोऽयंमन्त्रः षडक्षरः ॥ ॥१४॥ मन्त्राधिराजराजोऽयं सर्ववेदान्तशेषरः ॥ सर्व-ज्ञानविधानञ्च मन्त्रस्सोऽयं षडक्षरः ॥१५॥ पञ्चब्रह्मो पनिषदि ॥ अवस्थात्रितयाऽतीतं तूरीयम्ब्रसञ्ज्ञितम् ॥

महाभारतमें लिखा है कि महापापोंको किया हो और तीनों भुवनको मारा हो एक दफे पञ्चाक्षर मंत्रका जप कर दे तो उन पापोंसे छूट जाता है ॥१२॥ स्कन्दपुराणके ब्रह्मखण्ड उत्तरभागमें लिखा है कि देवोंमें सबसे श्रेष्ठ जैसे शिव हैं उसी तरह मन्त्रोंमें परम मन्त्र षड़क्षर है ॥१३॥ कैवल्य मार्गका दीप अविद्यारूपी समुद्रका वाड़वा-नल महापातक रूपी वनका दावाग्नि रूप यह षड़क्षर मन्त्र है ॥१४॥ और यह षड़क्षर मंत्र सब मंत्रोंका राजाका भी राजा और वेदान्तका सिर ज्ञानका घर है ॥१५॥ पञ्चब्रह्मोपनिषदमें लिखा है कि जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, इन तीनों अवस्थासे परे तुरीयामे रहनेवाले ब्रह्म ब्रह्मा विष्णु आदि देवोंसे बन्दित और सबका जनक (पिता) सबका ईश

ब्रह्मविष्ण्वादिभिः सेव्यं सर्वेषां जनकः परम् ॥१६॥ ईशानम्परमं विद्या त्प्रेरकं बुद्धिसाक्षिणम् ॥ मायया मोहिताः शम्भोर्महादेवं जगद्गुरुम् ॥१७॥ न जानन्ति सुराः सर्वे सर्वकारणकारणम् ॥ पंचाक्षरमयं शम्भुं परब्रह्मस्वरूपिणम् ॥१८॥ नकारादियकारान्तं ज्ञात्वा- पंचाक्षं जपेत् ॥ सर्वपञ्चात्मकं विद्यात्परब्रह्मस्वरूपि- णम् ॥१६॥ ॐकारमन्त्रवाच्यः शिवएव ॥ तदुक्तम तेजोविन्दुपनिषदि ॥ तेजो विन्दुः परध्यानं विश्वात्म- हृदिसंस्थितम् ॥ अणुवं शाम्भवं शान्तं स्थूलंसूक्ष्म- म्परञ्चयत् ॥२०॥ यस्माद्वाचो निवर्तन्ते अप्राप्यमनसा

सबके बुद्धिको प्रेरणा करनेवाले महादेवको उन्हींके मायासे मोहित होकर देवता सब भी उनको नहीं जानते जो कि सब कारणोंका परम कारण हैं पञ्चाक्षर मन्त्रस्वरूप और परब्रह्मस्वरूप है ॥१६॥१७॥१८॥ नकारसे यकार तक पाँचों अक्षरोंमें पञ्च ब्रह्मस्वरूप शिव रहते हैं ऐसा समझकर जप करना पञ्चब्रह्म १ तत्पुरुष २ अघोर ३ सद्योजात ४ वामदेव ५ ईशान यही पाँच ब्रह्म स्वरूप है ॥१६॥ ॐकार मन्त्रसे शिव कहे जाते हैं सो तेजो विन्दुपनिषद्में लिखा है कि तेजमय परम विन्दुका ध्यान करना जो कि स्थूल और सूक्ष्म दोनोंमें वर्तमान शाम्भव (शिवमय) ॐकार है ॥२०॥ जहाँसे मनके साथ

सह ॥ यन्मौनं योगिभिर्गम्यं तद्भजेत्सर्वदा बुधः ॥२१॥ नारदविन्दुपनिषदि ॥ ततः परतरं शुद्धं व्यापकं निर्मलं शिवम् ॥ सदोदितंपरब्रह्म ज्योतिषामुदयो यतः ॥२२॥ ब्रह्मप्रणवसन्धानं नादोज्योतिर्मयः शिवः ॥ स्वयमाविर्भवेदात्मा मेघापायेऽशुमानिव ॥२३॥ ध्यानविन्दुपनिषदि ॥ अष्टाङ्गञ्चचतुःपादं त्रिस्थानंपञ्चदैवतम् ॥ ॐकारं योन जानाति ब्राह्मणोनभवेत्तु सः ॥२४॥ आत्मानमरणिं कृत्वा प्रणवं चोत्तरारणीम् ॥ ध्याननिर्मथनाभ्यासाद्देवं पश्येन्निगूढ़वत् ॥ २५ ॥ जावालोप-

वचन लौट आता है योगी लोग मौन होकर जिसका ध्यान करते हैं उसीको बुध लोग भी सदा भजन करें ॥२१॥ नारद विन्दुपनिषदमें लिखा है कि ब्रह्म प्रणवके अनुसन्धान करनेसे नाद ज्योतिमय शिव स्वयं आविर्भाव होते हैं शुद्ध व्यापक शिव परब्रह्म प्राप्त होते हैं जैसे मेघके नाश होनेपर सूर्यका प्रकाश होता है ॥२२॥२३॥ ध्यानविन्दुपनिषदमें लिखा है कि आठ अंग चार पाद तीन स्थान पाँच देवतामय ॐकारको नहीं जानता है सो ब्राह्मण नहीं है ॥२४॥ जीवात्माको अरणी (नीचेकी लकड़ी) ॐकारको उत्तरारणी (ऊपरकी लकड़ी) बनाकर ध्यानरूपी मथनीसे मथनेसे देव (शिव) को देखता है देवशब्द शिवको कहता है यह निघण्टुका बचन है ॥२५॥

निषदि ॥ इदम्वैकुरुक्षेत्रं देवानां यजनं सर्वेषां ब्रह्म-सदनं अत्रहि जन्तोः प्राणेषूत्क्रममाणेरुद्रस्तारकम्ब्रह्म-व्याचष्टे येनासावमृतीभूत्वामोक्षीभवति ॥२६॥ अथहैनं ब्रह्मचारिण उचुः किंजप्येनामृतत्वम्ब्रूहिति सहोवाच याग्यल्क्यः शतरुद्रीयेणेत्येतान्येवामृतस्य नामानि एतैर्ह वा अमृतस्य नामानिति ॥ २७ ॥ स्कान्दे-रेवाखण्डे सप्तचत्वारिंशऽध्याये ॥ यथादौ सर्वविद्या नामोंकारः परियशिष्यते ॥ तथादौ सर्व देवानांमादि देवो महेश्वरः ॥२८॥ पाशुपत ब्राह्मोपनिषदि ॥ रुद्रो ब्रह्मोपनिषदोहं स ज्योतिः पशुपतिः प्रण-

जावालोपनिषदमें लिखा है कि कुरुक्षेत्र देवोंका यज्ञ स्थान और जीवोंको ब्रह्म स्थानमें पहुँचानेवाला है वहाँ जो प्राण त्याग करते हैं उनको रुद्र ब्रह्मतारक (ॐ) कारका उपदेश करते हैं जिससे अमृत होकर मोक्ष होता है ॥२६॥ ब्रह्मचारी सब पूछते हैं कि मनुष्य किसके जपसे अमृत होता है तब याग्यवल्क्य बोले कि रुद्राध्यायके जपसे यही अमृतका नाम है ॥२७॥ स्कन्दपुराणके रेवाखण्ड अध्याय सैंतालीसमें लिखा है कि जैसे मन्त्रोंमें आदिमें ॐकार दिया जाता है वैसे ही सब देवोंमें आदि शिव हैं ॥२८॥ पाशुपत ब्रह्मोपनिनिषदमें लिखा है कि रुद्र ही ब्रह्म उपनिषद है और वही पशुपति

वस्तारकः सएवंवेद ॥२६॥ शिवशक्त्यात्मकं रूपं चिन्मयानन्दवेदित्तम् ॥ नादविन्दु कला त्रीणि नेत्र-विश्वविचेष्टितम् ॥३०॥ अमृत नादोपनिषदि ॥ ॐकार रथमारूह्य विष्णुंकृत्वा तुसारथिम् ॥ ब्रह्म-लोकपदान्वेषी रुद्राराधनतत्परः ॥३१॥ महिषमर्दिनी-तन्त्रे वाच्यः सईश्वर प्रोक्तः वाचकः प्रणवस्मृतः वाचकेपरितुष्टेवै वाच्यएवप्रसीदति ॥३२॥ योगशास्त्रे सोहंशब्देनापि शिवएवोच्यते ॥ शिवसंहितायाम् ॥ षट्-शतानिदिवारात्रौ सहस्त्राण्येकविंशतिः ॥ हंसः सोहमि-मंमन्त्रं जीवो जपति सर्वथा ॥३३॥ ब्रह्मविद्योपनि-

ॐकार रूपतारक हैं ॥२६॥ शिवशक्तिमय और चैतन्य आनन्दमय जगतको जो देखते हैं नादविंदु तीन कलाओंसे युक्त ॐकारको जो जानते हैं वे मुक्त होते हैं ॥३०॥ अमृत नादोप-निषदमें लिखा है कि ॐकार रूपी रथपर बैठकर विष्णुको सारथी बनाकर ब्रह्मपद (शिवपद) में पहुँचनेके हेतु रुद्रके पूजनमें तत्पर रहे ॥३१॥ महिषमर्दिनी तन्त्रमें लिखा है ईश्वर (शिव) वाच्य हैं ओंकार उनका वाचक है वाचकके प्रसन्न होनेपर वाच्य प्रसन्न होता है ॥३२॥ योगशास्त्रमें सोहं शब्दसे शिव ही कहे जाते हैं सो लिखा है

षदि ॥ नाभिस्थाने स्थितंविश्वं विशुद्धंतत्वनिर्मलम् ॥ आदित्यमिवदीप्यन्तं रश्मिभिश्चाखिलं शिवम् ॥३४॥ ब्रह्मणोहृदयं स्थानं कण्ठे विष्णुः समाश्रितः ॥ तालुमध्येस्थि तोरुद्रः ललाटस्थो महेश्वरः ॥३५॥ हंसएव परं वाक्यं हंसएवतुवैदिकम् ॥ हंसएव परोरुद्रो हंसएव परात्परम् ॥३६॥ योगतत्वोपनिषदि ॥ व्योमवृत्तञ्च-धूम्रञ्च हकाराक्षर भासुरम् ॥ आकाशे वायुमारोप्य हकारोपरिशङ्करम् ॥३७॥ विन्दुरूपं महादेवं व्योमाकारं सदाशिवम् ॥ शुद्ध स्फटिक संकाशं धृतवालेन्दु

शिव संहितामें कि एक्कईश हजार छः सत्र दफे सोहं इस मन्त्रको हंस (जीव) दिन रातमें जप करता है ॥३३॥ ब्रह्मविद्योपनिषदमें लिखा कि नाभिस्थानमें निर्मल शुद्धतत्व सूर्यके सदृश देदीप्यमान शिव है ॥३४॥ हृदयमें ब्रह्मा कण्ठमें विष्णु तालुमें रुद्र ललाटमें महेश्वर हैं ॥३५॥ सोहंका उलटा हंस परम वैदिक वाक्य है और हंस ही परात्पर रुद्र है ॥३६॥ योगतत्वोपनिषदमें लिखा है कि आकाशवत् गोलाकार धूम्रवर्णाहकार है आकाशमें वायुका आरोपण कर हकारके ऊपर शंकर विन्दुरूप महादेव अर्धचन्द्र रूप सदाशिव जो शुद्ध स्फटिकके सदृश बालचन्द्रमा ललाटमें धारण किये हैं ॥३७॥ और अर्द्धनारीश्वर सब कारणोंका कारण होगी सब उनका ध्यान करके आका-

मौलिनम् ॥३८॥ उमार्द्धदेहं वरदं सर्वकारण कारण-म् ॥ आकाशधारणात्तस्य खेचरत्वंभवेद्ध्रुवम् ॥३९॥ अजपागायत्रीस्तोत्रे ॥ ॐ हंसः शिवः सोहंसः मन्त्रराजायविद्महे ॥ महामन्त्राय धीमहितन्नोहंसः प्रचोदयात् ॥४०॥ हकारं शिवरूपेण सकारं शक्तिरूच्यते ॥ सोहंहंसमिमं मन्त्वं जीवोजपति सर्वदा ॥४१॥ परमात्मा शिवश्चाहं एकं जानामितत्वतः ॥ सोहं हंसमिमं मन्त्वं जीवोजपति सर्वदा ॥४२॥ महावाक्योपनिषदि ॥ सो-हमर्कः परं ज्योतिरर्को ज्योतिरहं शिवः ॥ आत्मज्यो-तिरहं शुक्रः सर्वज्योति रसावदोम् ॥४३॥ अद्वैतामृत

शमें चलनेकी शक्ति प्राप्त करते हैं ॥३८॥३९॥ अजपा गायत्री स्तोत्र में लिखा है कि हंस जो जीव सो शिव है सोहं मन्त्र राजका सदा जप करता है जिससे सोहं पद वाच्य शिव हमको शुभ कर्म्मोंमें प्रेरणा करें ॥४०॥ हकार शिवरूप सकार शक्तिरूप है इस भावसे सोहं इस मन्त्रको जीव सदा जप करता है ॥४१॥ वस्तुतः परमात्मा शिव ही मैं हूँ दूसरा नहीं है इस भावसे जीव सोहं इस मन्त्र सदा जप करता है ॥४२॥ महावाक्योपनिषदमें लिखा है कि सोहं सूर्य्यमें रहनेवाली परमज्योति शिव हैं और वही ज्योति मैं हूँ आत्मज्योति सर्वज्योति रूपमें हूँ ऐसा योगी भावना करे ॥४३॥ अद्वैतामृत

वर्षिण्याम् ॥ देहोदेवालयः प्रोक्तः सजीवः केवलः शिवः ॥ त्यजेदज्ञाननिर्म्माल्यं सोहंभावेन पूजयेत् ॥ ॥४४॥ हठयोगप्रदीपिकायां चतुर्थोपदेशे ॥ द्वासप्तति-सहस्राणि नाडीद्वाराणिपञ्जरे ॥ सुषुम्नाशाम्भवीशक्तिः शेषास्त्वेवनिरर्थिका ॥४५॥ वेदशास्त्रपुराणानि सामा-न्यगणिका इव ॥ एकैवशाम्भवी मुद्रा गुप्ताकुलवधू-रिव ॥४६॥ दिवानपूजयेल्लिंगं रात्रौनैवच पूजयेत् ॥ सर्वदा पूजयेल्लिंगं अमृतश्रावितद्भवेत् ॥४७॥ ब्रह्मग्रन्थे-र्यदाभेदोह्यानन्दः शून्यसम्भवः ॥ विष्णुग्रन्थेस्ततोभेदा-

वर्षिणीमें लिखा है कि यह देह शिवालय है जीव शिव है अज्ञानरूपी निर्म्माल्यको त्यागकर सोहं भावसे पूजन करे ॥४४॥ हठयोग प्रदीपि-काके चतुर्थ उपदेशमें लिखा है कि इस देहमें बत्तीस हजार नाड़ी हैं उसमें एक सुषुम्ना शिवकी है बाकी सब व्यर्थ हैं ॥४५॥ वेद-शास्त्र पुराणादि सब सामान्य गणिकाके सदृश हैं एक शाम्भवी मुद्रा कुलवधूके सदृश गुप्त हैं ॥ ४६ ॥ दिन-रात्रिका खंडित पूजा छोड़कर अखण्डित ध्यान पूजा करनेसे अमृत श्राव होता है ॥४७॥ योगियोंको अभ्यासकालमें प्राणायाम करनेपर ब्रह्मग्रन्थि (कटिके जोड़)को वायु भेदन करता है तब शून्याकार आनन्द होता है पुनः विष्णुग्रन्थि (गरदनके जोड़) को

त्परमानन्दसूचकः ॥४८॥ रुद्रग्रन्थियदाभित्वा शर्वपीठ-गतोऽनिलः ॥ एकीभूतं तदाचित्तं राजयोगसमाधिना ॥४६॥ योगचूडामणि उपनिषदि ॥ वद्धपद्मासनो योगी नमस्कृत्यशिवं गुरुम् ॥ नासाग्रदृष्टिरेकाकी प्राणायामं समभ्यसेत् ॥ ५० ॥ निर्वाणोपनिषदि ॥ शिवं तुरीयं यज्ञोपवीतं तन्मयाशिखा ॥५१॥ मण्डल-ब्राह्मणोपनिषदि ॥ लक्ष्येन्तर्वाह्यायां दृष्टौ निमेषोन्मेष वर्जितायाञ्च इयं शाम्भवी मुद्राभवति सर्वतन्त्रेषु गोप्या महाविद्या भवति तज्ज्ञानेन संसारनिवृत्तिः तत्पूजनम् मोक्षफलदम् ॥५२॥ अद्वयतारकोपनिषदि॥

जब वायु भेदन करता है तब परमानन्द होता है ॥४८॥ वाद रुद्र-ग्रन्थि (कपालके जोड़) को जब वायु भेदन करके शिव पीठमें पहुँचता है तब राजयोग समाधिमें अद्वैत हो लीन हो जाता है ॥४६॥ योग चूड़ामणि उपनिषदमें लिखा है कि पद्मासन लगाकर योगी शिव और गुरुको नमस्कार कर नासिकाके अग्रभागमें दृष्टिकर प्राणायाम करे ॥५०॥ निर्वाणोपनिषदमें लिखा है कि शिव तुरीय यज्ञोपवीत है और उन्हींमें शिखा है ॥५१॥ मण्डल ब्राह्मणो उपनिषदमें लिखा है कि लक्ष्य भीतर दृष्टि बाहर निमेषोन्मेषसे वर्जित (पलक न गिरे) यही शाम्भवी मुद्रा है सब तन्त्रोंमें गोप्य महाविद्या इसके ज्ञानसे संसार

अन्तर्वाह्यलक्ष्ये दृष्टौ निमेषोन्मेषवर्जितायां सत्यां शाम्भवीमुद्रा भवति ॥ ५३ ॥ पुरुषशब्देनापि शिव एवोच्यते ॥ तदुक्तम् ॥ ब्रह्म गीतायाम् ॥ पुरुषोनाम सम्पूर्णः शिवः सत्यादिलक्षणः ॥ साम्बमूर्तिधरोनान्यो रुद्रोविष्णु रजोऽपि वा ॥ ५४ ॥ ब्रह्माण्ड पुराणे ॥ शिवोहियज्ञपुरुषो यज्ञकर्म फलप्रदः ॥ अनादृत्यशिवं यष्टुं विनिपातो भवत्यलम् ॥५५॥ तथा भगवद्गीताया मर्जुनम्प्रति श्रीकृष्णेनोक्तम् ॥ पुरुषः सः परः पार्थः भक्त्या लभ्यस्त्वनन्यया ॥ इत्यादि ॥ ५६ ॥ शिव

नष्ट हो जाता है और इसके पूजनसे मोक्ष फल मिलता है ॥५२॥ अद्वय तारकोपनिषदमें लिखा है कि अन्तर दृष्टि बाहर लक्ष्य पलक न गिरे यही शाम्भवी मुद्रा है ॥५३॥ पुरुष शब्दसे शिव कहे जाते हैं सो लिखा है ब्रह्मगीतामें ॥ सत्य ज्ञान अनन्त एतादृश लक्षण-युक्त साम्बशिव पुरुष नामसे कहे जाते हैं रुद्र ब्रह्मा विष्णुको पुरुष शब्द नही कहता है ॥५४॥ ब्रह्माण्डपुराणमें लिखा है कि यज्ञका फल देनेवाले शिव ही यज्ञ पुरुष है उनको त्यागकर यज्ञ करनेवाले का नाश होता हैं ॥५५॥ भगवद्गीतामें अर्जुनके प्रति श्रीकृष्णने कहा है कि हे अर्जुन ! वह परपुरुष अनन्य भक्तिसे मिलता है इत्यादि ॥ ५६ ॥ शिवपुराणमें लिखा है कि शिव विश्वेश्वर

पुराणे ॥ अन्तर्यामीसविश्वेशः सर्वेषामेव देहिनाम् ॥ भोक्ताहिसर्वयज्ञानां शङ्करः परमार्थतः ॥५७॥ नारायणोपनिषदि ॥ सर्वोवैरुद्रस्तस्मैरुद्राय नमोऽस्तु पुरुषोहवै-रुद्रस्तन्महो नमोनमः ॥५८॥ पाशुपत ब्रह्मोपनिषदि ॥ समस्तयागानां रुद्रः पशुपतिः कर्ता रुद्रोयागदेवः विष्णुरध्वर्युः होतेन्द्रोदेवता यज्ञभुग्मानसं माहेश्वरं ब्रह्म ॥५९॥ भगवान् शब्देनापि शिव एवोच्यते ॥ तदुक्तं शिवरहस्ये सप्तमांशे ॥ स्तोतव्योऽति प्रयत्नेन मुक्त्यर्थिभिर्निराकुलैः योवै रुद्रः सभगवानितिवेदपुनः पुनः ॥६०॥ भ्रान्त्यापि येतु वदिष्यन्ति रुद्रोनभगवा-

अन्तर्यामी सब यज्ञोंका भोक्ता हैं ॥५७॥ नारायणोपनिषदमें लिखा है कि सर्व नाम रुद्रका है और महापुरुष नाम रुद्रका है उनको मैं नमस्कार करता हूँ ॥५८॥ पाशुपत ब्रह्मोपनिषदमें लिखा है कि सब यज्ञोंका रुद्र पशुपतिकर्ता है और रुद्र ही यज्ञका देवता है विष्णु अध्वर्जु इन्द्र होता है यज्ञका भोक्ता सच्चिदानन्द शिव महेश्वर ब्रह्म हैं ॥५९॥ भगवान शब्द शिवको कहता है सो लिखा है शिवरहस्यके अंश सातमें कि ॥ मुक्तिके इच्छावाले पुरुषको यत्नपूर्वक स्वस्थ-चित्तसे रुद्रका स्तुति करना चाहिये क्योंकि जो रुद्र है वही भगवान है ऐसा बार-बार जानना ॥६०॥ भ्रान्तिसे भी रुद्र भगवान नहीं हैं

निति ॥ देयैवतन्मुखेविष्ठा वेदमार्गप्रवर्तकैः ॥६१॥ भगवान्रुद्रएवेति नवदिष्यन्ति ये जडाः ॥ देयैवतन्मुखेविष्ठा वेदमार्गप्रवर्तकैः ॥६२॥ कलौभ्रान्तावष्यिन्ति वहवोमानवाधमाः ॥ रुद्रान्योऽप्यस्ति भगवानितिमाया विमोहिताः ॥ नश्यत्येकाब्रह्महत्या वाजिमेधेन च द्विजाः ॥ शिवनामाग्निहोत्रेणदह्यन्ते पापकाननम् ॥६३॥ मन्त्रिकोपनिषदि ॥ कालः प्राणश्च भगवान्मृत्युःशर्वो महेश्वरः ॥ उग्रोभवश्चरुद्रश्च ससुरः सासुरस्तथा ॥६४॥ अद्भुत रामायणेत्रयोदशेसर्गे योगेश्वरोऽसौभगवान्महादेवो महाप्रभुः॥ महत्वात्सर्वसत्वानां परत्वात्परमेश्वरः ॥ (ऋृ० पं० ४) अथर्वशिरउपनिषदि ॥ ततो हवैदेवा

ऐसा जो मनुष्य कह सकते हैं वैदिक (वेदके कहे मोताबिक) चलनेवाले पुरुषोंको उनके मुखमें मैला डाल देना चाहिए ॥६१॥ रुद्र भगवान नहीं है ऐसा जो कहते हैं वेद मार्गानुगामी पुरुषोंको उनके मुखमें मैला डाल देना उचित है ॥६२॥ मायासे मोहित कलिकालमें बहुत अधम पुरुष रुद्रसे अन्य देवोंको भगवान कहेंगे ॥६३॥ अश्वमेध यज्ञ करनेसे एक ब्रह्म हत्या नष्ट होता है शिव नाम जप रूपी अग्निहोत्रसे पापोंका वन भस्म हो जाता है ॥६४॥ मन्त्रिकोपनिषदमें लिखा है कि काल प्राण भगवान मृत्यु सर्व महेश्वर हैं और उग्र

रुद्रमपृच्छन् तेदेवारुद्रमपश्यन् तेदेवारुद्रमध्यायन् ततो-
देवा उदूर्ध्ववाहवोरुद्रंस्तुवन्ति ॐयोवैरुद्रः सभगवान्
यश्चब्रह्मातस्मै वैनमोनमः ॥६५॥ अथकस्मादुच्यते रुद्रः
यस्मादृषिभिर्नान्यैभक्तैर्द्रुतमस्यरूपमुपलभ्यते तस्मादु-
च्यते रुद्रः अथकस्मादुच्यते ईशानः यः सर्वान्देवानी-
शते ईशनीभिर्जननीभिश्च परमशक्तिभिः ॥ ६६ ॥
ब्रह्माण्डपुराणे वरुणः ॥ त्वमादिस्त्वमनादिश्च त्वं प्रभुः
सर्वतोमुखः ॥ त्वमात्मा त्वं महादेवस्त्वं यज्ञस्त्वं
सनातनः ॥६७॥ अथान्यदप्युक्तम् ॥ रोदयत्येवयः

भावसे रुद्र सुर असुर वही हैं ॥ ६५ ॥ अद्भुत रामायणके सर्ग
तेरहमें लिखा है कि सब योगोंका ईश्वर भगवान् महादेव
ही प्रभु है सबसे महान सबसे है अतः परमेश्वर कहे जाते हैं ॥
अथर्व सिर उपनिषदमें लिखा है कि सब देवतागण रुद्रका ध्यान कर
देखते भये और पूछते भये उर्ध्व वाहू होकर रुद्रका स्तुति किये कि जो
रुद्र वही भगवान और वही ब्रह्मा है उनको हम सब नमस्कार करते हैं
॥६६॥ (अ्०पं० ५)रुद्र उनका क्यों नाम हुआ, ऋषि सब और भक्तगण
शीघ्र उनके रूपको नहीं प्राप्त करते हैं अतः उनका रुद्र नाम है ईशान
क्यों कहे जाते हैं जो सब देवतोंको अपने परम शक्तिसे पालन करते
हैं अतएव ईशान है ॥६७॥ ब्रह्माण्ड पुराणमें वरुणका वचन है

सर्वान्स्वस्मिन्भक्ति विवर्जितान् ॥ अतो रुद्रस्य रुद्रत्व-
म्प्रोक्तञ्चेदं महर्षिभिः ॥ ६८ ॥ आदित्योपपुराणे ॥
नामानि च महेशस्य गृणंत्यज्ञानतोपि ये ॥ तेषामपि
शिवोमुक्तिर्ददाति किमतः परम् ॥ ६९॥ ये स्मरन्ति
महादेवं अपिपापरता अपि ॥ ते विज्ञेयामहात्मानः सत्यं
सत्यं ब्रवीम्यहम् ॥७०॥ काशीखण्डे विष्णुवचनम् ॥
कृत्वाऽपि सुमहत्पापं त्वां यः स्मरति भावतः ॥
आधारं जगतामीशं तस्यपापं विलीयते ॥७१॥ तव-
नामानुरक्तावाक् पुंसोयस्य जगत्पते ॥ अप्यद्रिकूट-
तुलितं नैनस्तमनुवाधते ॥७२॥ ईशान संहितायाम् ॥

कि हे शिव ! आदि-अनादि सर्वतोमुख प्रभु आत्मा यज्ञरूप महादेव सनातन आप ही हैं ॥६८॥ और भी किसीने कहा है कि अपने भक्तिसे विमुख जनोंको रोलाते हैं अतः उनका रुद्र नाम है ऐसा महर्षियोंका वचन है ॥ ६९ ॥ आदित्य उपपुराणमें लिखा है कि अज्ञानसे भी जो शिव नामको कहते हैं उनको शिव मुक्ति देते हैं ॥७०॥ महादेवको पापमें रत होकर भी जो सदा स्मरण करते हैं वह महात्मा हैं सत्य-सत्य मैं कहता हूँ ॥७१॥ काशीखण्डमें विष्णुका वचन है कि जगतका आधार शिवको प्रेमपूर्वक स्मरण करनेसे महापाप भी नष्ट हो जाते हैं ॥७२॥ हे जगतपति शिव !

यमम्प्रति शिवः ॥ महादेवादि शब्दस्तु जिह्वाग्रे यस्य वर्तते ॥ ममप्रियतरो ह्येते पूज्यास्सर्वे त्वयाह्ययम ॥७३॥ देवीभागवते अष्टमस्कन्दे षट्त्रिंशत्यध्याये यमवाक्यम् ॥ भीताः शिवोपासकेभ्यो वैनतेयादि वोरगाः ॥ स्वदूतं पाशहस्तं च गच्छन्तं वारयाम्यहम् ॥७४॥ (अ० पं० ५) शिवगीतायां शिववाक्यम् ॥ आश्चर्य्योवाभये शोके क्षुतेवाममनामयः ॥ व्याजेनवास्मरेद्यस्तु सयाति परमांगतिम् ॥७५॥ शिवपुराणे ॥ अपवित्रः पवित्रोवा सर्वावस्थांगतोऽपि वा ॥ यस्मरेच्छिवमीशानं सवाह्याभ्यन्तरः शुचिः ॥७६॥ शिवरहस्ये ॥ शिवनामामृता-

आपके नाममें रत पुरुषोंको पहाड़के सदृश पाप भी नहीं बाधा देता ॥७३॥ ईशान संहितामें यमके प्रति शिवका वचन है कि महादेव शङ्कर शिव आदि हमारा नाम जिसके जिह्वाके अग्रभागमें सदा वर्तमान रहे वह हमारा प्रिय है उसकी पूजा करना ॥७४॥ देवी भागवत स्कन्द आठ अध्याय छत्तीसमें यमका वचन अपने दूतोंके प्रति है कि हे दूतो ! जैसे गरुड़से सर्प भागते हैं वैसे ही शिवोपासकोंसे दूर ही रहना (अ० पं० ३) ॥ ७५ ॥ शिवगीतामें शिवका वचन है कि आश्चर्यसे भयसे क्षोभसे भी शिव नामको जो कहते हैं सो परमगतिको जाते हैं ॥७६॥ शिवपुराणमें लिखा है कि शुद्ध अथवा

पुष्टरसनाः शिवपूजकाः ॥ शिवध्यानरतानित्यं सन्ति धन्याः क्वचित् क्वचित् ॥७७॥ यन्नामसंकीर्तनमेकमेव विनाशयत्याशु महाघसंघम् ॥ तं देवमिड्यं शरणं ब्रजामि ब्रह्मेन्द्रविष्ण्वादिसुरैकवन्द्यम् ॥ ७८॥ यन्नाममात्रोच्चरणेन सद्यो धन्याभवन्त्ये वहि पापिनोऽपि ॥ तन्देवमिड्यं शरणम्ब्रजामि० ॥७९॥ स्मर्तव्यः शङ्करोतित्यं शङ्करोऽतीवशङ्करः ॥ शंनामानल्पमानन्द मनिर्वाच्यमनामयम् ॥८०॥ सततं नामजिह्वाग्रे शङ्करेत्यस्ति यस्य सः ॥ दुःखभाग्नसभवति सत्यं सत्यं न

अशुद्ध किसी हालतमें जो शिवका स्मरण करते हैं वे बाहर-भीतर शुद्ध हो जाते हैं ॥७७॥ शिवरहस्यमें लिखा है कि शिव नाम रूपी अमृतसे जो पुष्ट हैं और जिनका जिह्वा सदा शिवनामको स्मरण करती है सो धन्य है और ऐसे पुरुष क्वचित कदाचित् (कोई कोई जगह) मिलते हैं ॥७८॥ जिनके नामका स्मरण करनेसे पापोंका समूह (ढेरी) नष्ट हो जाते हैं ऐसे शिवके शरणमें मैं जाता हूँ जो ब्रह्मा विष्णु आदि देवोंसे पूजनीय हैं ॥७९॥ और जिनका नाम स्मरण करता हूँ जो ब्रह्मा विष्णु आदि देवोंसे वन्दनीय हैं ॥७९॥ अनिर्वचनीय (वचनसे नहीं कहे जाते) और कल्याण देनेवाले शिवका नित्य स्मरण करना चाहिये ॥८०॥ निरन्तर जिसके जीभके

संशयः ॥८१॥ शिवनामसमंवस्तु न दृष्टं क्वापि न श्रुतम् ॥ सर्वरत्नमिदं नूनं नामरत्नमनुत्तमम् ॥८२॥ नित्यंकण्ठेधृतोयेन शिवनाम महामणिः ॥ स नीलकण्ठो भूत्वान्ते नीलकण्ठे विलीयते ॥८३॥ परब्रह्मेति विज्ञेयं शिव इत्यक्षरद्वयम् ॥ तद्ब्रह्मेति विदित्वैव तदुपास्यं मुमुक्षुभिः ॥ ८४ ॥ महादेव महादेव महादेवेत्ययं ध्वनिः ॥ अपमृत्युहरो नूनं कालमृत्योश्चरक्षकः ॥८५॥ महादेव महादेवेत्युच्चरन्नियतेन्द्रियः ॥ मृत्युंनगणयत्येव सत्यं सत्यं मयोच्यते ॥८६॥ कोटयोब्रह्महत्यानामगम्यागमकोटयः ॥ सद्यः प्रलयमायान्ति

अग्रभागमें शङ्कर ऐसा नाम रहता है वह कभी दुःख भागी नहीं होता यह सत्य-सत्य जानना ॥८१॥ शिव नामके सदृश रत्न वस्तु दूसरा नहीं है सब नामोंमें रत्न है ॥८२॥ शिव नाम महामणिको जिसने कण्ठमें धारण किया सो नीलकण्ठ होकर शिवमें लय होता है ॥८३॥ शिव दो अक्षरपर ब्रह्म हैं ऐसा समझकर मोक्षके इच्छावाले उपासना करें ॥८४॥ महादेव नाम तीन बार उच्चारण करनेसे अपमृत्यु अकाल मृत्युसे रक्षा होती है ॥८५॥ इन्द्रियोंको संयम कर महादेव नामको जो जपते हैं वह मृत्युको कुछ नहीं समझते ऐसा सत्य जानना ॥८६॥ कोटिहों ब्रह्म हत्या और अगम्यागमन कोटिहों

महादेवेति कीर्तनात् ॥ ८७ ॥ शङ्कर संहितायाम् ॥ उच्चरन्तिहयेमर्त्या शिवनामामृतोपमम् ॥ ज्ञानतोऽज्ञानतोवापि तेषां नास्तिपुनर्भवः ॥ ८८ ॥ केदारखण्डे ॥ हत्वाभित्वाच भूतानि भुक्त्वाचान्यायतोऽपि वा ॥ शिवमेकं सकृत्स्मृत्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ८९ ॥ ब्रह्माण्डपुराणे ॥ यश्चिन्तयति पुण्यात्मा शिवपादाब्ज-मव्ययम् ॥ ब्रह्महत्याकृतम्पापं दहत्याशु न संशयः ॥९०॥ श्रुतान्यखिल पापानि भूयोजन्मनि जन्मनि ॥ मेरुमन्दरतुल्यानि नश्यन्तीशेसुतोषिते ॥९१॥ वायु संहितायाम् ॥ प्रसङ्गात्कौतुकाल्लोभाद्भयादज्ञानतोऽपि

नष्ट हो जाते हैं महादेव नाम उच्चारण करनेसे ॥८७॥ शङ्कर संहितामें लिखा है कि जो पुरुष जानकर अथवा अनजानसे शिव नामको जपते हैं उनका पुनर्जन्म नहीं होता ॥ ८८ ॥ केदारखण्डमें लिखा है कि जीवोंको काटे मारे और अभोज्य भोजन करे और एक दफे भी शिव नामका उच्चारण करे तो सब पापोंसे छूट जाता है ॥८९॥ ब्रह्माण्डपुराणमें लिखा है कि जो पुण्यात्मा पुरुष शिव-चरण कमलका ध्यान करते हैं उनका ब्रह्महत्या ऐसा घोर पाप छूट जाता है ॥९०॥ शिवके प्रसन्न होनेपर सुमेरु मन्दराचलके सदृश पाप भी नष्ट हो जाते हैं ॥९१॥ वायुसंहितामें लिखा है कि

वा ॥ हरइत्युच्चरन्मर्त्यः सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥९२॥
महाभारतेऽपि ॥ आदरेणयथास्तौति धनवन्तंधनेच्छया ॥
तथाचेद्विश्वकर्तारं कोनमुच्येतबन्धनात् ॥ ९३ ॥
महेश्वरखण्डान्तर्गतकेदारखण्डे पञ्चमाध्याये ॥ पुराकृत-
युगेह्यासीदिन्द्रसेनोनराधिपः ॥ परस्त्री लम्पटोऽत्यन्त
परद्रव्येषु लोलुपः ॥९४॥ ततः कालेन महतापञ्चत्वं
प्रापदुर्मतिः ॥ तदायाम्यैश्च नीतोऽसौ इन्द्रसेनोदुरात्म-
वान् ॥ ९५ ॥ दूतान्संभर्त्सयामास मुक्त्वा प्रोवाच
धर्मराट् ॥ आहरप्रहरस्वेति उक्तं चेदं यतस्त्वया ॥९६॥

प्रसङ्गसे खेलमें अथवा लोभसे भयसे अनजानसे भी जो शिवनामको उच्चारण करते हैं वह सब पापोंसे छूट जाते हैं ॥९२॥ महाभारतमें लिखा है कि धनके इच्छावाले पुरुष जैसे धनी पुरुषोंका स्तुति करते हैं वैसे ही यदि विश्वकर्त्ता (शिव) का स्तुति करें तो क्यों नहीं मुक्त हो जाय ॥ ९३ ॥ महेश्वरखण्डके अन्तर्गत केदारखण्डके पाँचवाँ अध्यायमें लिखा है कि सतयुगमें इन्द्रसेन नामसे एक राजा हुआ जो पर-स्त्री लम्पट द्रव्य लोभी सब पथिकोंका द्रव्य हरण करने-वाला रहा ॥९४॥ कुछ कालके बाद जब मरा यमदूतोंने यमके पास ले गये ॥९५॥ यमने दूतोंको डाट कर कहा कि पथिकोंके द्रव्य हरनेके समय हरो, ऐसा शब्द तुमने जो कहा है उससे पवित्र

तेनकर्मविपाकेन सदा पूतोऽसिमानद ॥ तस्मात्त्वंगच्छ कैलाश पर्वतं शङ्करं प्रति ॥९७॥ महाभारते शान्ति पर्वणि नारायण शब्दस्यार्थः ॥ नराज्जानाति तत्वानि नाराणीति ततो विदुः ॥ तान्येवत्वानयत्येव तेन नारायणः स्मृतः ॥९८॥ नारायणः परोधर्मो पुनरावृत्ति दुर्लभः ॥ प्रवृत्तिलक्षणश्चैव धर्मोनारायणः स्मृतः ॥९९॥ अन्यत्रापि ॥ प्रवृत्तिलक्षणो धर्मो वासुदेव इतीरितः ॥ निवृत्ति लक्षणोधर्मः सदाशिव इतीरितः ॥१००॥सूत संहिता॥ वासुदेवशब्दस्यार्थस्तु सूत संहितायाम् ॥ वसत्यद्धातुसर्वत्र वासुः प्रोक्तः सदा-

हो कैलाशमें शङ्करके पास जावो ॥९६॥९७॥ महाभारतके शान्तिपर्वमें नारायण शब्दका अर्थ लिखा है कि नर तो ईश्वरसे उत्पन्न तत्व जलको नारायण कहते हैं उसमें अयन (घर) जिसका नारायणका उपासना परम धर्म है जो पुनरावृत्तिसे रहित है, प्रवृत्ति लक्षण रूप (संसारी कामनाओंको देनेवाला है) ॥९८॥९९॥और भी किसीने कहा है कि प्रवृत्ति लक्षणाधर्म वासुदेव हैं निवृत्ति लक्षण धर्म सदाशिव हैं ॥१००॥ सूत संहितामें वासुदेव शब्दका अर्थ लिखा है कि कैलाशमें जो वसे वही वासु शिव हैं वही देव हैं जिससे उनको

शिवः ॥ सएवदेवोयस्याऽस्ति वासुदेव इतीरितः ॥१॥
राधातन्त्रे द्वितीयपटले ॥ हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण
कृष्ण हरे हरे ॥ हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ॥२॥
हकारञ्च सुरश्रेष्ठ शिवः साक्षान्न संशयः ॥ रेफञ्च
त्रिपुरादेवी दशमूर्ति मयीसदा ॥ ३ ॥ एकारञ्च भग-
स्विद्यात्साक्षाद्योनिस्तपोधन ॥ ककारं कामदा काम
रूपिणीशक्तिरीरिता ॥ ४ ॥ ऋकारञ्च सुतश्रेष्ठ
श्रेष्ठाशक्तिरितीरिता ॥ खकारञ्चन्द्रमादेवः कलाषोडश
संयुतः ॥५॥ णकारञ्च सुतश्रेष्ठ साक्षान्निर्वृत्तिरूपिणी ॥
हरेरामेतिच वदन्साक्षाज्योतिमयीपरा ॥ ६ ॥ रेफञ्च
त्रिपुरासाक्षादानन्दामृतसंयुता ॥ मकारञ्च महामाया

वासुदेव कहते हैं ॥१॥ राधातन्त्रमें हरे कृष्ण और हरे रामका
अर्थ लिखा है ॥ २ ॥ हरे कृष्णका अर्थ है शिव रकार दशमहा-
विद्या रूप एकार योनिरूप है ककार काम रूपिणी शक्ति ऋकार
श्रेष्ठा शक्ति खकार षोडश कलायुक्त चन्द्रमा णकार निवृत्ति रुपिणी
शक्ति है हरे कृष्णका अर्थ हुआ ॥३॥४॥५॥६॥ हरे रामका
अर्थ लिखते हैं रकार त्रिपु आनन्दामृत शिवके साथ मकार महामाया

नित्योक्तारुद्ररूपिणी ॥ ७ ॥ रामशब्दस्यार्थस्तु पाद्मे ॥ रकारः शङ्करस्साक्षान्मकारः शक्ति रुच्यते ॥ शिव शक्त्यात्मको मन्त्रोराम इत्यभिधीयते ॥८॥

इति श्रीमद्योगिवर्य्यविप्रराजेन्द्र स्वाम्यात्मजसंगृहीते सिद्धान्तरत्नाकरे तृतीयखण्डे द्वितीयस्तरङ्गः

रुद्रके साथ है ॥७॥ पद्मपुराणमें राम शब्दका अर्थ लिखा है कि रकार शिव मकार शक्ति है शिव शक्यात्मक राम शब्द है ॥८॥

इति श्री भाषाटीकायां तृतीयखण्डे द्वितीयस्तरङ्गः ॥

तृतीयस्तरंगः

श्रीगणेशाय नमः ॥ मङ्गलं दिशतुमे विनायको मङ्गलं दिशतुमे सरस्वती ॥ मङ्गलं दिशतुमे जनार्दनो मङ्गलं दिशतुमे सदाशिवः ॥ शान्तं पद्मासनस्थं शशधर मुकुटं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम् ॥ शूलं वज्रञ्च खड्गं परशुमभयदं दक्षिणाङ्गे वहन्तम् ॥ नागं पाशंच घटां डमरूकसहितं सांकुशं वामभागे विश्वाद्यं विश्व-वीजं निखिलभयहरं पार्वतीशं नमामि ॥१॥ हरिरूपी महादेवो लिङ्गरूपी जनार्दनः ॥ ईषदप्यन्तरं नास्ति

श्रीगणेशाय नमः ॥ शक्तिरूप श्रीविष्णुको, बार-बार शिर नाय। शक्तिमान सह एकता, आगे कहों बुझाय ॥ गणेश सरस्वती और विष्णु सदा शिव मङ्गल करें ॥ शान्त पद्मासनपर वैठे चन्द्रमा ललाटमें पाँच मुख तीन नेत्र दश बाहू शूल १ वज्र २ खड्ग ३ परशु ४ अभय ५ दक्षिण बाहूमें नाग १ पाश २ घंटा ३ डमरु ४ अंकुश ५ वामबाहूमें धारण किये विश्वका आदि विश्वका वीज सब भय हरनेवाले पार्वती पतिको मैं नमस्कार करता हूँ ॥१॥ हरिरूप महादेव लिङ्गरूप विष्णु हैं कुछ भी भेद नहीं है भेद माननेसे

भेदकृन्नरकं व्रजेत् ॥२॥ हरिहरप्रकृत्येकाप्रत्ययभेदाद्-
द्विधाभाति ॥ कश्चिन्मूढोभेदं कलयति विनाशास्त्रम्
॥३॥ अथविष्णु शिवयोरेकत्वं पुराणवेदोपनिषदादौ
शक्ति शक्तिमत्वेन प्रदर्शितम् ॥ तदुक्तम् कौर्म्मे
श्रीमहादेव उवाच ॥ एकास्सर्वान्तराशक्तिः करोति
विविधं जगत् ॥ आस्थायब्रह्मणोरूपं सन्मयीमदधिष्ठि-
ता ॥४॥ अन्याचशक्तिर्विपुला संस्थापयतिमेजगत् ॥
भूत्वानारायणो नन्तोजगन्नाथो जगन्मयः ॥५॥ तृती-
या महती शक्तिर्निहन्ति सकलं जगत् ॥ तामसीमे
समाख्याता कालरुद्रस्वरूपिणी ॥६॥ तत्रैव श्रीकृष्ण

नरक होता है ॥२॥ हरिहर शब्दमें प्रकृति एक है प्रत्यय दो हैं
इससे भिन्न भासमान होता है इप्रत्ययसे हरि हुआ अप्रत्यसे हर
हुआ जो भेद मानते हैं वे मूर्ख हैं ॥३॥ शिव विष्णुमें एकता वेद
उपनिषद पुराणोंमें लिखा है सो किस प्रकार एकता है इस बातको
सप्रमाण मैं आगे देखता हूँ ॥ कूर्म्म पुराण उत्तरार्द्ध अध्याय चौथामें
श्रीमहादेवजीका वचन है कि एक हमारी शक्ति ब्रह्मारूप धारण कर
हमारे वश हो सृष्टि करती है ॥४॥ और दूसरी शक्ति नारायण
जगन्नाथ होकर पालन करती है ॥५॥ तीसरी महान् एक हमारी
शक्ति कालरुद्र होकर संहार करती है ॥६॥ पुनः वहाँ ही

वाक्यम् ॥ सदालिंगेहितायैषां लोकानाम्पूजयेच्छिवम् ॥ योहंतल्लिङ्गमित्याहुर्वेदवादविदो जनाः ॥ ७ ॥ ततोहं देवमीशानं पूजयाम्यात्मवैभवात् ॥ तस्याहं परमामूर्ति-स्तन्मयोहं न संशयः ॥८॥ ऋग्वेदेऽपि श्लोकरूपेण श्रूयते ॥ एकापिशक्तिः परमेश्वरस्यभिन्नाचतुर्द्धा व्यव-हारकाले ॥ भोगे भवानी पुरुषेच विष्णुः क्रोधेचकाली समरेच दुर्गा ॥९॥ तथास्कान्देऽप्युक्तम् ॥ शिवस्यार्द्धे स्मृतागौरी तदर्द्धोहरिरिष्यते ॥ तदर्द्धार्द्धेण संयुक्तो हरिरर्ध शरीरभाक् ॥१०॥ वदर्य्यास्थं हरिगौंरीरूपं कुर्वन्पतिं शिवः ॥ तद्वीर्यरजसोद्भूतः शालग्रामोगलो-

श्रीकृष्णका वचन है कि लोकके हितार्थ सदा मैं शिवलिङ्गका पूजन करता हूँ जो लिङ्ग है सो मैं हूँ ऐसा वेद जाननेवाले कहते हैं ॥७॥ अतः ईशान (शिवका) मैं अपने विभवके माफिक पूजन करता हूँ और उनका परमामूर्ति (परमशक्ति) मैं हूँ ॥८॥ ऋग्वेदमें श्लोक रूपसे लिखा है कि शिवकी एक ही शक्ति काम करने हेतु चार रूपको धारण करती है भोगमें भवानी पुरुषमें विष्णु क्रोधमें काली समरमें दुर्गा ॥९॥ स्कन्दपुराणमें लिखा है कि शिवके आधा गौरी गौरीके आधा विष्णु हैं अतः शिवके अर्द्धार्द्ध शरीरका भागी विष्णु हैं ॥१०॥ वदरिकाश्रममें गौरी रूप धारणकर विष्णु भगवानने

धृतः ॥११॥ शालग्रामे शिवं लिङ्गं स्वर्णलिङ्गं जवा-कृतिम् ॥ सम्पूज्यविधिवद्भक्त्या सर्वाभीष्टं लभेन्नरः ॥१२॥ श्वेताश्वरोपनिषदि ॥ रुद्रात्प्रवर्ततेवीजं वीज योनिर्जनार्दनः ॥ यो रुद्रः स स्वयं ब्रह्मा यो ब्रह्मा सहुताशनः ॥१३॥ ब्रह्मविष्णुमयोरुद्रः अग्निसोमात्मकंजगत् ॥ पुल्लिंगं सर्वमीशान स्त्रीलिङ्गं भगवत्युमा॥ उमाशङ्करयोर्योगः स योगोविष्णुरुच्यते ॥ १४ ॥ कार्यं विष्णुः क्रिया ब्रह्मा कारणन्तु महेश्वरः ॥ प्रयोजनार्थं रुद्रेण मूर्तिरेकात्रिधा कृता ॥१५॥ तथाहरिवंशे पारिजात संहितायाम् इन्द्रम्प्रति नारदवाक्यम् ॥ यएको-

शिवसे भोग किया उसी वीर्ज रजसे शालग्राम हुए ॥११॥ शालग्राममें शिवलिङ्ग होता हैं जो शिवनाम शालग्राम कहे जाते हैं उनका पूजन करनेसे अभीष्ट फल मिलता है ॥१२॥ श्वेतोत्तर उपनिषदमें लिखा है कि रुद्रसे वीर्ज हुआ और उस वीर्जका योनि विष्णु है जो रुद्र हैं वही ब्रह्मा और अग्नि हैं ॥१३॥ ब्रह्मा विष्णुमय रुद्र हैं और अग्नि चन्द्रमामय जगत् है जगतका सब पुरुष शिव हैं और सब स्त्री भगवती हैं उमाशंकरका योग विष्णु हैं ॥१४॥ कार्य विष्णु क्रिया ब्रह्मा कारण महेश्वर हैं कार्य करनेके हेतु रुद्रने तीन भाग किया है ॥१५॥ हरिवंशके पारिजात संहितामें इन्द्रके प्रति नारदका

विश्वमध्यास्ते प्रधानं जगतोहरः ॥ प्रकृत्यायस्परं सर्वे क्षेत्रज्ञं वैविदुर्बुधाः ॥१६॥ तास्याऽव्यक्तस्य योव्यक्तो भागः सर्वभवोद्भवः ॥ तस्यात्मा प्रथमोदेवो विष्णुः सर्वस्य धीमतः ॥१७॥ प्रकृत्या प्रथमोभागः उमादेवी यशस्विनी ॥ व्यक्तः सर्वमयोविष्णुः स्त्रीसञ्ज्ञोलोक-भावनः ॥ १८ ॥ रुक्मीण्याद्यास्त्रियस्तस्य व्यक्तत्वे प्रथमो गुणः ॥ अव्यया प्रकृतिर्देवी गुणीदेवो महेश्वरः ॥१९॥ नारायणो महातेजा सर्वकृल्लोक-भावनः ॥ भोक्तामहेश्वरोदेवो कर्ताविष्णुरधोक्षजः ॥२०॥ ब्रह्मपादेवताश्चान्ये पश्चात्सृष्टामहात्मना ॥ महादेवेन

वचन है कि जगतका शासक प्रधान हर हैं जिनको ज्ञानी क्षेत्रज्ञ कहते हैं ॥१६॥ उनका जो माया उस मायाका जो चेतन भाग सब जगतको उत्पन्न करनेवाला सो विष्णु है ॥१७॥ प्रकृतिका प्रथम भाग उमादेवी हैं व्यक्त सर्वमय विष्णु स्त्री हैं तथा लोकको मोहन करनेवाले हैं ॥१८॥ मायाका प्रथम गुण विष्णु है रुक्मिणी आदिके प्रति पुरुष हैं शिवके प्रति अव्यया प्रकृति देवी विष्णुगुण हैं गुणी महेश्वर हैं ॥१९॥ महातेजस्वी नारायण सबका कर्त्ता लोकको मोहन करनेवाले हैं कर्ता विष्णु भोक्ता महेश्वर हैं ॥२०॥ ब्रह्माको और देवताओंको प्रजापति गणोंको महादेवने पीछेसे बनाया अतः हे

देवेश प्रजापतिगणस्तथा ॥ २१ ॥ स्कान्दे आवन्त्य खण्डे अवन्तीक्षेत्रमाहात्म्ये चतुर्थाध्याये श्रीशङ्कर वाक्यम् ॥ भविता लोकरक्षार्थं श्रेष्ठस्सर्वधनुष्मताम्॥ नारायण महावीर्य शक्तिरेखा मदीयिका ॥ २२ ॥ वाराहपुराणे ॥ नवकोट्यस्तु चामुण्डा भेदभिन्ना व्यवस्थिताः ॥ अष्टादशतथाकोट्या वैष्णव्याभेद उच्यते ॥ २३ ॥ कोटिद्वादशसंख्याता ब्राह्मण्याभेद इष्यते ॥ सर्वासां भगवान् रुद्रः सर्वगत्वात्पतिर्भवेत्॥ ॥२४॥ यावन्त्यस्तामहाशक्त्यस्तावद्रूपाणि शङ्करः॥ कृतवांस्तासुभजते पतिरूपेण सर्वदा ॥ २५ ॥ तथान्य-

देवराज उनसे युद्ध मत करो पारिजात दे दो ॥२१॥ स्कन्द पुराणके आवन्त्यखण्डके चौथा अध्यायमें श्रीशङ्कर भगवानका वचन है कि लोकके रक्षाके हेतु सब धनुर्धारियोंमें श्रेष्ठ हमारी शक्ति नारायण होंगे ॥२२॥ वाराहपुराणमें लिखा है कि नव करोड़ रुद्राणी अठारह करोड़ वैष्णवी बारह करोड़ ब्रह्माणी शक्तियोंका सर्व होनेके कारण शिवपति हैं ॥२३॥२४॥ और जितनी शक्तियाँ हैं उतना ही रूप धारणकर उन शक्तियोंका पति होकर शिव भोग करते हैं ॥२५॥ और भी लिखा है कि आदि मध्य अन्तसे रहित जीवोंका पति श्रीपति पार्वती पति ईश्वर शिव ही हैं जो योगियोंके

दप्युक्तम् ॥ सोन्तादिमध्यैः परिवर्जितः शिवः स श्रीपतिः सोऽपि च पार्वती पतिः ॥ सएव भूताधिपतिः स्वयम्परो ध्येयस्सदायोगिवरैः सईश्वरः ॥२६॥ राधा-तन्त्रे कृष्णदेहमिमं भद्रे श्वयंकाली श्वरूपिणी ॥ राधातु परमेशानी पद्मिनी परमाकला ॥ २७ ॥ रामर-हस्योपनिषदि ॥ यो वैष्णवस्सोऽपि च योगकालेश-क्तिस्वरूपेण विचिन्त्यविष्णुम् ॥ शिवात्मके धामनि-योजयेत्स्या दतश्चिदानन्दमयोहिभक्तः ॥२८॥ स्कान्दे माहेश्वरखण्डान्तर्गत केदारखण्डे षष्ठाध्यायमारभ्य अष्टमाध्यायपर्यन्तं शिवस्य देवदारुगमनम् ॥ तेष्वेवं तप्यमानेषु महर्षिषुमहेश्वरः ॥ रागद्वेषगतिस्तेषां

ध्यान करने योग्य हैं ॥२६॥ राधातन्त्रमें लिखा है कि कृष्ण साक्षात् काली रूप है और राधा लक्ष्मीकी कला है ॥२७॥ राम-रहस्य उपनिषदमें लिखा है कि विष्णु भक्त भी योगकालमें विष्णुको शक्ति रूप ध्यानकर शिवधाममें योजन करनेसे चिदानन्दको प्राप्त होता है ॥२८॥ स्कन्दपुराणके महेश्वरखण्डके अन्तर्गत केदार-खण्डके छठवां अध्यायसे लेकर आठवाँ अध्याय तक शिवका देव-दारूमें गमन और सब नरनारियोंका मोहन लिखा है देवदारू वनमें सब ऋषि तप करते रहें उन सबोंके रागद्वेष गतिकी परीक्षाके हेतु

परिद्त्येहमितिस्मरन् ॥ २९ ॥ नग्नोवेषोजटाधारी भस्म-भूषितविग्रहः ॥ भिन्नुरूपप्रतिच्छन्नः तापसाश्रयमावि-शत् ॥३०॥ गृहकार्यम्परित्यज्य चेरुस्तद्गतमानसाः ॥ गतासुतासुसर्वासु पत्नीषु ऋषिसत्तमाः ॥३१॥ याव-दाश्रयमभ्येत्य तावच्छून्यं व्यलोकयत् ॥ तदातेच सुरास्सर्वे ऋषयोऽपि भयान्विताः ॥ ईडिरेल्लिङ्गमैशञ्च ब्रह्माद्याज्ञानविह्वलाः ॥३२॥ वाशिष्ठलिङ्गोपपुराणे ॥ श्री महादेव उवाच ॥ अथैतेषामहंशम्भुर्मायापाश निवृत्तये ॥ आत्मज्ञानप्रदानाय देवदारुवनंगतः ॥३३॥ कल्याणवेषमास्थाय मन्मायाशक्ति वैभवात् ॥ विष्णु-

शिवने नग्न जटा भस्मको धारण किये भिन्नुक रूपसे गये ॥२९॥३०॥ शिवका मोहनी रूपको देखते ही सब ऋषियोंकी पत्नी उनके पीछे चली गईं ॥३१॥ ऋषि लोग आश्रमको शून्य देखकर भययुक्त हो ब्रह्माके पास जाकर पूछे कि यह क्या हुआ ब्रह्माने ध्यानसे देखकर कहा कि शिवका माया है अतः शिवलिङ्गका पूजन सब लोग करौ और हम भी करेंगे उसी समयसे ब्रह्मा आदि देवता ऋषि सब शिव-लिङ्गका पूजन करने लगे ॥३२॥ वाशिष्ठ लिङ्गोपपुराणमें यह कथा शिवजीने किसी ऋषिके प्रति कहा है कि ऋषियोंको माया-पाशसे छोड़ानेके निमित्त और आत्मज्ञान देनेके लिए देवदारु

श्चमायया ब्रह्मन् भार्याभून्ममसुन्दरी ॥३४॥ तयासह मुनेर्क्रीडां कृत्वावेषं दिगम्बरम् ॥ वर्णाश्रमसदाचार विनिर्मुक्तस्तयासह ॥ ३५ ॥ अहंभिक्षाटनन्तेषां मन्दिरे कृतवान्द्विजा ॥ मां दृष्ट्वा माययानार्यो मोहितामुनि-पुङ्गव ॥३६॥ त्यक्तवस्त्रामुनेः काचित्काचित्त्यक्तविभू-षणाः ॥ काश्चिन्मांवीक्ष्यतिष्ठन्ति काश्चिदालिङ्गनोत्सु-काः ॥३७॥ काश्चिन्मां भुङ्क्ष्व भुङ्क्ष्वेति प्रोच्यधा-वन्ति मान्प्रति ॥ महर्षीणां सुतास्तेऽपि ममभार्यासु शोभनाम् ॥ ३८ ॥ दृष्ट्वामन्मथविद्धाङ्गानि लज्जा

वनमें मैं गया ॥३३॥ कल्याण वेषको धारणकर और अपने मायासे विष्णुको स्त्री बना साथ ले दिगम्बर (वस्त्रसे रहित) हो और उस स्त्रीके साथ वर्णाश्रम आचारको छोड़कर क्रीड़ा करते ऋषियोंके गृह-गृह भिक्षा मांगने लगे हमारा रूप देख सब स्त्रियाँ मोहित हो गईं ॥३४॥३५॥३६॥ और कोई कपड़ा छोड़ नङ्गी हो गईं कोई गहना उतार फेंकने लगीं कोई टकटकी वान्ह हमारे तरफ देखने लगीं कोई अङ्गमें लपटकर आलिंगन करने लगी ॥३७॥ कोई हमारे घर भोजन करो ऐसा कहकर पीछे-पीछे दौड़ने लगीं और ऋषियोंकी कन्या हमारे स्त्रीको देख कामवाणसे पीड़ित निर्लज्ज हो वस्त्रको त्यागकर आलिंगन करने लगीं ॥३८॥३९॥ कोई भृकुटीको टेढ़ा कर

विवशाभृशम् ॥ त्यक्तवस्त्रास्समालिङ्गयभुक्तवन्तो महामुने ॥३९॥ केचिन्मोहेन नृत्यन्ति मण्डितभ्रूविलासिनः ॥ मुने केचित्करास्फोटं कुर्वन्ति परिमोहिताः ॥४०॥ एवं नराणां नारीणां कुलंभ्रान्तमभून्मुने ॥ तद्दृष्ट्वा मुनयः सर्वे कुपिता मां प्रियाश्च मे ॥४१॥ अतीव परुषं वाक्यं प्रोचुर्माम्प्रतिसुव्रत ॥ शेपुश्चशापैर्मांब्रह्मन्माययापरिमोहिताः ॥४२॥ महामन्त्रैर्महाघोरैरभिचारकृते मम ॥ तत्सर्वं विफलं ब्रह्मन्नभून्मय्याज्ञयामुने ॥४३॥ तेसम्भूयमुनिश्रेष्ठा समुपेत्यमहामुने ॥ पृष्ठवन्तो भवान्कस्त्वं किमुद्दिश्यत्वमागतः ॥ ४४ ॥

नाचने लगीं और कोई मोहित हो ताली बजाने लगीं ॥४०॥ देवदारू वनके नरनारियोंका समूहको भ्रान्त देखकर महर्षि सब हमारे और हमारे स्त्रीपर क्रोध किये ॥४१॥ और हमारे मायासे मोहित हो हमको अति कठोर वाक्योंसे सम्बोधन कर शाप दिये ॥४२॥ महामंत्र घोर अभिचार (मारण प्रयोग) कर शाप दिये सो सब व्यर्थ हो हमको नहीं लगा ॥४३॥ तब सब लोग एकठ्ठा होकर हमसे पूछे कि आप कौन हैं और क्या यहाँ आये हैं ॥४४॥ ऐसा उन सबोंके पूछनेपर मैंने कहा कि मैं कौन हूँ सो क्या कहूँ तुम सबोंके सामने ही हूँ परन्तु आनेका कारण अवश्य कहूँगा ॥४५॥ जैसे तुम

इतिपृष्टेनतैरुक्तं मयाब्रह्मविदाम्बर ॥ इदृशोहमिति प्राज्ञाः पुनर्वक्ष्यामि कारणम् ॥ ४५ ॥ इदानीं भार्यया सार्द्धं तपश्चर्तुमिहागतः ॥ इतिमद्वचनं श्रुत्वा मुनयो मुनिपुङ्गव ॥ ४६ ॥ प्रोचुधिग्धिग् महामूढ़ वस्त्रेणा-च्छाद्यविग्रहम् ॥ त्यक्त्वाभार्यां महादुष्टां मोहयन्ति तपश्चर ॥ ४७ ॥ इति तेषां वचः श्रुत्वा ममभार्यापति-व्रता ॥ न कथंचिदियं दुष्टाबुद्ध्याऽप्यन्यंनमिच्छति ॥४८॥ इत्युक्ताश्च मयाब्रह्मन्ब्राह्मणाामम मायया ॥ सम्भूयातीवसंरुष्टा परुषंवाक्यमब्रुवन् ॥ ४९ ॥ गच्छ गच्छ महादुष्ट भार्यातेव्यभिचारिणी ॥ त्वञ्चवर्णाश्रमा-

सब अपने स्त्रीके साथ तप करते हो वैसे ही मैं भी अपने स्त्रीके साथ तप करने आया हूँ ऐसा हमारा वचन सुन ऋषि सब क्रोध कर बोले कि ॥४६॥ धिग-धिग महामूढ़ अपने शरीरको वस्त्रसे ढाँककर और सबको मोहन करनेवाली महादुष्टा स्त्रीको त्यागकर तप करो ॥४७॥ ऐसा उन सबोंका वचन सुन हम बोले कि यह हमारी स्त्री पतिव्रता है दुष्टा नहीं है और बुद्धिसे भी अन्य पुरुषकी इच्छा नहीं करती ॥४८॥ ऐसा हमारा वचन सुन हमारे मायासे मोहित ब्राह्मण सब एकट्ठा हो क्रोध कर कठोर वाक्योंसे कहने लगे ॥४९॥ कि हे महादुष्ट ! तुम शीघ्र यहाँसे जावो तुम्हारी स्त्री व्यभिचारिणी

चारविहीनो बुद्धिपूर्वतः ॥५०॥ नान्यमिच्छति भार्या मे इत्यनृतंत्वयेरितम् ॥ इत्याकर्ण्यवचस्तेषां सत्यमेवेरितं मया ॥ ५१ ॥ मद्दृष्ट्या ममभार्येयं मयाभिन्नाह्यविक्रिया ॥ रागद्वेषभयक्रोधो लोभमोहादिवर्जिताः ॥५२॥ पुण्यपाप विनिर्मुक्ता सर्वदा परमार्थतः ॥ अहञ्चसर्वदा विप्रा वर्णाश्रमविवर्जितः ॥ ५३ ॥ न कर्ता न च भोक्ताऽहं नचकारयिता तथा ॥ धर्माधर्मौ नमेविप्रा सर्वदा परमार्थतः ॥५४॥ इति मद्वचनं श्रुत्वा मुनयः क्रोधमूर्च्छिताः ॥ सर्वेविचार्यसम्भूय मामेव पुनरब्रुवन्

है और तुम वर्णाश्रमसे बाहर हो ॥५०॥ हमारी स्त्री अन्य पुरुषकी इच्छा नहीं करती है ऐसा तुम कहते हो सो झूठ बोलते हो ऐसा उन सबोंका वचन सुन मैंने कहा कि मैं सत्य कहता हूँ झूठ नहीं बोलता ॥५१॥ हमारे दृष्टिसे हमारी स्त्री हमसे अभिन्न क्रियासे रहित है और राग-द्वेष भय-क्रोध लोभ-मोहसे वर्जित है ॥५२॥ वस्तुतः पुण्य-पापसे भी रहित है हमको वर्णाश्रमसे वर्जित जो तुम सब कहते हो सो ठीक है ॥५३॥ वस्तुतः कर्त्ता-भोक्ता मैं नहीं हूँ और धर्म-अधर्म भी हमको नहीं है ॥५४॥ ऐसा हमारा वचन सुन क्रोधसे मूर्च्छित हो अपनेमें सम्मतिकर फिर बोले कि अहो ऐसा विरुद्ध चोरका इतना साहस कर्त्ता भोक्ता नहीं हूँ पुण्य पापसे वर्जित

॥५५॥ अहोविरुद्धं भवता प्रोक्तं चौरेण साहसात् ॥
न कर्ता न च भोक्ताहं पुण्यपापविवर्जितः ॥ वर्णाश्र-
मविनिर्मुक्तस्तपश्चर्तुमिहागतः ॥५६॥ तिष्ठ तिष्ठ सदा
स्त्रीणां मोहनं पुरुषाधम ॥ लिंगमेतत्समुत्पाट्य वने-
स्मिन्भार्यया बिना ॥ ५७ ॥ ततो लिङ्गं समुत्पाट्य-
तत्रैवान्तर्हितो भवत् ॥ माञ्चलिङ्गं समर्य्यादां नापश्य-
न्मुनयो मुने ॥ ५८ ॥ उत्पातोऽभूत्तदातत्र सर्वलोक
भयङ्करः ॥ न तथा राजते सूर्यो न चन्द्रो न च
पावकः ॥ ५९ ॥ भूकम्पश्च समुद्भूतो मन्त्रास्तेषां न
भान्ति च ॥ एवं संक्षुभितेरण्ये मुनयः संशितव्रताः ॥

हूँ और वर्णाश्रमसे बाहर हूँ तो तपसे क्या प्रयोजन है ॥५५॥५६॥
हे पुरुषाधम ! यदि इस वनमें रहना चाहते हो तो लिङ्गको उखाड़
कर फेंक दो और मोहन करनेवाली स्त्रीको त्याग कर रहो ॥५७॥
ऐसा उन सबोंका वचन सुन मैंने लिङ्ग उखाड़कर फेंक दिया और
स्त्रीके साथ अन्तर्हित हो गया ॥५८॥ बस वहाँ लिङ्गको फेंकते
ही के साथ सर्वलोक भयंकर महान उत्पात हुआ सूर्य चन्द्र अग्निकी
ज्योति मलीन हो गई ॥५९॥ और भूकम्प होने लगा ऋषियोंके
मंत्र-तन्त्र सब भूल गये देवदारू वनके सब ऋषिगण आपुसमें कुछ
सम्मतिकर ब्रह्मलोकमें जाकर ब्रह्मासे पूछे ब्रह्माजीने उत्तरमें यह

परस्परं समालोक्य ब्रह्मलोकं समभ्ययुः ॥ ६० ॥
ब्रह्मोवाच ॥ इतः पूर्वंकृतं कर्म भवद्भिरखिलं वृथा ॥
लिङ्गार्चनं बिना तेन मोहितोदेव मायया ॥६१॥
तद्भवद्भिर्यथा दृष्टं लिङ्गं भूमौ निपातितम् ॥ तल्लिङ्ग-
सदृशं लिङ्गं कृत्वा श्रद्धापुरः सरम् ॥ पञ्चाक्षरेण
मन्त्रेण प्रणवेन सहादरात् ॥६२॥ पूजयध्वं सपत्नीकाः
स्वपुत्रैरखिलैः सह ॥ स्थापितं विधिवद्भक्त्या सदेवा-
सुरमानुषैः ॥६३॥ मुण्डमालतन्त्रे ॥ कृष्णस्तु कालि-
कासाक्षाद्रामर्मूतिस्तु तारिणी ॥ वाराहो भुवना प्रोक्ता
नृसिंहोभैरवीश्वरी ॥६४॥ धूमावती वामनस्या च्छिन्ना-
भृगुकुलोद्भवः ॥ कमलामत्स्यरूपस्यात्कूर्म्मस्तु वगला-

कहा कि आज तक तुम सबोंने जो कर्म किया सो लिङ्ग पूजा नहीं करनेसे व्यर्थ हो गया ॥६०॥६१॥ अब उसी लिङ्गके सदृश लिङ्ग बनाकर पञ्चाक्षर अथवा ॐकारसे सब स्त्री पुत्रोंके साथ पूजन करो तब शान्ति होगा और देवता असुर मनुष्य भी पूंजन करें ॥६२॥६३॥ मुण्डमालतन्त्रमें लिखा है कि कृष्ण साक्षात काली रूप हैं राम तारारूप हैं वाराह भुवनेश्वरी रूप हैं नृसिंह भैरवी रूप हैं ॥६४॥ वामन धूमावती हैं परशुराम छिन्नमस्ता मत्स्य कमला कूर्म्म वगलामुखी हैं बौधमातङ्गी कलकी षोड़शी रूप हैं ॥६५॥

मुखी ॥ मातङ्गीवौधइत्येषा षोडशी कल्कीरूपिणी ॥६५॥ तत्रैव ॥ रामः शक्तिरितिख्यातः स शिवः परिकीर्तितः ॥ शिवशक्त्यात्मकम्ब्रह्म राम रामेति गीयते ॥ ६६ ॥ कूर्म्मपुराणे उत्तरार्द्धे नवमाध्याये विष्णुम्प्रति श्री सदाशिव वाक्यम् ॥ भवान्सर्वस्य कार्यस्य कर्ताह मधिदैवतम् ॥ त्वन्मयंमन्मयश्चैव सर्वमेव न संशयः ॥ ६७ ॥ भवान्सोमस्त्वहं सूर्यो भवान्

कौशिल्याके गर्भसे जब लड़का पैदा हुआ तब वशिष्ठ ऋषि बुलाये गये उन्होंने लड़केका नाम राम ऐसा रखा नाम रखनेका मतलब यह है कि जिस दैवके प्रसादसे लड़का होता है अथवा माता-पिताका जिस देवमें प्रीति रहती है उसी देवका नाम रखा जाता है कौशिल्या दशरथकी प्रीति शिवशक्तिमें रही सो तुलसीदासजीने लिखा है—चौपाई—इन सम काहु न शिव अवराधे। जेहि प्रसाद चारो फल साधे ॥ फिर भी लिखा है कि—राम न सकहिं नाम गुण गाईं। अर्थात् जैसे किसीका शिवदास नाम है शिवका गुण नहीं गा सकता वैसे ही राम नामका गुण नहीं गा सके पुनः वहाँ ही लिखा है कि रकार शिव मकार शक्ति शिव शक्त्यात्मक ब्रह्म रामनाम हैं ॥६६॥ कूर्मपुराणके उत्तरार्द्ध अध्याय नवमें विष्णु भगवानके प्रति सदाशिवका वचन है कि आप सब कामके कर्ता हैं मैं मालिक हूँ तुम्हारे हमारे मय सब जगत है ॥६७॥ आप चन्द्रमा हैं मैं सूर्य हूँ आप

रात्रिरहं दिनम् ॥ भवान्प्रकृतिरव्यक्त महंपुरुष एवच ॥ ॥६८॥ भवान् ज्ञानमहं ज्ञाता भवान्मायाह मीश्वरः ॥ भवान्विद्यात्मिकाशक्तिः शक्तिमानहमीश्वरः ॥६९॥ योहंसनिष्कलोदेवः सोसिनारायणः प्रभुः ॥ एकीभावेन पश्यन्ति योगिनो ब्रह्मवादिनः ॥७०॥ तत्रैव दशमाध्याये विष्णु वाक्यम् ॥ तस्य देवाधिदेवस्य शम्भोः हृदयमध्यतः ॥ सम्बभूवाथ रुद्रो वा सोऽहंतस्य परातनुः ॥७१॥ तत्रैव चतुर्थाध्याये ॥ ऋषय उचु ॥ कुतः सर्वमिदं जातं कस्मिंश्च लयमेष्यति ॥ नियन्ता कश्चसर्वेषां वदस्वपुरुषोत्तम ॥ ७२ ॥ श्रीकूर्म्म उवाच ॥

रात्रि हैं मैं दिन हूँ आप प्रकृति (स्त्री) हैं मैं पुरुष हूँ ॥६८॥ आप ज्ञान हैं मैं ज्ञाता हूँ आप माया मैं ईश्वर आप विद्यात्मिका शक्ति शक्तिमान ईश्वर मैं हूँ ॥६९॥ जो हम निष्कल देव सो प्रभु नारायण हैं ऐसा ब्रह्मज्ञानी योगी सब देखते हैं ॥७०॥ वहाँ ही दसवें अध्यायमें विष्णुका वचन है कि देवाधिदेव सदाशिवके हृदयसे रुद्र हुए उनका परातनु (शक्ति) मैं हूँ ॥७१॥ पुनः वहाँ ही अध्याय चौथामें श्रीकूर्म्म भगवानसे सब ऋषि पूछते हैं कि यह जगत कहाँसे उत्पन्न हुआ और किसमें लय होता है इसका नियन्ता (मालिक) कौन है सो कहिए ॥७२॥ तब श्रीकूर्म्म भगवान बोले कि महेश्वर

महेश्वरः परोव्यक्तश्च तुर्व्यूहः सनातनः ॥ अनन्तश्चाप्रमेयश्च नियन्ताविश्वतोमुखः ॥७३॥ अनादिरेषभगवान्कालोनन्तोऽजरोमरः ॥ सर्वगत्वात्स्वतन्त्रत्वात्सर्वात्मत्वान्महेश्वरः ॥७४॥ ब्रह्मणो वहवो रुद्रा ह्यन्येनारायणादयः ॥ एकोहि भगवानीशः कालः कविरिति-श्रुतिः ॥७५॥ तत्रैव द्वादशाध्यायेऽपि ॥ यो विष्णुः स स्वयंरुद्रो यो रुद्रः स जनार्दनः ॥ इतिमत्वा भजेदजोवै स जाति परमाङ्गतिम् ॥७६॥ सृजत्येषजगत्सर्वं विष्णुस्तत्पश्यतीश्वरः ॥ इत्थं जगत्सर्वमिदं रुद्रनारायणोद्भवम् ॥७७॥ तस्मात्त्यक्त्वा हरेर्निन्दां हरेश्चापि

पर अव्यक्त चतुर्व्यूह सनातन अप्रमेय अनन्त चारों तरफसे मुखवाले शिव नियन्ता हैं ॥७३॥ सर्वत्र व्यापक स्वतन्त्र सर्वात्मा अनादि काल अमर भगवान महेश्वर हैं ॥७४॥ ब्रह्मा नारायण रुद्र अनेक हैं भगवान ईशकाल रूप महादेव एक ही है ऐसा श्रुति (वेद) कहती है ॥७५॥ वहाँ ही बारहवें अध्यायमें श्री सूतजीका वचन है कि जो विष्णु हैं सो रुद्र हैं और जो रुद्र हैं सो विष्णु हैं ऐसा जानकर जो शिवका भजन करते हैं सो परम उत्तम गतिको जाते हैं ॥७६॥ जगतका बनानेवाला विष्णु देखनेवाला शिव है रुद्र नारायणसे जगतका सम्पत्ति है ॥७७॥ तस्मात हरिहरकी निन्दा छोड़कर

समाहितः ॥ समाश्रयमहादेवं शरण्यं ब्रह्मवादिनम् ॥७८॥ तत्रैवषोड़शाध्याये श्रीशङ्कर वाक्यम् ॥ यासा-विमोहिनी मूर्ति ममनारायणाह्वया ॥ सत्वोद्दक्ता गज-त्सर्वं संस्थापयतिनित्यदा ॥ ७६ ॥ अयं नारायणोऽनन्तो शाश्वतो भगवानजः ॥ प्रधानपुरुषं तत्वं मूल-प्रकृतिरव्यया ॥ गच्छध्वमेनं शरणं शरण्यं विष्णुमव्यक्त-मव्ययम् ॥८०॥ एकोयंवेदविश्वात्मा भवानीविष्णुरेव च ॥ मामेव केशवं प्राहुर्लक्ष्मीदेवीमथाम्बिकाम् ॥८१॥ स विष्णुः परमंसेव्यः परमात्मा परागतिः ॥ मूलप्रकृतिरव्यक्त सदानन्देति कथ्यते ॥८२॥ तत्रैव द्विपञ्चा-

शरण देनेवाले शिवके शरणमें जाना उचित है ॥७८॥ वहाँ ही अध्याय सोलहमें श्री शङ्करजीका वचन है कि जो हमारी सतोगुण शक्ति नारायण होकर जगतका पालन करती हैं ॥७६॥ यही नारायण अनन्त निरन्तर रहनेवाला नाशरहित भगवान प्रधान पुरुष मूल प्रकृति नाशरहिता हमारी शक्ति हैं इनके शरणमें जावो ॥८०॥ संसारका आत्मा भवानी विष्णु एक ही हैं और हम हीं को कोई केशव कोई लक्ष्मी कोई अम्बिका कहते हैं ॥८१॥ वही विष्णु परमात्मा मूल प्रकृति (शिवका शक्ति) सदा सेव्य हैं ॥८२॥ वहाँ ही अध्याय बावनमें लिखा है कि वही एक विष्णुकी मूर्ति ज्ञानरूप

शत्यध्यायेऽपि ॥ एका भगवतोमूर्तिर्ज्ञानरूपाशिवामला
वाशुदेवाभिधानासा गुणातीता सुनिष्कला ॥८३॥ महा-
काल संहितायाम् ॥ स्त्रीणां त्रैलोक्ययातानां कामोन्मादै-
कहेतवे ॥ वंशीधरः कृष्णदेवः प्रकृतिर्विष्णुरुच्यते ॥
उभयोर्मेलनाद्देवि शिवः शक्तिर्हिगीयते ॥८४॥ राधातंत्रे ॥
अज्ञात्वाकेशवं तत्वं पूजयेद्यस्तुपार्वती ॥ विष्णुत्वात्पूज-
येद्यस्तु रूपत्वात्परमेश्वरी ॥ सर्वं तस्य वृथादेविहानिस्यादु-
त्तरोयम् ॥८५॥ शक्तिसङ्गतन्त्रे ॥ कदाचिदाद्या ललिता-
पुंरूपा कृष्णविग्रहा ॥ लोकसम्मोहनार्थाय स्वरूपं विभ्र-

शिवा (शिवकी शक्ति) निर्मल वाशुदेव जिनका नाम गुणा तीतकला
रहित है ॥८३॥ महाकाल संहितामें लिखा है कि तीनों लोकके
स्त्रियोंको कामोन्माद करनेवाले वंशीधर कृष्ण प्रकृति (शक्ति)
हैं अतः शिव विष्णुको एक साथ पूजनेसे शिव शक्तिका पूजन
होता है ॥ ८४ ॥ राधातन्त्रमें लिखा है कि हे पार्वती !
विष्णुको जो तत्त्व भाव नहीं जानकर विष्णु रूपसे पूजन करते हैं
उनको पद-पदमें हानि और पूजन व्यर्थ हो जाता है अर्थात विष्णुको
शिवका एक परमशक्ति जानकर पूजन करना चाहिए ॥८५॥
शक्ति सङ्गम तन्त्रमें लिखा है कि लोकको मोहनार्थ किसी समयमें

तिम्परम् ॥८६॥ कदाचिदाद्या श्रीतारा पुंरूपा राम विग्रहा ॥ रावणस्य वधार्थाय देवानां स्थापनाय च ॥ ८७ ॥ स्कन्दोपनिषदि ॥ यथा शिवमयोविष्णुरेवं विष्णुमयं शिवः ॥ यथान्तरं न पश्यामि तथा मे स्वस्तिरायुषी ॥८८॥ रामरहस्योपनिषदि ॥ रामं त्रिनेत्रं सोमार्धं धारिणं शूलपाणिनम् ॥ भस्मोद्धूलित सर्वाङ्गं कपर्दिन मुपास्महे ॥ ८६ ॥ रामाभिरामां सौन्दर्यं सीतां सोमावतंसिकाम् ॥ पाशांकुशधनुर्वाण धरांध्यायेत्त्रि-लोचनाम् ॥६०॥ महाकाल संहितायाम् ॥ गौरीरूपा-परासीता महासाम्राज्यनायिका ॥ रामः परशिवोज्ञेयो

आद्या काली श्रीकृष्ण रूपको धारण करती हैं ॥८६॥ और किसी समय आद्या तारा राम रूप धारण कर रावणका वध और देवताओंका स्थापन करती हैं ॥८७॥ स्कन्द उपनिषदमें लिखा है कि जैसे शिव मय विष्णु और विष्णुमय शिवको मैं देखता हूँ वैसे ही मेरा आयु स्वस्ति (कल्याणयुक्त) हो ॥८८॥ राम रहस्य उपनिषदमें लिखा है कि रामभक्त रामको त्रिनेत्र खण्ड चन्द्रमा ललाटमें शूलपाणि सर्वाङ्गमें भस्म लगाये ध्यान करे ॥८६॥ और सुन्दरी सीताको पाश अंकुश धनुर्वाणको लिये तीन लोचना पार्वती रूप ध्यान करे ॥६०॥ महाकाल संहितामें लिखा है कि महाराज्यको देनेवाली

नात्रतारोनरोऽपि च ॥ ६१ ॥ रुद्रहृदयोपनिषदि ॥ सर्वदेवात्मको रुद्रः सर्वेदेवाः शिवात्मकाः ॥ रुद्रस्य दक्षिणेपार्श्वे रविर्ब्रह्मा त्रयोग्नयः ॥ ६२ ॥ वामपार्श्वे उमादेवी विष्णुः सोमोऽपितेत्रयः ॥ या उमा सा स्वयं विष्णुर्योविष्णुः सहिचन्द्रमा ॥६३॥ दुर्वाशसोपपुराणे मार्कण्डेयम्प्रति ब्रह्मणोवाक्यम् ॥ मन्दरस्यगिरेः पार्श्वे नलिन्यां भवकेशवौ ॥ रात्रौ स्वप्नान्तरे ब्रह्मन् मयादृष्टौ हराच्युतौ ॥ ६४ ॥ हरश्चहरिरूपेण हरीश्चहररूपिणम् ॥ शङ्खचक्रगदापाणिं पीताम्बरधरं हरम् ॥ त्रिशूलपट्टिशधरं व्याघ्रचर्मधरं हरिम् ॥ ६५ ॥ गरुड-

गौरी रूप सीता पर शिव रूप राम हैं नर अवतार नहीं हैं ॥६१॥ रुद्र हृदय उपनिषदमें लिखा है कि सब देवमय रुद्र हैं और सब देवता रुद्र रूप हैं रुद्रके दाहिने भागमें सूर्य ब्रह्मा तीनों अग्नि (१ दक्षिणाग्नि) २ (गार्हपत्याग्नि) ३ (आहवनीयाग्नि) हैं और वाम भागमें उमा विष्णु चन्द्रमा ये तीनों हैं जो उमा सो विष्णु सो चन्द्रमा हैं। ॥६२॥ दुर्वाशस उपपुराणमें मार्कण्डेय ऋषिसे ब्रह्मा कहते हैं कि हे ऋषिश्वर ! आज रातमें स्वप्नमें मैंने देखा है कि मन्दराचल पहाड़के बगलमें शिव विष्णु दोनों हैं ॥६४॥ शंखचक्र गदा पीताम्बर धारण किये शिव और त्रिशूल पट्टिश व्याघ्र

थश्चापिहरं हरिंच बृषभध्वजम् ॥ विस्मयो मे महान् ब्रह्मन् दृष्ट्वा तत्परमाद्भुतम् ॥६६॥ मार्कण्डेय उवाच ॥ यो विष्णुः स स्वयं रुद्रः यो रुद्रः सपितामह ॥ एक-एव शिवश्चैव ब्रह्मविष्णु महेश्वराः ॥ अर्धनारीश्वरा-स्तेतु ब्रतंतीब्रं समास्थिताः ॥ ६७ ॥ यथा जले जलं क्षिप्तं जलमेववस्तुतद्भवेत् ॥ रुद्रोविष्णु प्रविष्टस्तु तथा-रुद्रमयोभवेत् ॥६८॥ एकएवद्विधा भूतो लोकेचरति नित्यशः ॥ एतत्परतरं गुह्यं कथितं ते पितामह ॥६६॥ सनत्कुमारोपपुराणे ॥ हरिरूपी महादेवो लिङ्गरूपी जनार्दनः ॥ इषदप्यन्तरंनास्ति भेदकृन्नरकं ब्रजेत्

चर्म धारण किये हरिको मैंने देखा ॥६५॥ और गरुड़पर चढ़े शिव वृषभध्वज विष्णु ऐसा देखकर महा आश्चर्यमें मेरा चित्त पड़ा है ॥६६॥ ऐसा ब्रह्माका वचन सुन मार्कण्डेय बोले कि जो रुद्र हैं वही ब्रह्मा विष्णु हैं एक ही शिव ब्रह्मा विष्णु रुद्र होते हैं शिव विष्णु अर्द्ध नारीश्वर हैं ॥६७॥ जैसे जलमें जल डालनेसे जल रूप हो जाता है वैसे ही रुद्र जब विष्णुमें प्रवेश करते हैं तब विष्णु रुद्र हो जाते हैं ॥८॥ एक ही शिव दो होकर लोकका कार्य करते हैं हे पितामह ! यह परम गहन वस्तु मैंने आपसे कहा है ॥६६॥ सनत्कुमार उपपुराणमें लिखा है कि हरिरूप महादेव लिङ्गरूप विष्णु

॥ १०० ॥ हरिहरप्रकृतिरेका प्रत्ययभेदाद्द्विधाभाति ॥ कश्चिन्मूढोभेदं कलयति विनाशास्त्रम् ॥ १ ॥ शिवशक्त्योरेकत्वन्तु कूर्म्मपुराणे ॥ यस्याशेषजगन्मूर्ति विज्ञानतनुरीश्वरी ॥ न मुञ्चति सदा पार्श्वं शङ्करोऽसौहि दृश्यते ॥२॥ तयाहंसङ्गतोदेव्याः केवलोनिष्कलः शिवः ॥ पश्याम्यशेषमेवेदं यस्तद्वेदसमुच्यते ॥३॥ एको देवः सर्वभूतेषुगूढोमायी रुद्रोकेवलोनिष्कलश्च ॥ स एव देवी नचतद्विभिन्न मेतज्ज्ञात्वा ह्यमृतत्वं व्रजन्ति ॥४॥ सदाशिव संहितायाम् ॥ जगत्सृष्ट्यर्थमीशोऽतः शिव-

हैं कुछ भी भेद नहीं है जो भेद मानते हैं सो नरकमें जाते हैं ॥१००॥ हरिहर दोनोंका प्रकृति एक है प्रत्यय भेद होनेसे दो भासमान होते हैं शास्त्रहीन मूर्ष भेद करते हैं ॥१॥ शिवशक्ति एक ही हैं इस बातमें प्रमाण आगे मैं देखाता हूँ ॥ कूर्मपुराणमें लिखा है कि जो सब जगतरूपा ज्ञानरूपा शक्ति सदाशिवके बगलमें रहनेवाली वही शिव देखे जाते हैं ॥२॥ केवल निष्फल शिव उसी शक्तिके साथ होकर सब जगतको देखते हैं ऐसा जो जानता है सो मुक्त हो जाता है ॥३॥ एक केवल निष्फल शिव सब जीवोंमें व्याप्त और मायायुक्त रुद्र उनसे भिन्न देवी नहीं हैं ऐसा जो जानता है सो अमृत हो जाता है ॥४॥ पुनः सदाशिव संहितामें लिखा है कि ज्ञानानन्द

यादत्तसंयुतः ॥ सापितस्यप्रभासम्यग्ज्ञानानन्दस्वरूपिणः ॥ ५ ॥ तयोर्विभूतिलेशेन जगदेतच्चराचरम् ॥ न तयोर्विद्यतेभेदश्चन्द्रचन्द्रिकयोरिव॥६॥ तदाज्ञावशगं सर्वं इदं ब्रह्माण्डमण्डलम् ॥ वाति वातस्ततो भीतः शङ्करादुग्रशासनात् ॥ ७ ॥ उग्रोग्रशासनादेव भीतः सूर्योप्युदेत्ययम ॥ भीषास्मदग्निरिन्द्रश्चमृत्युर्धावति पंचमः ॥८॥ एतादृशं महादेवं सर्वश्रुत्यन्तविश्रुतम् ॥ स्मृत्वा विमुच्यते घोरैरपारैरघसागरैः ॥ ९ ॥ सूत संहितायाम् ॥ चिन्मात्राश्रयमायायाः शक्त्याकारे

स्वरूपी शिव शिवाके साथ हो जगतको बनाते हैं ॥५॥ उन्हीं दोनोंका प्रताप जगतमें व्याप्त है और चन्द्रमा चन्द्रमाके प्रतिविम्बके सदृश उन दुनोंमें भेद नहीं है ॥६॥ और उन्हीं दोनोंके भयसे वायु वहते हैं महाकठिन आज्ञा पाकर सूर्य उदय लेते हैं सब ब्रह्माण्ड मण्डल उन्हींके आज्ञावश है॥७॥ और उन्हींके भयसे अग्नि पाक करते हैं इन्द्र राज्य करते हैं मृत्यु मारते हैं और सब श्रुतियोंसे वही कहे जाते हैं उनका जो स्मरण करते हैं समुद्र रूपी पापसे छूट जाते हैं ॥८॥९॥ सूतसंहितामें लिखा है कि मायाका चिन्मात्र शक्त्याकार हो संसारमें प्रविष्ट रहती है वही शक्ति निर्विकल्पा स्वयं प्रभा सदा परमानन्दा संसारको नाश करनेवाली शिवा शिवसे अभिन्न रूपा कल्याण

द्विजोत्तमाः ॥ अनुप्रविष्टाया संविन्निर्विकल्पा स्वयम्प्रभा ॥१०॥ सदानन्दापरानन्दासंसार छेदकारिणी ॥ साशिवा परमादेवी शिवाभिन्ना शिवङ्करी ॥११॥ न शिवेन विनाशक्तिर्नशक्ति रहितः शिवः ॥ उमा शङ्करयोरैक्यं यः पश्यति स पश्यति ॥१२॥ स शिवः सच्चिदानन्दः सोन्वेष्टव्यो मुमुक्षुभिः ॥ सचजिज्ञासितव्यश्च विनासंकोचमास्तिका ॥ १३ ॥ वृहदारण्यके भीषास्माद्वातः पवते भीषोदयति सूर्यः इत्यादि ॥१४॥ वृहज्जावालोपनिषदि ॥ शिवश्चोर्ध्वमयः शक्तिरुर्ध्वशक्तिमयः शिवः ॥ तदित्थं शिवशक्तिभ्यां नाव्याप्तमिह किंचन ॥ १५ ॥ सुवालोपनिषदि ॥ आत्मानं द्विधा-

दायिनी है ॥१०॥ शिवके बिना शक्ति नहीं और शक्तिके बिना शिव नहीं रहते हैं उमाशङ्कर दोनोंको जो एक देखते हैं वे ही देखते हैं ॥११॥ उन्हीं शिव सच्चिदानन्दको मोक्षार्थी श्रवण मनन निदिध्यासन आदिसे उपासना करते हैं ॥१२॥१३॥ वृहदारण्यक उपनिषदमें लिखा है कि जिनके भयसे वायु बहते हैं सूर्य्य उदय लेते हैं—वही एक देव सर्वोपरि है ॥१४॥ वृहज्जावाल उपनिषदमें लिखा है कि शिवके ऊपर शक्ति शक्तिके ऊपर शिव और इन दोनोंसे व्याप्त जगत हैं ॥१५॥ सुवालोपनिषदमें लिखा है कि शिवने अपने शरीरको दो

करोदर्धेन स्त्री अर्धेन पुरुषो देवो भुत्वा देवानसृजद्दृ-षिर्भुत्वा ऋषीन् यक्षराक्षसगन्धर्वान् ग्राम्यानारण्याश्च पशूनसृजत् ॥ १६ ॥ शक्ति गीतायाम् ॥ सतीभावे सदागौरी विद्यारूपैवगीयते ॥ अतएवचसा देवी पति निष्ठापतिव्रता ॥ पत्युर्निन्दानि सम्यैव स्वकीयंवपुरत्यजत् ॥१७॥ कौर्मे द्वादशाध्याये देव्याः परम्पदं शिव एवेति ॥ परात्परतरं तत्वं शाश्वतं शिवमच्युतम् ॥ अनन्तप्रकृतौ लीनं देव्यास्तत्परमम्पदम् ॥ १८ ॥ देवीभागवते पञ्चमस्कन्दे द्वादशाव्याये महिषासुरसम्वादे श्रीदेवी वाक्यम् ॥ नाहं पतिम्वरा नारी पतिर्मेवर्तते

भागमें कर आधा स्त्री आधा पुरुष हो देवता हो देवोंको बनाए ऋषि होकर ऋषियोंको बनाए और यक्ष राक्षस ग्राम्य आरण्य पशुओंको बनाए ॥१६॥ शक्ति गीतामें लिखा है कि वही विद्यारूपा शक्ति गौरी होकर पति निष्ठा पतिव्रता होकर शिवके समीप रहती है दक्ष यज्ञमें पति निन्दा देखकर अपना शरीर त्याग दिया ॥१७॥ कूर्मपुराण अध्याय बारहमें लिखा है कि देवीका भी परमपद शिव हैं ॥ परसे भी परे निरन्तर रहनेवाले अच्युत शिव अनन्त प्रकृतिमें लीन देवीका परम्पद वही हैं ॥१८॥ देवीभागवत स्कन्द पाँच अध्याय बारहमें युद्धके समय महिषासुरने भगवतीसे कहा कि तुम हमारा

प्रभुः ॥ सर्वज्ञः सर्वगः साक्षी पूर्णः पूर्णाशयः शिवः ॥१९॥ जडाहं तस्यसंयोगात्प्रभवामिसचेतना ॥ तस्य-चेच्छाम्यहंदैत्य सृजामिसकलं जगत् ॥२०॥ न ब्रह्मा नयदाविष्णुर्नरुद्रोनदिवाकरः ॥ तदाहंप्रकृतिः पूर्णा पुरुषेण परेण वै ॥ संयुताविहरत्येव युगादौ निर्गुणा शिवा ॥ २१ ॥ षोडशाध्यायेऽपि नाहं पुरुषमिच्छामि परमम्पुरुषं विना ॥ स मां पश्यति विश्वात्मा तस्याहं प्रकृतिः शिवा ॥२२॥ तत्रैव द्वादशस्कन्दे मणिद्विप-वर्णने ॥ ब्रह्माविष्णुश्च रुद्रश्च ईश्वरश्च सदाशिवः ॥

पत्नी बनो तब भगवतीने कहा कि मैं कन्या नहीं हूँ सर्वज्ञ सर्वग साक्षी पूर्ण पूर्णाशय शिव हमारा पति है ॥१९॥ जड़ा हूँ मैं उन्हींके संयोसे चेतनत्व हममें होता है और उनके इच्छामें होकर मैं जगतको बनाती हूँ ॥२०॥ ब्रह्मा विष्णु रुद्र जब नहीं रहे उस समय मैं पूर्णा प्रकृति परम पुरुषके साथ बिहार करती हूँ ॥२१॥ वहाँ ही अध्याय सोलहमें लिखा है कि—परम पुरुषके बिना मैं दूसरे पुरुषका इच्छा नहीं करती हूँ वह विश्वका आत्मा शिव हमको देखते हैं और उन्हींका शक्ति शिवा मैं हूँ ॥२२॥ पुनः वहाँ ही बारहवें स्कन्दमें मणिद्वीपमें देवीका स्थान वर्णन किया है कि ब्रह्मा विष्णु रुद्र ईश्वर

एतेमञ्चखुराः प्रोक्ताः फलकस्तु सदाशिवः ॥ २३ ॥ तस्योपरिमहाकालो भुवनेशो विराजते ॥ या देवी निजलीलार्थं द्विधाभूता बभूवह ॥२४॥ तत्रैव नवमस्कन्दे पञ्चमाध्याये ॥ वैष्णवानाञ्च शैवानामुपास्येयञ्चनित्यशः ॥ मूलप्रकृतिरूपासा सृष्टिस्थित्यन्तकारिणी ॥२५॥ तत्रैवसप्तविंशेध्याये ॥ परमंव्यापकम्ब्रह्म निर्गुणः प्रकृतेः परः ॥ कारणं कारणानां च परमात्मा स उच्यते ॥ २६ ॥ तत्रैव प्रथमाध्याये ॥ सृष्टेरादौच यादेवी प्रकृतिः सा प्रकीर्तिता ॥ योगेनात्मासृष्टिविधौ द्विधारूपो बभूव सः ॥ पुमाश्चदक्षिणार्द्धाङ्गो

देवीके मञ्चका पावा हैं सदाशिव पाटी हैं ॥२३॥ उसके ऊपर महाकाल पञ्चवक्त्र त्रिनेत्र अर्द्धनारीश्वर विराजमान हैं जो देवी निज लीलार्थ दो रूपको धारण करती हैं ॥२४॥ वहाँ ही नौवे स्कन्दके अध्याय पाँचमें लिखा है कि वैष्णव (विष्णुभक्त) शैव (शिवभक्त) को मूल प्रकृति सृष्टि स्थिति पालन करनेवाली शक्तिका उपासन करना चाहिए ॥२५॥ पुनः वहाँ ही अध्याय सताइसमें लिखा है कि परम (सबसे परे) व्यापक ब्रह्म सब कारणोंका कारण प्रकृतिसे भी परे परमात्मा है ॥२६॥ वहाँ ही अध्याय पहलामें लिखा है कि सृष्टिके आदिमें वही एक आतमा रहा उसने दो रूप धारण किया

वामार्धांप्रकृतिस्स्मृता ॥ २७ ॥ पुनस्तत्रैव ॥ यज्ञेहिमतः पत्न्यां लेभेपशुपतिं शिवम् ॥ गणेशश्च स्वयं कृष्णः स्कन्दोविष्णुकलोद्भवः ॥ वभूवतुस्तौतनयौ पश्चात्तस्यच नारद ॥ २८ ॥ कामिके ॥ धिग् धिग् धिग् धिक्च तज्जन्म योन पूजयते शिवाम् ॥ जननीं सर्वजगतः करुणारससागराम् ॥ २९ ॥ अद्भुतरामायणे चतुर्विंशतिसर्गे रामचन्द्रम्प्रति भगवती वाक्यम् ॥ या सा माहेश्वरीशक्तिर्ज्ञानरूपाऽति लालसा ॥ अनन्यानिष्कलेतत्वे संस्थिता रामवल्लभा ॥ ३० ॥ एकाशक्तिः शिवैकोपि शक्तिमानुच्यते शिवः ॥ अभेदञ्चानुपश्यन्ति

दहिना अङ्ग पुरुष वाया अङ्ग स्त्री ॥२७॥ पुनः वहाँ ही लिखा है कि वही मूल प्रकृति हिमवानकी पुत्री हो शिवको पति बना कृष्णके अंशसे गणेश और विष्णुके अंशसे कार्तिकेय दो पुत्र पैदा किये ॥२८॥ कामिकमें लिखा है कि वार वार धिक्कार है उस जन्मको जो शिवा सब जगतका जननी करुणा करनेवाली देवीका नहीं पूजन करते ॥२९॥ अद्भुत रामायण चौबीसवें सर्गमें रामचन्द्रके प्रति भगवतीका वाक्य है कि जो शिवकी अति शोभायमाना ज्ञानरूपा शक्ति तथा अनन्या निष्कला वही शक्ति रामकी पत्नी हुई ॥३०॥ योगी तत्त्वदर्शी सब एक शिव और एक शक्ति दोनोंमें अभेद मानते हैं

मुनयस्तत्वदर्शिनः ॥ ३१ ॥ अन्याश्चशक्तयोदेव्या-
त्वयादेवि विनिर्मिता ॥ योगिनस्तत्प्रपश्यन्ति तव
देव्याः परम्पदम् ॥ ३२ ॥ देव्युवाच ॥ अनन्तमजरं
ब्रह्म केवलं निष्कलं परम् ॥ मां विद्धि परमांशक्तिं
महेश्वर समाश्रयाम् ॥ ३३ ॥ दिव्यं ददामि ते चक्षुः
पश्यमेयोगमैश्वरम् ॥ इत्युक्त्वा विररामैषा रामोपश्यच्च
तत्पदम् ॥ ३४ ॥ दंष्ट्राकरालंदुर्धर्षं जटामण्डलमण्डि-
तम् ॥ त्रिशूलवरहस्तं च घोररूपं भयावहम् ॥ ३५ ॥
दृष्ट्वा च तादृशं रूपं दिव्यं माहेश्वरम्पदम् ॥

॥३१॥ और जितनी शक्तियाँ है सो उसी माहेश्वरी शक्तिसे हुई है और योगी सब उस देवीका परम्पद शिवको देखते हैं ॥३२॥ और देवीने रामसे कहा कि अनन्त अजर ब्रह्म केवल निष्कल शिवके बगलमें रहनेवाली मैं शक्ति हूँ ॥३३॥ मैं दिव्य चक्षु तुमको देती हूँ जिससे तुम हमारे परमपदको देखो दिव्य चक्षु भगवतीने दिया राम उनके परमपदको देखने लगे भगवती बैठ गयी ॥३४॥ राम देखते भये कि बड़े-बड़े दाँत घोर रूप जटामण्डसे आकाश व्याप्त त्रिशूल हाथमें लिए घोर रूप जिसके देखनेसे हृदय कंपायमान हो जाय ॥३५॥ ऐसा दिव्य शिव रूपको देखकर

नाम्नामष्ट सहस्रेण तुष्टाव परमेश्वरीम् ॥ ३६ ॥

इति श्रीमद्योगिवर्य्यविप्रराजेन्द्र स्वाम्यात्मज पण्डित कालिकेश्वरदत्त
विरचिते सिद्धान्तरत्नाकरे तृतीयखण्डे तृतीयस्तरङ्गः

राम आठ सहस्त्र नामोंसे शिव भगवतीका स्तुति किये ॥३६॥

इति श्री भाषाटीकायां तृतीयखण्डे तृतीयस्तरङ्गः ॥

चतुर्थस्तरंगः

श्रीगणेशाय नमः ॥ शान्तं पद्मासनस्थं शशधर मुकुटं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रं शूलं वज्रञ्च खड्गं परशु-मभयदं दक्षिणाङ्गे वहन्तम् ॥ नागं पाशञ्च घराटां डमरुकसहितं सांकुशं वामभागे विश्वाद्यं विश्ववीजं निखिलभयहरं पार्वतीशं नमामि ॥ १ ॥ अथ शिवा-राधनेनैव सर्वे मोक्षंप्राप्तास्तदुक्तं शिवरहस्ये सुदर्शन नामानं ब्राह्मणम्प्रति विष्णु वाक्यम् ॥ सुदर्शन शृणु-

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्री सदाशिव देवको ब्रह्मरन्ध्रमें ध्याय। विविध विषय आगे कहों सब प्रमाण समझाय ॥ शान्त पद्मासनसे बैठे चन्द्रमा ललाटमें पाँच मुख तीन नेत्र दश वाहू दक्षिण पांच वाहूमें शूल वज्र तलवार फरसा अभय और वाम पांच बाहूमें नाग पाश घंटा डमरू अंकुशको धारण किये विश्वका आदि विश्ववीज सब भयको हरनेवाले पार्वती पतिको मैं नमस्कार करता हूँ॥१॥ अनन्य विष्णु भक्तोंने भी ज्ञान मोक्षके लिए शिवका आराधन किये हैं शिवरहस्यमें सुदर्शन नामक ब्राह्मणके प्रति विष्णु भगवानका वचन है कि हमारा अनन्यभक्त हे सुदर्शन! ज्ञान मोक्षका दाता

ष्वैतन्मत्तोऽनन्यमनाद्विज ॥ मोक्षदाता महादेवो ज्ञान-
विज्ञानदायकः ॥ २ ॥ तमाराधययत्नेन भस्मधारणपूर्व-
कम् ॥ मद्दर्शनेन ध्यानेन न मोक्षो जायते नृणाम्
॥३॥ लिङ्गपूजैव कर्तव्या मुमुक्षुभिरहर्निशम् ॥ वह-
वोमोक्षमापन्ना शिवलिङ्गस्यपूजया ॥४॥ तत्रैव पञ्चद-
साध्याये ॥ ऋषिन्प्रति कश्यप वाक्यम् ॥ शिवैक-
शरणोभूत्वा कलौयदि वसेन्नरः ॥ तस्यमोक्षोभवत्येव
सत्यं सत्यं मयोच्यते ॥ ५ ॥ यथाविना सुवर्णेन
दुर्लभो हेमकुण्डलः ॥ तथाविनामहादेवं पूजां
मोक्षोऽपि दुर्लभः ॥ ६ ॥ शिवपूजाम्बिना मोक्षं यस्तु

महादेव हैं भस्म धारण कर उनका आराधना करो केवल हमारा ही
आराधनसे मनुष्योंको ज्ञान मोक्ष नहीं होता ॥२॥३॥ ज्ञान मोक्षके
इच्छावाले पुरुषोंको शिवलिङ्गका पूजा करना चाहिए क्योंकि बहुतसे
शिवपूजक मोक्षको प्राप्त हुए हैं ॥४॥ पुनः वहाँ ही अध्याय पन्द्रहमें
ऋषियोंके प्रति कश्यपका वचन है कि इस घोर कलिकालमें जो
एक शिवके शरणमें रहता है सो मुक्त हो जाता है मैं सत्य-सत्य
कहता हूँ ॥५॥ जैसे सोनाके बिना कुण्डल दुर्लभ है वैसे ही शिव
पूजाके बिना मोक्ष दुर्लभ है ॥६॥ शिव पूजाके बिना जो मोक्षका

कामयते नरः ॥ स मूर्खइतिविज्ञेयः सत्यं सत्यं मयो-च्यते ॥७॥ एवं शङ्करमभ्यर्च्य विष्णुनाप्यति यत्नतः ॥ विष्णुत्वं प्रार्थितं तेन तत्प्राप्तं शंकरार्चया ॥ ८ ॥ एवं शंकरमभ्यर्च्य देवैरन्यैश्च सादरम् ॥ महादेवप्रसादेन तत्पदमुपार्जितम् ॥ ९ ॥ तत्रैव षोड़शाध्याये ब्रह्माणं प्रति विष्णुवाक्यम् ॥ सर्वाधारमनाधारं हरमाद्यन्त वर्जितम् ॥ योन्यतुल्य तयावेद तन्माताव्यभिचारिणी ॥ १० ॥ यस्य निःश्वसितं वेदा नानाशाखा विजृम्भिताः ॥ स देवोऽन्यामरैस्तुल्यो भविष्यति कथं वद ॥११॥ किमत्र बहुनोक्तेन सारमेतद्वचः शृणु ॥ भज-

इच्छा करते हैं सो मूर्ख हैं मैं सत्य-सत्य कहता हूँ ॥७॥ शंकरके पूजा ही से विष्णुने विष्णुत्व प्राप्त किया है ॥८॥ और सब देवताओंने भी शिव पूजा करके अपने-अपने पदको प्राप्त हुए हैं ॥९॥ पुनः वहाँ ही अध्याय सोलहमें ब्रह्माके प्रति विष्णु भगवानका वचन है कि सबका आधार स्वयं निराधार आदि मध्य अन्तसे रहित शिवको जो अन्य देवोंके बराबर जानते हैं उनकी माता पुँश्चली है ॥१०॥ जिनके निःश्वाससे अनेक शाखाओंसे युक्त चारो वेद हुए सो शिव अन्य देवोंके बराबर कैसे हो सकते हैं ॥११॥ बहुत कहनेमें क्या है सार वस्तु मैं कहता हूँ कि शिवका भजन करो हम सबोंका भी शरण

स्वशिवमेवैकं अस्माकं शरणं शिवः ॥ न शिवान्यो-
मोक्षदाता सत्य सत्यं न संशयः ॥ १२ ॥ कूर्म्मे
पुराणे ॥ भोगकामस्तु शशिनं बलकामः समीरणम् ॥
मुमुक्षुः सर्वसंसारात्प्रयत्नेनार्चयेद्धरिम् ॥ १३ ॥ यस्तु-
ज्ञानं तथामोक्षं इच्छेतद्ज्ञानमैश्वरम् ॥ सोर्चयेद्वैवि-
रूपाक्षं प्रयत्नेन महेश्वरम् ॥१४॥ स्कान्दे ॥ प्रह्ला-
देशो ध्रुवेशश्च वाल्मीकेश्वरस्तथा ॥ नारदेशो पर्वतेशो
भृगुणापि समर्चितः ॥ १५ ॥ एतेचान्येच वहवो
वैष्णवा ऋषिसत्तमाः ॥ शिवैकशरणो भूत्वा मोक्षं
प्राप्ता न संशयः ॥१६॥ शिवरहस्ये षड्मुख वाक्यम् ॥

देनेवाला वही है और शिवसे अन्य मोक्षदाता दूसरा नहीं है सत्य-
सत्य कहता हूँ ॥१२॥ कूर्म्मपुराणमें लिखा है कि भोगके इच्छा
वाले चन्द्रमाका बलके इच्छावाले वायुका आराधना करें और
मोक्षके इच्छावाले विष्णुका ज्ञान मोक्षके लिए त्रिनेत्र शिवका यत्न-
पूर्वक आराधना करे ॥१३॥१४॥ स्कन्दपुराणमें लिखा है कि प्रह्लादने
ज्ञान मोक्षके लिए काशीमें प्रह्लादेश्वर ध्रुवने ध्रुवेश्वर वल्मीकने वाल्मी-
केश्वर श्रीशैल पर्वतपर नारदने नारदेश्वर नामक लिङ्गस्थापन कर
ज्ञानमोक्ष प्राप्त किये हैं और भृगुने भी वृषखाततीर्थमें तप करके
शिवको प्रसन्न किये हैं ॥१५॥१६॥ शिव रहस्यमें लिखा है कि

महेशनामामृतदिव्यधारा परिप्लुताङ्गो दवमध्यगोऽपि॥
नशोकमाप्नोति नरोयतोऽहं संरक्षितोवह्निगतः शिवेन
॥१७॥ ब्रह्महत्या सहस्राणि पुराकृत्वापि पुलकशः ॥
शिवेति नाम विमल श्रुत्वा मोक्षं गतः पुरा ॥१८॥
शिवलोकस्य सर्वतः परत्वं दर्शयति ॥ शिवपुराणे
वायुसंहितायां द्वाविंशेऽध्याये ॥ सम्प्राप्य वैष्णवं
ब्राह्मचरुद्रलोकमनामयम् ॥ तत्रोषित्वाचिरंकालं भुंक्ते
भोगान्यथेप्सिताम् ॥ १६ ॥ पुनश्चोर्द्धगतस्तस्मादतीत्य
स्थानपञ्चकम् ॥ श्रीकराठज्ञानमासाद्य परं शिवपुरं ब्रजेत्
॥२०॥ शिवधर्मोपपुराणे पञ्चमाध्याये ॥ उर्द्धरुद्रपुराद्-

कार्तिकेयजी कहते हैं कि शिवनाम रूपी अमृतसे परिलुप्त (डुबा हुआ) अंग जिसका है वह दावानलमें भी नहीं जरता क्योंकि अग्निमें शिवहीने हमारा रक्षा किया ॥१७॥ पुल्कसने हजारों ब्रह्महत्या किया परन्तु शिव नामके स्मरणसे मोक्षको प्राप्त हुआ ॥१८॥ शिवलोक सबसे परे हैं शिवपुराण वायु संहिताके अध्याय वाइसमें लिखा है कि शिव भक्त ब्रह्मलोक विष्णु लोकमें जाकर रुद्र लोकमें मनोवांछित फल भोगकर भूलोक स्वर्गलोक और तीन जो पीछे कह आये हैं इन पाँचोंके ऊपर शिवलोकको प्राप्त होता है ॥१६॥२०॥ शिव धर्म उपपुराणके अध्याय पांचवेमें लिखा है कि

ज्ञेयं स्थानत्रयमनुत्तमम् ॥ नित्यं परमशुद्धञ्च स्कन्दो-
माशंकरात्मकम् ॥ २१ ॥ तत्रैव द्वादशाध्यायेऽपि ॥
द्वात्रिंशत्कोटिविस्तीर्णं द्विगुणेन समन्वितम् ॥ विष्णु-
लोकाच्चपरतः श्रीमच्छिवपुरं महत् ॥ २२ ॥ ईश्वराय
तनस्याग्रे श्रीमान्धर्मवृषस्थितः ॥ यत्रवीर वृषस्तत्र
नित्यं गोमातरस्थिताः॥ २३ ॥ गवां नित्यं सुरक्षार्थं
गोविन्दस्तत्र तिष्ठति ॥ गोलोकः शिवलोकश्च एकएव
ततः स्मृतः ॥ ये गुणारुद्रलोकस्य गोलोकस्यापि ते
गुणाः ॥ २४ ॥ स्कान्दे काशीखण्डे ॥ चतुः कोटि-

रुद्र लोकके ऊपर स्कन्दलोक उमालोक शिवलोक है और यह तीनों
स्थान नित्य शास्वत परम पवित्र है ॥२१॥ वहाँ ही अध्याय
बारहमें लिखा है कि विष्णुलोकसे परे महाशिवपुर है बत्तीस योजन
चौड़ा चौसठ योजन लम्बा है ॥ वहाँ विस्तारसे शिवलोकका वर्णन
करके उसी प्रसङ्गमें गोलोकका भी वर्णन किया है ॥२२॥ शिवके
स्थानके अग्रभागमें धर्म वृषभ रहते हैं और वहाँ ही उनकी माता
गौसवर रहती है उन सबोंके रक्षाके लिए गोविन्द (कृष्ण) रहते हैं
॥२३॥ वही गोलोक है अतः गोलोक शिवलोक एक ही है जो गुण
रुद्र लोकका है वही गुण गोलोकका भी है ॥२४॥ स्कन्दपुराणके

प्रमाणस्तु तपो लोकोऽस्ति भूतलात् ॥ उपरिष्टात्स्थितौ रष्टौ कोट्यः सत्यंसमीरितम् ॥ २५ ॥ सत्यादुपरिवैकुंठो योजनानाम्प्रमाणतः ॥ भूर्लोकात्परिसंख्यातः कोटि षोडश सम्मितः ॥२६॥ ततस्तुषोडशगुणः कैलाशोऽस्ति शिवालयः॥ पार्वत्यासहितः शम्भुः गजास्यस्कन्दन-न्दिभिः ॥२७॥ यत्र तिष्ठति विश्वेशः सकलः परमस्मृतः॥ तस्य देवाऽधि देवस्य स्वलीलामूर्ति धारिणः ॥२८॥ आहूयपूर्वं ब्रह्मादीन् समस्तान्देवगता गणान् ॥ विद्या-धरोरगादींश्च सिद्धगन्धर्व चारणान् ॥२९॥ निजसिं-हासनसमं कृत्वा सिंहासनं शुभम् ॥ उपवेश्य हरिंतत्र

काशी खण्डमें लिखा है कि इस पृथ्वीमें चार करोड़ योजन ऊपर तपलोक है और आठ करोड़ योजन ऊपर सत्य लोक है ॥२५॥ और सोलह करोड़ योजन पृथ्वीसे ऊपर बैकुण्ठ है ॥२६॥ बैकुण्ठसे सोलह योजन ऊपर भूकैलाश रुद्रलोक है जहाँ शिव गणेश कार्तिकेय नन्दीके साथ रहते हैं ॥२७॥ यही रुद्र सगुण रूपसे संहारकर्ता भूकैलाशमें रहते हैं एक समय रुद्रने लीला (खेल) में सब ब्रह्मा विष्णु आदि देवताओंको विद्याधर नाग सिद्ध गन्धर्व आदि गणोंको बुलाकर ॥२८॥२९॥ अपने सिंहासनके समान सिंहासन बनाकर

छत्रं कृत्वा मनोहरम् ॥३०॥ अभिषिञ्च्यमहेशेन स्वयं ब्रह्माण्डमण्डपे ॥ दत्तंसमस्तमैश्वर्यं यन्निजं नान्यगामि च ॥ ३१ ॥ त्वं कर्ता सर्वभूतानां पाता हर्ता त्वमेव च ॥ त्वमेव जगताम्पूज्य स्त्वमेव जगदीश्वरः ॥३२॥ दाता धर्मार्थकामानां शास्तादुर्नयकारिणाम् ॥ अजेयस्त्वञ्च संग्रामे ममापीह भविष्यसि ॥३३॥ त्वद्वेष्टारो हरे नूनं मया त्याज्याः प्रयत्नतः ॥ त्वद्भक्तानां मयाविष्णो देयं निर्वाणमुत्तमम् ॥ ३४ ॥ मायाञ्चापि गृहाणेमां दुःप्राणोघां सुरासुरैः ॥ यथा सम्मोहितं विश्वं अकिञ्चिदुज्ञं भविष्यति ॥ ३५ ॥ इच्छाशक्तिः

विष्णु भगवान्‌को उसपर बैठाकर इस ब्रह्माण्डका राज्याभिषेक विष्णु को दिये ॥३०॥३१॥ आप ही सबका कर्ता रक्षक नाशकर्ता होइए आप ही जगतपूज्य जगदीश्वर होइए ॥३२॥ धर्म अर्थ काम मोक्षका दाता दुष्टोंको दण्ड देनेवाला संग्राममें हमसे भी वलवान आप होइए ॥३३॥ आपका निन्दा करनेवाला हमसे त्याज्य है और आपके भक्तोंको निर्वाणपद मैं दूँगा ॥३४॥ और माया भी आपको मैं देता हूँ जिससे जगत मोहित है उसको ग्रहण कीजिए ॥३५॥ इच्छाशक्ति ज्ञानशक्ति, क्रियाशक्ति जो परमशिवसे हमको मिली है उसको भो

क्रियाशक्तिर्ज्ञानशक्तिस्तथोत्तमा ॥ शक्तित्रयमिदंविष्णोगृहाण प्रापितं मया ॥३६॥ स्कान्दे काशीखण्डे ॥ शिवलोकाच्चगोलोकादुमालोकाच्चसर्वतः ॥ कुमारलोकाद्वैकुण्ठात्सत्यलोकात्समं ततः ॥ ३७॥ तपोजनमहर्भ्यश्च सर्वेस्वर्लोकवासिनः ॥ स्नातुंमाघेसमायान्ति प्रयागमरुणोदये ॥३८॥ तत्रैव हिमालयखण्डे ॥ उमास्थानाच्चपरतः स्थानमाद्य मुमापतेः ॥ विष्णुलोकाच्चपरतः श्रीमच्छिव पुरं महत् ॥ ३९ ॥ पुनस्तत्रैव ब्रह्मोत्तरखण्डे ॥ ब्रह्मादिसुरनाथानां लोकेष्वपि सुदुर्लभः ॥ य आनन्दः सदायत्र स लोकः पारमेश्वरः ॥४०॥ यत्रवासं नकुर्वन्ति कामक्रोधमदादयः ॥ यत्रा-

लीजिए ॥३६॥ पुनः वहीं लिखा है कि शिवलोक गोलोक उमालोक कुमारलोक वैकुण्ठ सत्यलोक आदि सब लोकोंका देवगण माघमासमें त्रिवेणी स्नान करनेको आते हैं ॥३७॥३८॥ पुनः वहाँ ही हिमालय खण्डमें लिखा है कि उमास्थानसे परे उमापतिका स्थान है और विष्णुलोकसे परे महाशिवपुर है ॥३९॥ पुनः वहाँ ही ब्रह्मोत्तर खण्डमें लिखा है कि ब्रह्मा इन्द्र आदि देवोंके लोकमें जो आनन्द दुर्लभ है वह आनन्द शिवलोकमें प्राप्त होता है ॥४०॥ जहाँपर

वस्थानजन्माद्या सलोकः पारमेश्वरः ॥ ४१ ॥ तथाच ब्रह्मवैवर्ते केदारखण्डे ब्रह्माण्डाब्दहिष्टं शिवस्थानं वामदेवमहर्षीन्प्रति सनत्कुमारेण दर्शितम् ॥ तथाहि ॥ अप्राकृतंवहिष्टयद्ब्रह्माण्डज्योति पुञ्जकम् ॥ सत्यज्ञानानन्दमयं मनोवाचा मगोचरम् ॥ ४२ ॥ यं प्रार्थयन्ति योगिन्द्रायोगाभ्यास समाधिना ॥ सालोक्यादिचतुर्भावमुक्तिदं तारतम्यतः ॥ ४३ ॥ अनेककोटिब्रह्माण्डाधारमूतमहोदधौ ॥ लक्षयोजनविस्तीर्णास्वर्णभूरिति शुश्रुमः ॥४४॥ राजन्तेपरितो द्वारा रायष्टौ दिक्षुमणोगणैः ॥ पूर्वदिग्द्वारपालस्तु भृङ्गीरिटी महागणः ॥४५॥

काम क्रोध मद वासन ही करते और जन्म जरा मृत्यु नहीं है वही परमेश्वर शिवका लोक है ॥४१॥ ब्रह्मवैवर्त काशीकेदार खण्डमें सनत्कुमार ऋषिने वामदेव ऋषिके प्रति कहा है कि ब्रह्माण्डसे बाहर अप्राकृत पुरान। मन वचनसे अगोचर सत्य ज्ञान आनन्दमय शिवलोक है ॥४२॥ जिसको योगी लोग सालोक्य आदि मुक्ति द्वारा प्राप्त करते हैं ॥४३॥ अनेक कोटि ब्रह्माण्डोंका आधार एक लक्ष योजन सुवर्णकी भूमि है ॥४४॥ आठ दिशाओंमें आठ मणिके द्वार हैं पूर्व द्वारका अधिपति गणेश अग्नि द्वारका अधिपति भृङ्गीगण है ४५ दक्षिण द्वारका रक्षक महाकाल नैऋत्यका वीरभद्र पश्चिम द्वार

दक्षिणद्वाररक्षीतु महाकालो गणाग्रणीः ॥ नैऋतद्वार-पालस्तु वीरभद्रः शिवाङ्गजः ॥४६॥ पश्चिमद्वाररक्षीतु महाशस्ता शिवात्मजः ॥ वायुदिग्द्वारपालस्तु दुर्गा दुर्गार्तिनाशिनी ॥४७॥ उत्तरद्वारनाथस्तु ब्रह्मण्योस्ति महाशिवः ॥ ईशानदिग् द्वारपतिः शैलादिर्गणनायकः ॥ एतेषां किंकरीभूता असख्या द्वाररक्षकाः ॥४८॥ शिव-धर्मपराश्चात्र शिवाराधनतत्पराः ॥ शिवभक्तार्चकाः पुण्यतारतम्याद्विशंति वै ॥ ४९ ॥ अप्राकृतानां देवानां अगम्यं शिवधामतत् ॥ अन्तःपुरमिति प्राहुः शिव-ज्ञानैकवेदिनः ॥५०॥ तस्यैवाभेदरुद्रोऽयं भूकैलाशी-लयंकरः ॥ महाकैलाशवत्सर्वं भूकैलाशेप्यकल्पयत्

रक्षक महाशास्ताशिवात्मज है वायुकोणके द्वारका रक्षक दुर्गादेवी उत्तर द्वारका रक्षक महाशिव ईशान द्वारका रक्षक शैलाद नामकगण है और इन सबोंके मातहदमें असंख्य द्वार रक्षक हैं ॥४६॥४७॥४८॥ शैव धर्ममें रत शिव पूजामें तत्पर शिव भक्तोंका पूजन करनेवाला पुरुष यहाँ आते हैं ॥४९॥ आधुनिक देवोंसे यह शिवधाम अगम्य है शिवज्ञानी इस स्थानको जानते हैं ॥५०॥ और महाकैलाशके सदृश भूकैलाश

॥ ५१ ॥ शिवपुराणे सनत्कुमार संहितायाम् पंचमा-
ध्याये ॥ तस्योर्द्ध विष्णुलोकाच्च गोलोकश्च
प्रतिष्ठितः ॥ उर्द्धमेकन्तुवैलोकं कोटीनां शतयोजनम् ॥
न शक्यं प्राप्यते गन्तुं वर्जयित्वा शिवानुगान् ॥५२॥
शिवकल्पे ॥ सत्यलोकात्परंविद्धि गोलोकस्य व्यव-
स्थितिः ॥ तस्यचोर्द्धन्तु विख्यातं विष्णोर्यत्परमं पदम्
॥ ५३ ॥ तत्पदं यत्तुविख्यातं तस्मादर्बुदयोजनम् ॥
उर्ध्वंतु वटवृक्षस्वैनिरालम्बं सनातनम् ॥५४॥ तस्यो-
परितुविख्यातं महाकैलाशसंज्ञकम् ॥ स्फाटिकस्यतु
विख्याता तिस्रःकोट्यो महालयाः ॥ ५५ ॥ स्वर्णस्य

बनाकर संहारकर्त्ता रुद्र उसमें रहते हैं ॥५१॥ शिवपुराण सन-
त्कुमार संहिता अध्याय पाँचमें लिखा है कि सबके ऊपर विष्णु
लोक उसके ऊपर गोलोक है उससे भी ऊपर एक लोक है जो शत
कोटि योजन लम्बा और चौड़ा है वहाँ शिवके गण और शिवभक्तोंको
छोड़कर दूसरा नहीं जाने पाता है ॥५२॥ शिवकल्पमें लिखा है कि
सत्यलोकसे परे गो लोक और उससे भी परे विष्णुका परम्पद है
उस परंपदसे अर्बुद योजन उपर निरालम्ब एकवट वृक्ष है ॥५४॥ उसके
ऊपर महाकैलाश है जहाँ तीन करोड़ स्फटिक मणिका गृह है ॥५५॥
सैकड़ों हजारों सुवर्णका गृह और सैकड़ों चान्दीकागृह हैं और विद्रुम

शतसाहस्रं रजस्तस्य शतानि च ॥ विद्रुमस्यत्र संख्या-तामन्दिराणि सुखावहाः ॥ ५६ ॥ तत्रदेवो महाशम्भुः शूलपाणि स्त्रिलोचनः ॥ कन्दर्पकोटिलावण्यो नन्दि-नासहमोदते ॥५७॥ सहस्रदलपद्मञ्च वामभागे उदा-हृदतम् ॥ असंख्यदलरूपेण योगिनां हृदये सदा ॥५८॥ शिवस्य पुरतोवह्निः शिवस्यदक्षिणे सुधा ॥ शिवेन सदृशंनास्ति किंचिदस्ति चराचरम् ॥५६॥ भुवनाध्वे ॥ षडध्वं षोड़शाधारं त्रिलक्षं व्योमपंच-कम् ॥ एतावन्नविजानाति सगुरुर्नहिसुन्दरी ॥६०॥ पृथ्वादिकार्यभूतेभ्यो लोकावैनिर्मिताः क्रमात् ॥ पाता-

मणिका तो असंख्य गृह मनोहर बने हैं ॥५६॥ वहाँ महाशिव शूल पाणि त्रिलोचन कोटि कामके सदृश रूपधारण किये नन्दीके साथ विराजमान हैं ॥५७॥ उनके वाम भागमें हजार दलका कमल और योगियोंके हृदयमें असंख्य दल होकर निवास करते हैं ॥५८॥ शिवके आगे अग्नि दाहिने भागमें अमृत है उनके सदृश चौदहों भुवनमें चराचर कोई नहीं है ॥५६॥ भुवनाध्वमें लिखा है कि शिव कहते हैं कि हे पार्वती ! छः मार्गवाला सोलह आधारोंसे युक्त तीन लक्ष योजनका पाँचवें आकाशमें रहनेवाला हमारे लोकको जो नहीं जानते हैं वे गुरु नहीं हो सकते ॥६०॥ पृथ्वीसे नीचे पाताल आदि सात

लादिचसत्यान्तं ब्रह्मलोकाश्चतुर्दश ॥ ६१ ॥ तदूर्ध्वे-
गाश्चशून्यन्तां लोकाष्टाविंशतिस्थिताः ॥ शुचौदशेतु
कैलाशे रुद्रोभूत हृदिस्थितिः ॥६२॥ षड्रूत्तरास्तु पंचा-
शदहिंशान्तास्तदूर्ध्वगाः ॥ अहिंसालोकमास्थाय ज्ञान
कैलाशके पुरे ॥ कार्य्येश्वरस्तिरोभावं सर्वकृत्वाऽधि
तिष्ठति ॥६३॥ शिवरहस्ये सप्तमांशे दशमाध्याये कस्य-
चिच्छिव भक्तब्राह्मणस्योक्तिः ॥ नाहंभोक्ताशिवोभोक्ता
शिवान्नमितिवालकाः ॥ कुर्वन्तिभोजनं शुद्धं प्रतिग्रासे
ऽपिसर्वथा ॥ ६४ ॥ शिवाय नार्पितं भोज्यं भुज्यते न
कदाचन ॥ शिवाय नार्पितं दिव्यं वस्त्रं न परिधीयते

लोक है और ऊपर सात लोक है ॥६१॥ तिसके ऊपर अट्ठाइस
लोक है तिसके ऊपर सब भूतोंके हृदयमें रहनेवाले रुद्र रहते हैं
॥६२॥ उसके ऊपर छपन योजनके बाद अहिंसायुक्त कैलाशपुर है
जहाँ सदा शिव रहते हैं ॥६३॥ शिव रहस्य अंस सात अध्याय
दशमें किसी शिवभक्त ब्राह्मणका वचन है कि पाक किया हुआ शुद्ध
अन्न भोजन करते समय हमारे घरके बालक कहते हैं कि शिवका
अन्न शिव ही खाते हैं हम नहीं खाते हैं ॥६४॥ शिवको बिना
अर्पण किये अन्न वस्त्र चन्दन पुष्प आदि भोग पदार्थ हमारे कुलके

॥६५॥ शिवाय नार्पितं दिव्यं चन्दनं पुष्प मेववा ॥ नैवास्मदुपभोगार्थं क्रियते स्मत्कुलोद्भवैः ॥ ६६ ॥ बालाः क्रीडनकालेऽपि लिङ्गम्वैमृण्मयंमुदा ॥ कृत्वा-विल्वदलैः शुद्धैः पूजां कुर्वन्ति सादरम् ॥ ६७ ॥ नित्यमस्मत्कुले स्त्रीणां व्रतं हि शिवपूजनम् ॥ शिव पूजां विहायाम्बु पीयते न कदाचन ॥ ६८ ॥ तत्रैव स्वाधिकारप्रच्युतान्देवान्प्रति अगस्त्य वाक्यम् ॥ अन्यदेवसमं मत्वा शिवं देवोत्तमं प्रभुम् ॥ आचन्द्रा-र्कमहाघोरे नरकेषु पतिष्यति ॥ ६९ ॥ समद्यपः सचा-ण्डालः समहापातकाश्रयः ॥ मनुतेयोऽन्य सदृशं देव-देवोत्तमं शिवम् ॥७०॥ प्राप्तं शिवप्रसादेन विष्णुत्वंच

उत्पन्न लोग नहीं ग्रहण करते हैं ॥६५॥६६॥ और हमारे कुलके उत्पन्न वालक खेलते समय मिट्टीका शिव लिङ्ग बनाकर विल्वपत्रसे आदरपूर्वक पूजन करते हैं ॥६७॥ और हमारे कुलके स्त्रियोंका भी यह नियम है कि बिना शिव पूजन किये जल तक नहीं पीती हैं ॥६८॥ पुनः वहाँ ही लिखा है कि एक समय सब देवता अपने-अपने अधिकारसे च्युत होकर पृथ्वीपर घूमते रहे तो अगस्त्य ऋषिने उन सबोंसे कहा है कि देव देवोत्तम शिवको जो अन्य देवोंके समान

त्वयापुरा ॥ अतस्त्वं सार्वभावेन शंकरं शरण व्रज ॥ ॥७१॥ भवद्भिस्तन्मदाविष्टैस्त्यक्तं शंकर पूजनम् ॥ अतएवाधिकारस्ते भवताः प्रच्युताः सुराः ॥ ७२ ॥ समुद्रे पतिता लक्ष्मी रमृतै रेवतामृताः ॥ रत्नैरश्वेन देवेश संयुतानर्चनात्प्रभोः ॥ ७३ ॥ एतादृशं महादेवं सर्वदेव शिखामणिम् ॥ नार्चयन्ति नरामूढ़ाभवन्तइव मोहिताः ॥७४॥ लक्ष्म्यादयः शंकरेण क्षीराब्धौ रक्षितः शिवम् ॥ पूजयित्वाद्यकुर्वन्तु क्षीराब्धिमथनं सुराः ॥७५॥ विधिवत्पार्वतीनाथः कार्यारम्भेषु पूजितः ॥ संहृ-

मानते हैं वे ही नद्यपी चाण्डाल महापातकी हैं ॥७०॥ पूर्व कालमें शिव हीने आपको विष्णुत्व पद दिये हैं अतः सब भावसे शिवके शरणमें जाइये ॥७१॥ शिव पूजन आप सबोंने छोड़ दिया इसीसे अपने-अपने अधिकारसे च्युत होकर घूमते हैं ॥७२॥ शिवका पूजा त्याग करनेसे लक्ष्मी अमृत उच्चैश्रवा ऐरावत आदि चौदहो रत्न समुद्रमें चले गये ॥७३॥ सब देवोंके शिखामणि महादेवको वे ही नहीं पूजते हैं जो आप सबोंके सदृश हैं ॥७४॥ लक्ष्मी आदि सब रत्नोंको समुद्रमें शिवने रक्षा किया है शिवका पूजा करके समुद्र मथनका उद्योग करिये ॥७५॥ क्योंकि कार्यके आरम्भमें जो विधिवत शिवका पूजन करते हैं उनके सब विघ्नोंको नाश करके शिव अवश्य

त्यविघ्ननिवहान् ददाति च फलं ध्रुवम् ॥ ७६ ॥ विघ्नदो विघ्नहर्ता च फलहाफल दोपिच ॥ शिवएवेतिनिर्णीतो वेदवेदाङ्ग पारगैः ॥७७॥ इतितद्वचनं श्रुत्वा ब्रह्मविष्णवादयः सुराः ॥ कुर्वन्त्वत्यन्तयत्नेन पूजायित्वा सदाशिवम् समुद्रमथनोद्योग कुर्वंत्विष्ट फलाप्तये ॥७८॥ ततस्तेमथनोद्युक्ता शिवंविस्मृत्यसत्वरम् ॥ अहंवली वलीत्येव चक्रुर्मथनमुद्यता ॥७९॥ ततः परंमथ्य मानादालोलात्क्षीरसागरात् ॥ कालकूटः समुत्पन्नो ज्वालामालसमाकुलः ॥८०॥ कालकूट भयैनैव त्रस्ता देवाः पुनर्ययुः ॥ अगस्त्यं प्रार्थयामासुस्तान्प्रत्याह

फल देते हैं ॥७६॥ विघ्न करनेवाला और विघ्ननाशक फल नाशक फलदाता शिव हैं ऐसा वेद-वेदांग जाननेवालोने कहा है ॥७७॥ ऐसा अगस्त्य ऋषिका वचन सुनकर सब देवगण शिवका पूजन करके अपना इष्ट फल प्राप्त होनेके हेतु समुद्र मथनका उद्योग करने लगे ॥ ७८॥ समुद्र मथनके समय मैं वली हूँ मैं वली हूँ ऐसा कहकर शिवको विस्मृत कर दिये ॥७९॥ उसी मथनके समय ज्वालायमान कालकूट विष उत्पन्न हुआ ॥८०॥ कालकूटके भयसे देवता सब भागकर अगस्त्यके पास गये और प्रार्थना करने लगे तब अगस्त्यने

मुनीश्वरः ॥८१॥ अहंवलीवलीत्येव भवद्भिर्मोह संवृतैः ॥ विस्मृतः शङ्कर स्तस्माद्भयं प्राप्तं न संशयः ॥८२॥ कशक्ति र्भवतामस्ति समुद्र मथने सुराः ॥ श्रीमहेशवलेनैव कृतं तन्मथनंसदा ॥८३॥ कार्य्यंयद्य-दङ्गभेत्ततुवस्तुतः कर्त्र्यपेक्षितम् ॥ कर्तारमनपेक्ष्यवै कार्यं क्वापि न जायते ॥८४॥ यतः स्तुतंवलंस्वीयमतः क्रुद्धोमहेश्वरः ॥ कालकूटाभिधं क्रोधं ससर्जाऽत्र न संशयः ॥८५॥ शरण्यः शरणंप्राप्योभवद्भिरधुनाशिव-म् ॥ अन्यथा कालकूटोऽयं भवतां नाशकोभवेत् ॥८६॥ कश्यप उवाच ॥ इतितद्वचनं श्रुत्वाविष्णु

कहा कि ॥८१॥ मैं वली मैं वली कहकर शिवको तुम सबोने विस्मरण कर दिया अतः यह भय पहुँचा है ॥८२॥ हे देवताओं ? तुम सबों कि शक्ति समुद्र मथनकी नहीं है श्री महेश्वरके बलसे मथन किया है ॥८३॥ क्योंकि कार्य जितने होते हैं सो कर्ताके बिना कार्य नहीं होता ॥ ८४ ॥ तुम सब अपने अपने बलका प्रशंसा किये हो अतः महेश्वर क्रुद्ध होकर कालकूट नामक क्रोधको छोड़े हैं ॥८५॥ इस समय शीघ्र तुम सब शिवके शरणमें जावो अन्यथा यह कालकूट तुम सबोंको नाश करेगा ॥८६॥ कश्यप ऋषि कहते हैं कि ऐसा अगस्त्यका वचन सुनकर ब्रह्मा विष्णु आदि

ब्रह्मादयः सुरा ॥ तत्रागत्यमहादेवंम्पूजयामासुरादरात् ॥८७॥ ततस्तत्पूजया प्रीतः करुणानिधिरीश्वरः ॥ प्रत्यक्षोभूदुमाकान्तोना नागणनिषेवितः ॥८८॥ श्री महेश्वर उवाच ॥ भवतां भयमेतस्मात्काल कूटात्स-मुद्भुतम् ॥ अतः परंभयंनास्माद्भवतांतु भविष्यति ॥८९॥ एवमुक्त्वास्थिते शंभोःकाल कूटेऽतिभीषणे ॥ दिगन्तराणि संदग्ध्वासुराभ्यास मुपाययौ ॥९०॥ विष्णु ब्रह्मादयोदेवाः कालकूटमुपागतम् ॥ तत्प्रभास्त-प्तसर्वाङ्गा क्रोशन्तः पतिताभवि ॥९१॥ पार्वत्युवां च ॥ एतान्दग्ध्वासुरान्सर्वान् ब्रह्माण्डमपि सत्वरम् ॥

देवतागण वहाँ आकर प्रेमपूर्वक शिवका आराधन करने लगे ॥८७॥ और उन सबोंके पूजासे करुणानिधि उमाकान्त गणोंके साथ आविर्भाव होकर बोले ॥८८॥ कि कालकूटसे जो तुम सबोंको भय प्राप्त हुआ है सो अब भय त्याग करो ऐसा कहकर शिव बैठ गये कालकूट दिशाओंको जारते हुए देवताओंके नगीच पहुँचा ॥८९॥९०॥ विष्णु ब्रह्मा आदि देवता गण कालकूटके तापसे तप्त होकर चिल्ला कर बेहोश हो पृथ्विपर गिर पड़े तब पार्वतीने शिवसे कहा कि हे शिव ! यह कालकूट अद्भुत है मालूम होता है देवताओंको जाकर ब्रह्माण्डको भी भस्म करेगा अतः शीघ्र इसके निवारणका

दहिष्यत्यधुनैवे शोकालकूटोयमद्भुतः ॥६२॥ येनकेनाप्युपायेण कृतश्चेदस्य वारणम् ॥ तदालोका भविष्यन्ति सर्वेऽपि सुखिनः शिव ॥६३॥ कश्यप उवाच ॥ इत्युक्तः श्री महादेवो कालकूटं दुरासदम् ॥ दधार लीलया कण्ठे कस्तुरी कणवन्मुने ॥६४॥ ततः पुनर्महादेवं तत्र सम्पूज्यते सुराः ॥६५॥ ममन्थुरब्धिमुदिता स्मरन्तः पार्वतीपतिम् ॥ ततः शिव प्रसादेन लक्ष्मींप्रापहरिं मुने ॥ ६६ ॥ ऐरावतादीन्प्राप्येन्द्रः शिवैस्यव प्रशादतः ॥ अमृतंप्रापुरमराः सर्वेभागानुरूपतः ॥६७॥ अतएव महादेवो भगवान्भक्तवत्सलः ॥ सावधानो-

उपाय करिये तब सब सुखी होंगे ॥६२॥६३॥ कश्यप ऋषि कहते हैं ऐसा पार्वतीका वचन सुनकर शिवने कालकूटको कस्तुरीके कणके शदश बनाकर कण्ठमें धारण कर लिया ॥६४॥ तत्पश्चात् विष्णु ब्रह्मा आदि देवता उठे महादेवका पुनः पूजनकर शिवका स्मरण करते हुए समुद्र मथने लगे शिवहीके प्रसादसे लक्ष्मीको हरिने पाया ॥६५॥ ६६॥ ऐरावत हस्ती और सब रत्न इन्द्रको मिला देवताओंको अमृत मिला ॥६६॥ कश्यप ऋषि कहते हैं कि अतः (भुक्ति) भोग मुक्ति फलके इच्छावालेको सावधान होकर महादेवका पूजन करना चाहिये।॥६७॥ स्कन्दपुराणके महेश्वर खण्डके अन्तर्गत केदारखण्ड

पूजनीयो भुक्तिमुक्ति फलार्थिभिः ॥९८॥ स्कान्दे महेश्वर खण्डातर्गत केदारखण्डे दशमाध्याये ॥ त्वयायत्कथितं सर्वं ब्रह्माण्डं सचराचरम् ॥ भस्मी भूतं रुद्रकोपात्कालकूटाग्निनाऽखिलम् ॥९९॥ लोमस उवाच ॥ यदा ब्रह्माण्ड मध्यस्थाव्याप्तादेवाविषाग्नि- ना ॥ हरि ब्रह्मादयोह्येतेलोक पालाः सवासवाः ॥ तदाविज्ञापितः शम्भुहेरम्बेन महात्माना ॥१००॥ स्कान्दे प्रभासखण्डे नवमाध्याये मुण्डमाला धारण कथनं तथा संहार कतृत्वं शिवस्यैव ॥ देव्युवाच ॥ यदि त्वञ्च महादेवो मुण्डमाला कथंकृता ॥ शिव

अध्याय दशमें लिखा है कि तुमने जो कहा कि रुद्र कोपकाल कूट विषाग्निसे सब जगत भस्म होने लगा सो कैसे ॥९८॥ तत्र लोमस। ऋषिने कहा कि हरिब्रह्मा लोकपाल आदि देव सब विषाग्निसे भस्म होने लगे तब गणेशने शिवका प्रार्थना किया पिनाकी वृषभध्वज शिव प्रसन्न हो विषको ग्रहण किये ॥१००॥ स्कन्द पुराण प्रभासखंड अध्याय नवमें शिवके प्रति भगवतीका वचन है कि आप सबका सृष्टि करनेवाला अनादि है फिर मुण्डमाला क्यों धारण करते हैं ॥ तब शिव कहते हैं कि हे पार्वती ! हज़ारों नारायण दश हजार ब्रह्मा हमारे एक क्षणमें गत हो जाते हैं और उन्हीं सबोंका मुण्डका माला

उवाच ॥ नारायण सहस्राणां ब्रह्मणामयुतस्य च ॥ कृताशिर करोटीभिरनादि निधनाततः ॥२॥ अन्योविष्णुश्चभवति अन्योब्रह्माभवत्यपि ॥ कल्पे-कल्पेमया सृष्टः कल्पे विष्णुः प्रजापतिः ॥३॥ ममवामेस्थितो विष्णुः दक्षिणेच पितामहः ॥ जठरेचतुरोवेदा हृदये ब्रह्मशाश्वतम् ॥ अग्निः सोमश्च सूर्य्यश्च लोचनेषुव्यवस्थिताः ॥४॥ तत्रैव रेवाखण्डे अष्टादशाध्याये द्वादशादित्यरूपेण संहार कतृत्वं शिवस्यैव ॥ ततस्तेद्वादशादित्या रुद्रवक्त्राद्विनिर्गताः ॥ आश्रितपदक्षिणां मासां निर्दहन्तोवसुन्धराम ॥५॥ ज्वालामाला कुलं कृत्वा जगत्सर्वं चिदात्मकम् ॥ महारूपधरो रुद्रो व्य-

मैं धारण करता हूँ ॥ १ ॥ २ ॥ कल्पकल्पमें पुनः अन्य ब्रह्मा अन्य विष्णु उत्पन्न करता हूँ ॥ ३ ॥ हमारे वामभागमें विष्णु दक्षिण भागमें ब्रह्मा जाठरानलमें चारों वेद हृदयमें साश्वत ब्रह्मशिव रहते हैं और सूर्य चन्द्रमा अग्नि नेत्रमें रहते हैं ॥ ४ ॥ पुनः वहाँ ही रेवाखण्डके अध्याय अट्ठारहमें लिखा है कि रुद्रके मुखसे बारह सूर्य निकलकर दक्षिणायन होकर जगतको भस्म कर देते हैं ॥ केवल चैतन्य रूप रुद्र ही रह जाते हैं ॥ ५ ॥ ६ ॥ पुनः वहाँ ही अध्याय

तिष्ठतचिदात्मकः ॥६॥ तत्रैवषष्ठाध्याये ॥ पुन र्युगान्ते सम्प्राप्ते तृतीयेनृपसत्तम ॥ द्वादशार्कव पुर्भुत्वा भगवान्नीललोहितः ॥७॥ सप्तद्वीप समुद्रान्तां सशैलवन काननाम् ॥ निर्दग्धान्तुमहीं कृत्स्नां कालोभुत्वा महेश्वरः ॥८॥ ब्रह्माण्डपुराणे द्वितीयपादे पंचाशदध्यायेपि ॥ युगाभिमानी कालात्मा नित्यं संक्षयकृद्विभुः ॥ रुद्रःप्रविष्टोभगवान्जगत्यस्मिन्स्वतेजसा ॥९॥ यतः पतिः सभगवान् प्रजेशानां प्रजापतिः ॥१०॥ भावनः सर्वभूतानां सर्वात्मा नीललोहितः ॥११॥ तत्रैव ईशान संहितायाम् ॥ सर्वे रुद्रं मिलि-

छेमें लिखा है कि तृतीय युगके अन्तमें कालरूप बारह सूर्य रूप होकर सातो द्वीप पृथ्वीको दहन कर देते है ॥ ७ ॥ ८ ॥ ब्रह्माण्ड पुराणके द्वितीय पाद अध्याय पचासमें लिखा है कि युगाभिमानी कालात्मा रुद्र नाशकर्ता विभु है और वही रुद्र अपने तेजसे सब जगतमें व्यापक है ॥ ९ ॥ सब जातियोंका पति सब जीवोंसे पूज्य सबका आत्मा रुद्र है ॥ १० ॥ पुनः वहाँ ही ईशान संहितामें लिखा है कि सबका रुद्रमें लय होता है रुद्र अपनेसे अपनेमें लय हो जाते हैं ऐसा वेद कहता है ॥ ११ ॥ साढ़े तीन कोटि ब्रह्माण्डके ब्रह्मा

त्वातुयातीदं प्राकृताइमे ॥ रुद्रः स्वस्मिन्मिलित्वातु यानीदंश्रुतिशासनात् ॥१२॥ संहर्तास महादेवस्तदांन-न्तान्विधीन्हरीन् ॥इन्द्रादी नपरान्देवान् तत्तदण्डेषु संस्थितान् ॥१३॥ तथाविष्णुन्पराच्छुलेसन्निधायविधी-नपि साट्टहास परोनृत्तमानन्देनचकारह ॥१४॥ कौर्म्मे ॥ विद्यांविशालांग्रथितांग्रहै सार्केन्दुतारकैः ॥ मालामप्यद्भुताकारां धारयन्पादलम्बिनिम् ॥ १५ ॥ लैङ्गे । असंख्याताश्च कल्पाख्या असंख्याताः पिता-महाः ॥ हरयश्चाप्यसंख्याताएकएव महेश्वरः ॥१६॥

॥ काशी माहात्म्यम् ॥

शिवरहस्ये सप्तमांशे त्रयोदशाध्याये नारद वाक्यम्

विष्णु इन्द्र आदि देवोंका नाशकर्ता रुद्र ही है ॥ १२ ॥ १३ ॥ और वही रुद्र ब्रह्मा विष्णुको त्रिशूलमें लगाकर एक महास्मशान बनाकर आनन्द हो गरजते हैं ॥ १४ ॥ कूर्मपुराणमें लिखा है कि अष्टादश विद्यावोंसे युक्त सूर्य चन्द्रमाग्रहतारावोंसे सुशोभित आपाद-लम्बिनी माला शिव धारण करते हैं ॥ १५ ॥ कल्प बहुत है ब्रह्मा विष्णु भी ससंख्य है शिव एक ही है ॥ १६ ॥ शिवरहस्य अंश सात अध्याय तेरहमें नारदका वचन है कि जिनके प्रसन्नताके समान और किसीका प्रसन्नता फलदायक नहीं होता वही भगवान् शिव श्रुतियोंसे

यत्प्रशादशमोनास्ति प्रशादोऽन्यस्य वस्तुतः ॥ सश्रोतव्यइतिश्रुत्या कीर्त्यते भगवान् शिवः ॥१७॥ क्षेत्राणि च मयादृष्टान्यनेकानि सहस्रधा ॥ काशीक्षेत्रसमं क्षेत्रं न दृष्टं क्वापि सर्वथा ॥१८॥ चतुर्दशानिभुवनान्येकस्मिन् दिवसेमया ॥ दृश्यन्तेभुवनेष्वेवएका काश्येवमुक्तिदा ॥ १९ ॥ परात्परतरं यत्तु परात्परतरः शिवः ॥ स एव काशी काशीति ततः किमधिकं वद ॥ २० ॥ पुनस्तत्रैव पञ्चमाध्याये ॥ यत्रकाश्यां महादेवो जन्तुमात्रस्य सादरम् ॥ देहान्ते परमं शैवं मन्त्रंदातुं समुद्यतः ॥२१॥ यत्प्रसादेन वैकुण्ठं प्रापपूर्वं जनार्दनः ॥ स एव भगवान् तत्र

कहे जाते हैं ॥१७॥ हजारों तीर्थ मैंने देखा परन्तु काशीके समान दूसरा तीर्थ नहीं है॥१८॥ मैं चौदहो भुवन एक दिनमें भ्रमण करता हूँ पर मुक्ति देनेवाला काशीके सदृश दूसरा तीर्थ नहीं देखा ॥१९॥ बड़ासे बड़ा और उससे भी बड़ा जो शिव सो काशीमें रहते हैं काशीसे अधिक कौन हो सकता है॥२०॥ पुनः वहाँ ही अध्याय पाँचमें लिखा है कि जिस काशीमें अन्तकालमें जीवमात्रको परम शैवमन्त्र शिव उपदेश करते हैं ॥२१॥ जिनके प्रसादसे विष्णु भगवान वैकुण्ठ पाये

लिंगरूपेण तिष्ठति ॥२२॥ यत्प्रसादेन लोकानां पालकोभूज्जनार्दनः ॥ सएव भगवान्तत्र लिङ्गरूपेण तिष्ठति ॥२३॥ यत्प्रशादाच्छंखचक्रे प्रापपूर्वंजनार्दनः ॥ सएव भगवान् तत्रलिङ्गरूपेण तिष्ठति ॥२४॥ तत्रैव श्रीशैलमाहात्म्यकथनेषड्मुखवाक्यम् ॥ पदे पदेऽत्र तीर्थानि लिङ्गान्यत्र पदेपदे ॥ अत्र पूर्वं तपस्तप्तं काशीप्रापत्यर्थं मास्तिकैः ॥ काशीं प्राप्ताच तैः शुद्धैः सिद्धाः सिद्ध तपोधनैः ॥२५॥ भविष्यपुराणे द्वादशाध्याये ॥ यथा काशीपुरीनृणां सर्वेषां तारिणीभुवि ॥ पुण्यात्मनां पापवतां तथा भक्तिर्हितारिणी ॥२६॥ स्कान्दे काशीखण्डे

वही भगवान् शिव यहाँ निवास करते हैं ॥२२॥ जिनके प्रसादसे विष्णु सब जगतका पालक हुये वही शिव लिङ्गरूपसे यहाँ रहते हैं ॥२३॥ और जिनके प्रसन्नतासे विष्णुको शङ्ख चक्र मिला वही शिव लिङ्ग रूपमें यहाँ रहते हैं ॥२४॥ पुनः वहाँ ही श्री शैल पर्वतका माहात्म्य कथन प्रसंगमें कार्तिकेयका वचन है कि पद-पदमें यहाँ तीर्थ और लिङ्ग है पूर्वकालमें ऋषि सब काशी प्राप्त होनेके लिये यहाँ तप किये हैं। काशी प्राप्तकर शुद्ध तपस्वी हुये ॥२५॥ भविष्यपुराणके अध्याय बारहमें लिखा है कि जैसे इस पृथ्वीपर काशीपुरी पापी पुण्यात्मा सबको मुक्ति देनेवाली है वैसे ही भक्ति सबको तारनेवाली है ॥२६॥

अन्यानि मुक्तिक्षेत्राणि काशीप्राप्ति कराणि च ॥ काशीम्प्राप्यविमुच्येत नान्यथा तीर्थकोटिभिः ॥२७॥ काशीकांची चमायाख्या त्वजोध्याद्वारवत्यपि ॥ मथुरा-वन्तिकाचैतास्ससप्तपुर्य्योत्र मुक्तिदा ॥ २८ ॥ श्रीशैलो मोक्षदः सर्वैः केदारोपिततोधिकः ॥ श्रीशैलाच्चापिकेदारा-त्प्रयागं मुक्तिदं परम् ॥ प्रयागादपि तीर्थाग्र्यादविमुक्तं विशिष्यते ॥२९॥ वाराणस्यां निवसतां यत्पुण्यमुपजा-यते ॥ तदेवसंवासयितुः फलंत्वविकलं भवेत् ॥३०॥

॥ सोमवार माहात्म्यम् ॥

शिवरहस्ये ॥ अस्य कार्तिकमासस्य चत्वारः

स्कन्दपुराणके काशीखण्डमें लिखा है कि और सब मुक्ति देनेवाले तीर्थोंमें वास करनेसे काशी प्राप्त होती है काशी मरनेसे पुनर्जन्म नहीं होता ।।२७।। काशी, काञ्ची, हरिद्वार, अयोध्या, द्वारिका, मथुरा, उज्जयिनी ये सात पुरी मोक्ष देनेवाली है ।।२८।। श्रीशैल और केदार यह भी दोनों मोक्ष देनेवाले हैं और इन दोनोंमें से अधिक केदार और इन सब तीर्थोंसे अधिक काशी है ।।२९।। काशीमें वास करनेसे जो फल प्राप्त होता है वही फल दूसरोंको वास करानेसे होता है ।।३०।। शिवरहस्यमें सोमवार व्रतका माहात्म्य लिखा है कि कार्तिक

सोमवासराः ॥ पुण्येष्वेतेषु सर्वेषु निशिशंकर पूजनम् ॥३१॥ शिवस्योमासमेतस्य बासरः सोमवासरः ॥ तस्मिन्निस्यर्पिते शम्भोः प्रसीदति महेश्वरः ॥ ३२ ॥ स्कान्दे ब्रह्मोत्तरखण्डे प्युक्तम् ॥ सर्वेष्वपिच मासेषु सोमवार वरोवरः ॥ तत्रापि कार्तिकः पुण्यः श्रावणः स्तच्छ्तोबरः ॥ ३३ ॥ तस्मिन्नुपोषणं पूजाप्रशस्ता सोमवासरे ॥ शक्तेनोपोषणं कार्यं अन्यथा निशिभोजनम् ॥ ॥३४॥ सोमार्द्रयातु युक्तो यः शिवयोगः सएव हि ॥ सहरार्कग्रहः स्वल्पः सर्वपाप प्रनाशकृत् ॥ ३५ ॥ ये

मासका चारों सोमवारोंको रात्रिमें शिवपूजा करना चाहिये ॥३१॥ उमाके साथ शिव सोम कहते हैं उनका जो वार सो सोमवार है उस दिन रात्रिमें पूजनसे शिव प्रसन्न होते हैं ॥३२॥ स्कन्दपुराणके ब्रह्मोत्तरखण्डमें भी लिखा है कि सब मासोंका सोमवार उत्तम है उसमें कार्तिक सवगुणा श्रेष्ठ है और उससे भी श्रावणका सोमवार उत्तम है ॥३३॥ श्रावणके सोमवारको पूजा व्रत करना उत्तम है उपवासमें जो असमर्थ हो सो दिनमें न भोजन करे रात्रिमें पूजा करके भोजन करे ॥३४॥ सोमवारको आर्द्रा नक्षत्र हो तो शिवयोग है उसको हरार्कग्रह कहते हैं सब पापोंका नाश करनेवाला है ॥३५॥ जो सोमवारको दिनमें भोजन करते हैं वे विष्ठा भक्षण करते हैं और

सोमवासरे स्वच्छन्दं दिवाकुर्वंति भोजनम् ॥ ते विष्ठा-भोजनंदेवि भविष्यति परेतकाः ॥ ३६ ॥ वारव्रते द्विजगणे पिनिषेधितेऽपि नत्याज्यमेतदगजेकिल सोमवारः॥ सर्वेषु मासगणनासुविशिष्ठमासोयच्छ्रूणो-र्जपरयोरपि पुण्यभाक्स्यात् ॥ ३७ ॥

॥ शिवस्य पशुपतित्वम् तथा पाशुपतव्रतम् ॥

सूतसंहितायाम् ॥ ब्रह्माद्यास्थावरान्ताश्च पशवः परिकीर्तिताः ॥ तेषां पतिरहं देवः स्मृतः पशुपतिर्बुधैः ॥३८॥ मायापाशेन बध्नामि पशूस्तान्कमले क्षणे ॥ तेषां पशूनां सर्वेषां मोचकोऽहं सुलोचने ॥ मामेव

प्रेतयोनिमें जाते हैं ॥३६॥ शिव कहते हैं पार्वतीसे कि हे पार्वती ! वार व्रत द्विजोंके लिये त्याज्य है परन्तु कार्तिक श्रावणका सोमवार नहीं त्याज्य है और विशेष पुण्य देनेवाला है ॥३७॥ शिवका पशुपति नाम होनेका कारण और पाशुपत व्रतका माहात्म्य सूतसंहिता में पार्वतीके प्रति शिवका वचन है कि हे कमलनयनी ! ब्रह्मासे (स्थावर) वृक्षादि सब पशु हैं उनका पति मैं हूँ अतः पशुपति मेरा नाम है ॥३८॥ हे सुलोचने ! सबको मायापाशमें मैं बाँधता हूँ और

मोचकं प्राहुः श्रुतिः साध्वी सनातनी ॥ ३९ ॥ अथर्व शिर उपनिषदि ॥ रुद्रोहि शाश्वतेनवै पुराणेनेषमूर्जेण तपसानियन्ताग्निरिति भस्मवायुरिति भस्मजलमिति भस्मस्थलमिति भस्मव्योमेति भस्मसर्वं हवाइदं भस्म मनएतानि सर्वेन्द्रियाणि चक्षुंषि भस्मानि तस्माद्व्रत-मिदं पाशुपतं यद्भस्मनाऽङ्गानि संस्पृशेत् तस्माद्व्रत-मेतत्पाशुपतं पशुपाश विमोक्षणाय ॥ ४० ॥ देवानां पशुत्वं तदुक्तं लैङ्गे ॥ माया पाशनिवद्धत्वाद्ब्रह्माद्या-पशवस्मृताः॥ तेषांपतित्वात्सर्वेशो भवः पशुपतिस्मृतः ॥ ४१ ॥ तेन प्रणीतोरुद्रेण पशूनां पतिना द्विजाः ॥

छोड़ता हूँ और वेदकी श्रुति भी हम ही को छुड़ानेवाली कहती है ॥३९॥ अथर्व शिर उपनिषदमें भी लिखा है कि रुद्र ही पुराण वेदोंसे सबका नियन्ता है और अग्नि वायु जल आकाश मन चक्षु आदि सब इन्द्रियाँ भस्म रूप हैं अतः पशुपाश छूटनेके हेतु पाशुपत व्रत करना चाहिये ॥४०॥ देवता सब पशु हैं सो लिखा है लिङ्गपुराणमें कि मायापाशमें बँधे हुये ब्रह्मा विष्णु आदि देवता पशु हैं उन सबोंका पति शिव हैं अतः पशुपति उनका नाम हैं ॥४१॥ और पशुपतिका

योगः पाशुपतो ज्ञेयः परावर विभूतये ॥१४२॥

इति श्रीमद्योगिवर्य्यविप्रराजेन्द्र स्वाम्यात्मज पण्डित कालिकेश्वरदत्त संग्रहीते सिद्धान्तरत्नाकरे तृतीयखण्डे चतुर्थस्तरङ्गः

॥ समाप्तोऽयं ग्रन्थः ॥

बनाया पाशुपत योग अपार विभूतिको देनेवाला है ॥१४२॥

इति श्री भाषाटीकायां तृतीयखण्डे चतुर्थस्तरङ्गः समाप्तः ॥

वेदांकग्रह भूसंख्ये वैक्रमीये च फाल्गुने ।
लक्ष्मीनारायणाख्येण नाथान्तेन प्रयासतः ।
कलिकत्ता नगर्य्याञ्च 'प्रवासी प्रेस' मुद्रितम् ॥

श्रीगणेशाय नमः

शम्भुत्कर्षस्तोत्रम्

नत्वासदाशिवंदेवं गुरुं शङ्कर रूपिणम्।
शम्भुत्कर्षस्यभाषार्थं व्याचक्षे कालिकेश्वरः ॥

दोहा :—श्रीसदा शिवदेवको, योगिराज सिर नाय।
शम्भुत्कर्ष स्तोत्रका, भाषा करौं बनाय ॥

ब्रह्माण्डपुराण अध्याय अट्ठाइसमें और स्कन्दपुराणके काशी-खण्डमें यह स्तोत्र वेदव्यास कृत है इसका कथा यों लिखी है। एक समय वेदव्यासजी भ्रमण करते-करते दक्षिण दिशाको गये और वहाँपर अवैदिक वैष्णवोंके मायामें पड़ गये। कण्ठी तिलक मुद्रा धारणकर विष्णुका माहात्म्य बकने लगे और वहाँसे घूमते-घूमते नैमिषारण्य क्षेत्रमें आये वहाँपर अट्ठासी हजार ऋषि सब जै शङ्कर जै सोमेश जै महादेव आदि नामोंसे स्तुतिकर शिवका भजन करते रहे। तब व्यासने कहा कि यह तुम सब क्या करते हो मैंने एक नया सिद्धान्त निकाला है सो सुनो।

परिनिर्म्मथ्य वाग्जालं सुनिश्चित्या सकृद्दृढ़।
इदमेकं परिज्ञातं शेव्यस्सर्व्वेश्वरो हरिः ॥

ये सार्ङ्गिणम्परित्यज्य अन्यदेव मुपाशते ।
ते सद्भिश्च वहिष्कार्य्या वेदहीना यथा द्विजाः ॥
नारायणम्परित्यज्य येऽन्यद्देवम्भजन्ति वै ।
तृषितोजह्नवी तीरे कूपं खनति दुर्मतिः ॥

सब वाग्जालोंको मंथनकर अनेक बार निश्चय करके मैंने एक सिद्धान्त निकाला है कि सबका ईश्वर विष्णु हैं और वही शेव्य हैं। जो पुरुष धनुर्धारी विष्णुको छोड़कर अन्य देवोंका भजन करते हैं वे सत्पुरुषोंसे बाहर करने योग्य हैं। नारायणको छोड़कर जो अन्य देवोंका भजन करते हैं सो प्यासे हुए गङ्गाके तीरमें कूप खनते हैं। इत्यादि व्यासका वचन सुनकर ऋषि लोग बोले कि—

अष्टादश पुराणानां निष्ठा काष्ठामहेश्वरे ।
निग्रहानुग्रहेणैव रूपेण मुनिसत्तम ॥

हे व्यास! आपने अष्टादश पुराणोंको जब बनाये तब निष्ठा (भक्ति), काष्ठा (परत्व वर्णन) शिवका परत्वनिग्रह (क्रोधसे दंड) अनुग्रह (तपसे वरदान) रूपसे कहा अब ऐसा कहते हैं तो आपका वचन बालकके सदृश मालूम पड़ता है जैसे बालकको यह नहीं मालूम पड़ता कि पीछे क्या कहा और आगे क्या कहते हैं। अतः आप काशीमें चलकर प्रतिज्ञापूर्वक कहिये क्योंकि वहाँ युगधर्म नहीं है और पृथ्वीसे अलग काशी है यदि आपके कथनमें कोई विघ्न न होगा तो हम सब मानेंगे। ऐसा ऋषियोंका वचन सुनकर व्यासके हृदयमें कुछ क्रोध हुआ कि अष्टादश पुराणोंका कर्ता मैं हूँ और मेरा कहना ये लोग न मानें अतः मैं काशीमें चलकर कहूँगा बस सब ऋषियोंको साथ लेकर व्यास काशीमें आये और कण्ठी तिलक मुद्रा

धारणकर वेणी माधव विष्णुका पूजनकर सब ऋषियोंके साथ ज्ञानवापीके समीप बृहन्नन्दीके आगे दक्षिण बाहू उठाकर गान करते हुए पुनः उन्हीं श्लोकोंको पढ़े बस नन्दीके दृष्टिसे व्यासका वाक् पाद भुज तीनों स्तम्भन हो गया काष्ठवत हो गये बड़ा हाहाकार मचा थोड़ी देरके बाद वेणीमाधव विष्णु गुप्तरूपसे आकर व्यासके कानमें बोले— तत्प्रशादादहंचक्री लक्ष्मीशस्तत्प्रसादतः ।

त्रैलोक्यंरक्षा सामर्थ्यं दत्तंतेनैव शम्भुना ॥

इदानिंस्तूहितं शम्भुं यदिमेशु भमिच्छसि ।

कि शिवके प्रसादसे मैं चक्रीश कहलाता हूँ चक्रसुदर्शन जो मेरा प्रधान शस्त्र है सो शिव ही का दिया हुआ है महिम्न स्तोत्र उशनस उपपुराण आदि कई पुराणोंमें इसकी कथा लिखी है ।

हरिस्ते साहस्रं कमल वलिमाधायपदयो-

र्य देकोनेतस्मि न्निजमुदहरन्नेत्रकमलं ॥

पुनः ॥ गृहाणचक्रं ममसूर्य्य वर्चसं सुदर्शनंना-

म सुरारि घातकम् ॥ इत्यादि ।

हजार कमल पुष्पोंसे नित्य शिवका पूजन करनेका विष्णु भगवानने नियम किया एक दिन एक कमल घट जानेपर अपना नेत्र रूपी कमल निकाल चढ़ा दिया तब शिव प्रसन्न होकर सब दैत्योंको मारनेवाला सूर्य्यके सदृश देदीप्यमान सुदर्शन चक्र दिये और उसी दिनसे विष्णुका नाम कमलाक्ष हुआ और पुनः विष्णु भगवान कहते हैं कि शिव ही के प्रसादसे मैं लक्ष्मीश हूँ । सो लिखा है शिवरहस्य में कि— ममन्थुरब्धि मुदिताः स्मरन्तः पार्वतीपतिम् ।

ततः शिवप्रसादेन लक्ष्मीम्प्राप हरिर्मुने ॥

ऐरावतादी न्प्राप्येन्द्रः शिवस्यैव प्रसादतः ।
अमृतं प्रापुरमः सर्वे भागानुरूपतः ।
अतएव महादेवोभगवा न्भक्तवत्सलः ।
सावधानो पूजनीयो भुक्ति मुक्ति फलार्थिभिः ॥

शिवको स्मरण करते देव दैत्य दोनों दल समुद्र मथन करते रहें तब तक ज्वालायमान विष उत्पन्न हुआ सब लोग उस विषके तापसे तप्त होकर पृथ्वीपर गिर पड़े शिव उस विषको थोड़ेमें करमें अपने कण्ठमें धारण कर लिये बाद सब उठे और मन्मथ करने लगे शिवके आज्ञासे विष्णु भगवानको लक्ष्मी मिलीं ऐरावत आदि रत्न इन्द्रको मिला और शिव ही के आज्ञासे अमृत सब देवोंको मिला अतएव भगवान भक्तवत्सल शिवका भुक्ति मुक्तिके इच्छावाले पुरुषोंको सावधान होकर पूजन करना चाहिये । पुनः व्याससे विष्णुने कहा कि तीनों लोककी रक्षा करनेकी शक्ति भी शिवने ही दी है इसका कथा भी स्कन्द कूर्म्म महाभारत आदि कईएक स्थानमें विस्तारसे लिखा है कि— दक्षिणाङ्गात्समुत्पाद्य सृष्टिकर्मण्ययजोजयत् ।
वामाङ्गाद्विष्णुमुत्पाद्य रक्षणत्वेन्यजोजयत् ॥
अग्रतो रुद्रमीशानं कालात्मा परमेश्वरः ।
स्वयं गुणत्रयातीतो नित्यं तिष्ठति शङ्करः ॥

रजोगुण अंशसे ब्रह्माको दक्षिण अङ्गसे उत्पन्न कर सृष्टिकी आज्ञा दी और सतोगुण अंशसे वामाङ्गसे विष्णुको उत्पन्न कर पालनकी आज्ञा दी तमोगुणसे अग्रभागसे रुद्रको उत्पन्न कर संहारकी आज्ञा दी अपने तीनों गुणोंसे पृथक् कालात्मा परमेश्वर शङ्कर हैं । अतः विष्णु भगवान कहते हैं कि हे व्यास ! यदि हमारा कल्याण चाहते

हो तो शिवकी स्तुति करो तब इशारासे व्यासने कहा कि कण्ठ बन्द है स्तुति कैसे करें व्यासके कण्ठमें विष्णु बैठ गये और वह स्तुति करने लगे ।

॥ स्तुतिः ॥

एकोरुद्रो नद्वितीयोवतस्थे तद्ब्रह्मैकं नेहनास्ति-किंचित् ॥ यद्यस्त्वन्यः कोपिवाकुत्रचिद्वा व्याचष्टान्त र्यस्यशक्तिस्समिश्रा ॥ १ ॥

एक रुद्र हैं दूसरा कोई नहीं है और वही एक परब्रह्म सर्वत्र व्यापक होकर रहता है, अनेक प्रकार जो जगत सो मायासे भासमान होता है और यदि कोई है भी सो सब उनके शक्तिके भीतर है ॥१॥

केनोपनिषदमें लिखा है कि—

शिवमद्वैतं तुरीयंमन्यन्ते सआत्मा सविज्ञेयः ।

एक शिव तूरीय (समाधिमें प्राप्त होनेवाला) आत्मा जानने योग्य है । और ब्रह्मलोक विष्णुलोक इन्द्र आदि देवोंके लोकमें जो विभव है सो सब उनके कटाक्षसे है । जैसे महिम्न स्तोत्रमें लिखा है कि—

सुरास्तास्तामृद्धिं विदधतिभवद्भ्रूप्रणीहितां ।

सब देवोंकी जो ऋद्धि सिद्धि है सो आपके भ्रूकटाक्षसे हुई है इत्यादि ॥

यत्क्षीराब्धे र्मन्दराघातजातो ज्वालामाली कालकूटो तिभीमः ॥ तंसोढुम्वा कोपरोभून्महेशा यत्कीलाभिः कृष्णता मापविष्णुः ॥ २ ॥

क्षीर समुद्रसे मन्थनके समय मन्दराचलके आघातसे जो ज्वाला-यमान विष निकला उसका वेग शिवसे अन्य कौन सहनेवाला है जिस विषके लपटसे विष्णु काला हो गये ॥२॥

इसकी कथा शिवरहस्य और स्कन्दपुराण आदि कई जगहमें लिखा है कि एक समय सब देवता शिवसे विमुख हो गये बस उन सबोंका सब रत्न समुद्रमें चला गया मर्त्यलोकमें देवता सब मारे-मारे फिरते रहे तब कश्यप ऋषिने विष्णु भगवानसे कहा कि शिवका पूजनकर आप सब समुद्र मथनका उद्योग कीजिए बस समुद्र मथन होने लगा मैं वली मैं वली मैं वली ऐसा कहकर शिवको विस्मृत सब लोग कर दिये तब शिवने कालकूटको उत्पन्न किया सब जरने लगे कालकूटसे भयभीत हो सब देवता कश्यप ऋषिके पास गये कश्यपने कहा कि तुम लोग शिवको विस्मृत कर अपने बलका प्रशंसा किया अतः शिवका क्रोध कालकूट है ।

कालकूटाभिधं क्रोधं ससर्यात्र महेश्वरः ।
विस्मृतः शंकरस्तस्माद्भयं प्राप्तं न संशयः ॥

अतः पुनः शिवका पूजन करो सबोंने शिवका बहुत विधिवत् पूजन किया शिव प्रसन्न होकर आविर्भाव हो बोले कि तुम सब मन्थन करो कालकूटसे भयमत करो वस शिवने कालकूटको कस्तुरीके कणोंके सदृश बनाकर कण्ठमें धारण कर लिए जैसे कि लिखा है—

दधारलीलया कण्ठे। कस्तुरी कणवन्मुने।
ततस्तु हर्षिताः सर्वे ब्रह्मविष्णवाद्यः सुराः॥

तब सब ब्रह्मा विष्णु आदि देव हर्षित हो समुद्रका मथन करने लगे बाद शिव हीके आज्ञासे रत्न सब देवोंको मिला। जैसे किसी कविने कहा है—

गङ्गा धृता नभवता शिव पावि नीति।
नास्वादितो मधुरइत्यपि काल कूटः॥
संरक्षणाय जगतां करुणातिरेकात्कर्म्मद्वयं।
कलितमेत दनन्य साध्यम्॥

हे शिव! आपने गङ्गाको इस विचारसे नहीं धारण किये कि गङ्गा हमको पवित्र कर देंगी और कालकूलको मीठा समझकर नहीं भक्षण किये जगतके रक्षाके लिए और दूसरेसे साध्य नहीं रहा। अतः आपने यह दोनों काम किये।

यद्वाणोऽभू च्छ्रीपतिर्यस्य यन्ता लोकेशोयत्स्यन्दनं भूः समस्ताः॥ वाहावेदा यस्य चैकेषु याता दग्धा ग्रामा स्ताः पुरास्तत् समः कः॥ २॥

त्रिपुरके वधके लिये दश दिक्पाल और पृथ्वी रथ हुई विष्णु भगवान वाण हुए चारों वेद घोड़ा हुआ एक ही वाणमें तीनों पुरको शिवने भस्म कर दिया उनके सदृश दूसरा कौन हो सकता है॥३॥

स्कन्दपुराणमें और भी कई पुराणोंमें इसका कथा यों लिखी है कि त्रिपुर नामक दैत्यका तीन पुर रहा एक पातालमें एक मर्त्यलोकमें

और एक स्वर्गमें जहाँ जाता रहा रथके सदृश तीनों पुरको लिये जाता रहा उसने यही वंर माँगा था कि तीनोंपुर एक ही वाणसे जो भस्म कर दे वही हमको मारे किसीसे नहीं हो सका तब सब देवतागण शिवके पास गये शिवके शरीरसे एक तेज निकला उस तेजसे सब पशु होकर रथका सामग्री हो गये शिव उसी रथपर बैठकर एक ही वाणमें तीनोंपुर और त्रिपुरको भस्म कर दिया वाद देवता सब पशुत्व छूटनेका शिवसे प्रार्थना किये शिवने उन सबोंको पाशुपत ब्रत उपदेश किये और कहे कि इस ब्रतसे पशुत्व छूट जायगा लोकमें और भी जो इस ब्रतको करेंगे सो मायारूपी पाशसे छूटकर हमारे समीप प्राप्त होंगे।

येचाप्यन्ये चरिष्यन्ति ब्रतं पाशुपतंत्विदं
माया पाशैर्विनिर्मुक्ता गमिष्यन्तिचमत्पदम।

यंकन्दर्पो वीक्ष्यमाणः समानं देवैरन्यै र्भस्मजातः स्वयं हि ॥ पौष्पैर्वाणैस्सर्व्वविश्वैकजेता कोवातुल्यः कामजेतु स्ततोऽन्यः ॥ ४ ॥

जिनको कामदेवने सब देवोंके बरावर समझकर पुष्पवाणसे जीतना चाहा अनायास भस्म हो गया ऐसे सब विश्वको जीतनेवाले शिवके बराबर कौन हो सकता है ॥४॥ यह कथा शिवरहस्य आदि कई जगहपर लिखी है कि एक समय कामदेवने यह समझा कि सब देवोंको मैंने जीतलिया तो शिव भी पार्वतीके साथ रहते हैं सब देवोंके बराबर ही हैं अतः उनको भी जीत लूँगा ऐसा विचारकर

आया और अपना माया फैयाया शिव समाधि लगाये बैठे रहे एक वा एक समय परिवर्तन देखकर शिवको आश्चर्य हुआ कामदेवका सब कर्तव्य जानकर तृतीय नेत्रसे भस्म कर दिये जैसे कि लिखा है ॥

भालाद्बभाल सम्भुत श्चित्र भानुर्भयंकरः ।
भस्मावशेषं कृत्यैव प्रशान्त स्तदनन्तरम् ॥
समन्मथस्तदानीत स्तदैव यमकिंकरैः ।
पातितश्चातिघोरेषु नरकेषु प्रयत्नतः ॥
अतोनान्यसमं शम्भुं अन्यतुल्यतया भ्रमात ।
येभिजानन्ति दुर्वृत्ताः तेषामेतादृशी गतिः ॥

शिवके ललाटसे विचित्र भयंकर अग्नि निकलकर कामदेवको भस्मकर शान्त हुई और उसी कालमें यमके दूतोंने कामदेवको नरकमें ले गये अतः शिवको अन्य देवोंके समान जो जानते हैं उनकी ऐसे ही गति होती है ॥

यच्छूलाग्रे प्रोतगात्रः सहेति विष्वक्सेनः स्कन्दपार्श्वे-विलम्बन् ॥ हाहाचक्रे लंकृतिम्वाविदेहः कोवातस्मा-च्छूलिनः शाश्वतोऽन्यः ॥ ५ ॥

जिन्होंने अपने शूलमें विष्णुके प्रधानगण विष्वसेनको गुथ लिये और कन्धेपर रखकर ले चले फिर उस रूद्रके बराबर कौन हो सकता है ॥५॥

स्कन्दपुराण ब्रह्मखण्ड अध्याय चौबिसमें यह कथा लिखी है कि—एक समय ब्रह्मा विष्णु दोनों आपसमें लड़ते रहे कि मैं सबसे

बड़ा हूँ विष्णु कहते रहे कि मैं सबसे बड़ा हूँ इसीमें वेद और ॐकार मूर्तिरूप होकर बोला कि—

नत्वंविष्णो जगत्कर्ता नत्वं ब्रह्मन्प्रजापते ।
किंत्वीश्वरो जगत्कर्ता परात्परतरो विभुः ॥
ब्रह्मन्नयंसृष्टिकाले त्वांनियुक्ते रजोगुणैः ।
सत्वेनसर्वगंविष्णुं त्वांप्रेषयति केशव ॥
अतः स्वतन्त्रताविष्णो युवयोर्नास्ति कश्चन । इत्यादि

हे ब्रह्मा विष्णु तुम दोनो स्वतन्त्र नहीं हो सृष्टिके आदिमें तुम दोनोंको रजोगुण सतोगुणसे उत्पन्न कर शिवहीने सृष्टि और पालनमें प्रवृत्त किये अतः स्वतन्त्रा तुम दोनोंको नहीं है ऐसा वेदका वचन सुनकर ब्रह्माने कहा कि वही शिव जो हमारे ललाटसे पुत्र हुये वह भी तो पार्वतीके साथ क्रीड़ा करते हैं विषयी भोगी हैं परब्रह्म कैसे हो सकते हैं ऐसा ब्रह्माका वचन सुनकर ॐकारने कहा कि—

असौशम्भु र्महादेवः पार्वत्या स्वातिरिक्तया ।
संक्रीड़ते कदाचिन्नो किन्तु स्वात्म स्वरूपया ॥

वह शिव पार्वती एक ही हैं देखनेमात्रको दो हैं इतना कहनेपर भी ब्रह्मा विष्णुका मोह नहीं छूटा तब शिवने कालभैरवको आज्ञा दिये कि ब्रह्माका पंचम शिर काटकर उस कपालमें विष्णुके रूधिरसे भर लाओ आज्ञा पाते ही भैरव ब्रह्माका पंचम शिर काट लिये विष्णुके तरफ चले और विष्णु भागकर बैकुण्ठमें चले गये पीछेसे कालभैरव भी जाने लगे द्वारपर विष्वकसेन गण भैरवको रोका भैरवने उनको त्रिशूलमें खोसकर कन्धेपर लटका लिये और विष्णुके रक्तसे कपाल भरकर शिवके पास ले आये इत्यादि ॥

भित्वास्तम्भं शीघ्रमुद्भूयदैत्यं हत्वा लोकान् ध्वंसयन्तं नृसिंहम् ॥ चक्रेशान्तं शारभोग्रावतीर्य्यः सत्यं तुल्य स्तस्य शम्भोर्नचान्यः ॥ ६ ॥

खम्भाको फाड़कर नृसिंह हुये और हिरण्यकश्यपको मारकर इतना क्रोध किये कि अकाल ही में जगतका नाश होने लगा तब शरभरूप धारणकर शिवने शान्ति किया मैं सत्य-सत्य कहता हूँ कि शिवके बराबर दूसरा देव नहीं हो सकते ॥६॥

यह कथा लिंगपुराणमें इस प्रकार लिखी है कि जब खम्भाका फाड़कर नृसिंहावतार हुआ तो हिरण्यकशिपुको मारनेके बाद इतना क्रोध किये कि जगत भस्म होने लगा सब देवता भयभीत होकर शिवके पास गये शिवने वीरभद्र नामक गणको आज्ञा दिये कि नृसिंहाग्नि जो ज्वलित हुई है इसको विनय या बलसे जैसे हो सके समन करो आज्ञा पाते ही वीरभद्र नृसिंहके पास पहुँचे और हाथ जोड़कर बोले कि—

यदर्थ मवतारोऽयं निहतःसोपि केशव ।
अत्यन्तघोरवदनं नरसिंह वपुस्तव ॥
उपसंहर विश्वात्मन् त्वमेव ममसन्निधौ । इत्यादि

हे केशव ! जिस कामके लिये आपका अवतार हुआ सो काम हो गया हे विश्वात्मन ! इस घोररूपको इसी समय आप त्याग कीजिये ऐसा वीरभद्रका वचन सुनकर नृसिंह क्रोधसे मूर्च्छित हो वीरभद्रके उपर झपटे और विचार किये कि इनको भी खा जायँ तब तक वीरभद्र आकाशमें उड़ गये और शरभरूप धारण किए ॥ उनका ध्यान इस प्रकार लिखा है कि—चन्द्रार्काग्निस्त्रिदृष्टिः कुलिश

वर नखश्चंचलात्युग्रजिह्वा काली दुर्गा च पक्षौ हृदय जठर गो भैरवो वाडवाग्निः उरूद्वौ व्याधिमृत्युः शरभवरखगश्चण्डवातातिवेगः संहर्ता सर्वशत्रुन् जयतु सशरभः शालवः पक्षिराजः ॥ ऐसा रूप धारणकर बोले कि—

किंनजानासि विश्वेशं संहर्तारंपिनाकिनम् ॥
असद्वादो विवादश्च विनाशस्त्वयिकेवलः ॥
अंशोहं देवदेवस्य महाभैरव रूपिणः ।
त्वत्संहारे नियुक्तोस्मि विनयेन बलेनच ॥ इत्यादि

क्या विश्वेश्वर संहारकर्ता पिनाकीको तुम नहीं जानते हो मैं उन्हींके अंशसे उत्पन्न हूँ विनयसे अथवा बलसे तुम्हारे संहारके लिये भेजा गया हूँ। शरभरूपका ध्यान तीन नेत्र वज्रके सदृश नख लपलपाती हुई जिह्वा काली दुर्गा दोनों पाँख बड़वानल उदर व्याधि मृत्यु दोनों जंघा ऐसे रूपसे आकाशमें उड़कर और नृसिंहको अपने चंगुलमें पकड़ लिये जैसे बाज चिड़ियेको पकड़ लेता है नृसिंह दीन हो स्तुति करने लगे। इत्यादि।

ब्रह्मा विष्णोस्तुल्यता वादशान्त्यै योभूल्लिङ्गं हंसकोलेन्द्र मृग्यम् ॥ विश्वध्येयो यस्तयोर्जन्यशान्त्यै श्रेष्ठस्तस्मा दीश्वरान्नापरोऽन्यः ॥ ७ ॥ यस्माद्यन्तौ नापतौर्धातृविष्णु दिव्यैरब्दै रप्यसंख्यैः सवेगौ ॥ यस्वैभूयः प्रापतुः शान्तमानौ तुल्योनान्यो विश्वनाथस्य तस्य ॥ ८ ॥

ब्रह्मा विष्णु दोनोंका झगड़ा छुड़ानेके लिये जो विश्वपूज्य शिव लिंगरूपसे प्रगट हुये और हंसरूप धारणकर ब्रह्मा वराहरूप होकर विष्णु अन्त ले आनेको गये उस ईश्वरसे परें दूसरा कौन हो सकता है ॥७॥ देवताओंके वर्षसे बहुत वर्ष तक वायुवेगसे दोनों गये अन्त न पाकर थकित हो लौट आये उस विश्वनाथके बराबर दूसरा कौन हो सकता है ॥८॥ यह कथा स्कन्दपुराण कूर्मपुराण देवी भागवत आदि कई पुराणोंमें बहुत विस्तारसे लिखी है कि एक समय ब्रह्मा विष्णु दोनों आपुसमें लड़ने लगे कि सर्वश्रेष्ठ मैं हूँ हम सृष्टि करते हैं तुम पालन करते हो तुम हमारा नोकर हो विष्णुने कहा कि मैं पालन न करूँ तो तुम्हारी सृष्टि मर जाय ब्रह्माने विष्णु को अस्त्रसे मारा और विष्णुने ब्रह्माको अस्त्रसे मारा दोनों बहुत दिनों तक मूर्छित हो पड़े रहे तब शिव कृपा करके लिंग रूपसे प्रगट हुये जैसा कि लिखा है—

पिताय: सर्वलोकानां ब्रह्मविष्णोश्चय: पिता।
सशिवस्सर्वलोकानां कृपाञ्चक्रे तयो:परि ॥
मध्येलिंगं सुधाश्वेतं विपुलं दीर्घ मद्भुतं।
आकाशेतरसा तत्र वागुवाचा शरीरिणी ॥
ब्रह्मविष्णो मा विवादं कुरुताम्वै परस्परम्।
लिङ्गस्यास्य परम्पारं अधस्तादुपरिध्रुवम् ॥
यो ज्ञातियुवयोर्मध्ये स श्रेष्ठो वांसदैवहि।
तदुर्ध्वंगतवान्ब्रह्मा हंसरूपी तदाकिल ॥
वाराहरूप मासाद्य अधोद्रष्टुंगतोहरि।
शताद्वंतौ प्रयत्नेन यातश्चोर्ध्व मधःक्रमात ॥ इत्यादि।

जो सब लोकका पिता और ब्रह्मा विष्णुका भी पिता सो शिव इन दोनोंपर कृपा करके फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी महा शिवरात्रिको आधी रातमें दोनोंके बीच श्वेत लिंगरूपसे प्रगट हुये और आकाश-वाणी हुई कि हे ब्रह्मा विष्णु ! तुम दोनों लड़ो मत इस लिंगके एक ऊपर जाओ, एक नीचेको जो अन्त ले आवे वही बड़ा है। ऐसी वाणी सुनकर हंस रूप हो ब्रह्मा और वाराह रूप होकर विष्णु ऊपर नीचेको वायुवेगसे सवर्ष तक गये परन्तु अन्त न पाकर थकित हो लौट आये विष्णुने आकर कह दिया कि मैं अन्त नहीं पाया, लौटते समय ब्रह्माने विचार किया कि विष्णु अन्त पाये होंगे तो बड़ा हो जायेंगे अतः यहाँ कुछ झूठ बोलना चाहिये ऐसा विचारकर ब्रह्माने सुरभी गौ और चम्पा पुष्प केतकी पुष्प तीन साक्षी लेकर आये और कहे कि हमने अन्त पाया यही तीनों हमारा गवाह हैं। शिव समझ गये कि ब्रह्माने झूठ बोला क्रोधकर शाप दिये तुम्हारा लोकमें पूजा न हो सुरभी तुम विष्ठा भक्षण करो केतकी चम्पा हमको अग्राह्य हो और विष्णुको आशीर्वाद दिये कि—

यस्मात्सत्यमवोचस्त्वं कमलायाः पते हरे ।
तस्मात्ते मत्समापूजा भविष्यति न संशयः ॥

तुमने सत्य कह दिया कि हम अन्त नहीं पाये अतः लोकमें हमारे सदृश तुम्हारी पूजा हो। बाद ब्रह्मा सुरभी केतकी चम्पा स्तुति करने लगे तो प्रसन्न होकर शापसे मुक्त किये कि ब्राह्मण द्वारा ब्रह्माकी पूजा होगी गौको आशीर्वाद हुआ कि बिना तुम्हारे गोबरका कोई यज्ञ नहीं होगा मुख अपवित्र होगा पूँछ पवित्र होगा और केतकी चम्पाको हुआ कि मस्तकपर नहीं चढ़ोगे समीपमें रहोगे तुम्हारा गन्ध लगता रहेगा इत्यादि ।

द्वेधाचक्रेयस्यपादाग्ररेखा शक्त्यातुल्यंभ्रान्तलोका-मरौघम् ॥ दोर्भ्यांवेगादुग्रजालन्धराख्यं तस्माच्चुल्यो नाधिकोऽत्रावृषाङ्कात् ॥ ६ ॥

जिनके पैरका रेखा सुदर्शन चक्र जलन्धर नामक दैत्यको दो टुकड़ा कर दिया और जिनके बाहुवेगसे देवलोक तक क्षुभित हो गया उस वृषकेतुके बराबर कौन हो सकता है ॥६॥

यह कथा शिवपुराण स्कन्दपुराण देवीभागवत आदि कई जगह पर लिखा है कि—जलन्धर नामक दैत्य बलसे उन्मत्त होकर शिवके समीप गया और कहा कि युद्ध कीजिये तब शिवने कहा कि—

पादाङ्गुष्ठाग्ररेखोत्थं जलमध्ये सुदर्शन ।
बलवान् यदिचोद्धर्तुं तिष्ठयोद्धुं नचान्यथा ॥

दक्षिण पादके अंगुष्ठसे मैंने जलके बीचमें सुदर्शन नामक एक चक्र बनाया है यदि तुम उसको उठा सको तो हमसे युद्ध करो। वह जाकर उठाने लगा उससे वह चक्र नहीं उठा शिवने वही चक्र उठाकर उसके ऊपर छोड़ दिया दो टुकड़ा हो गया। जब विष्णु भगवान बहुत दिनों तक तप किये तो वही चक्र विष्णुको दे दिये। इत्यादि।

ध्वस्तोयज्ञो दक्षमूर्द्धाचकृन्तः सर्वेदेवाः शासिता-स्तत्क्षणेन ॥ यातेनैत द्वीरभद्रेणकोपात् सत्यं सत्यं तत्समोनाधिकोन्यः ॥ १० ॥ वायोर्वह्नेर्वज्रपाणेर्वलञ्च

दन्तान् पुष्णो योंभगाद्तं वभञ्ज ॥ यत्कोपांशादुत्थितो वीरभद्र स्तस्याधीशः स्यापरः कोऽस्तितुल्यः ॥११॥

जिनके क्रोधसे निकले हुए वीरभद्रने यज्ञ नाशकर दक्षका सिर काट लिये और जो-जो देवता यज्ञमें आये रहे सबोंका एक-एक अंग भंग किये मैं सत्य-सत्य कहता हूँ कि उस शिवके बराबर अन्य देव नहीं हैं ॥१०॥ और जिनके कोपसे निकले हुये वीरभद्र अग्निका जिह्वा उखाड़ लिये वायुका अण्डकोश काट लिये भगाद्त इन्द्रका बाहू स्तम्भन किये सूर्य्यका दाँत तोड़ लिये फिर उनसे बड़ा या उनके बराबर कौन हो सकता है ॥११॥

यह कथा करीब-करीब सब पुराणोंमें लिखी है कहीं विस्तारसे कहीं संक्षेपसे। शिवरहस्यमें दक्षके प्रति वीरभद्रका वचन है कि—

रे रे दक्ष दुराचार त्वमेवं कर्तु मिच्छसि।
श्रीमहादेवमाहात्स्मं किन्नजानासि साश्वतम्॥
इत्युक्त्वा शूलमादाय क्रोधाकान्त रुषेक्षणः।
हरिंविदार्य्य भूपृष्टे पातयामास सत्वरम्॥
ततो विधीन्द्रदक्षादी न्विदार्य्य पृथिवीतले।
पातयामास शीघ्रेण वीरभद्रो रुषेक्षणः॥ इत्यादि।

वीरभद्र यज्ञमें आकर दक्षसे कहे कि अरे दक्ष दुराचारी तुम यह क्या करते हो क्या श्रीमहादेवका माहात्म्य नहीं जानते हो ऐसा कहकर क्रोधयुक्त हो त्रिशूल लेकर हरि ब्रह्मा इन्द्र आदि सबको मारकर गिरा दिये।

लोकान्कृत्वा यः पशून् तत्पतिः सन् संहारेषु स्वैरमेकस्तनोति ॥ पाशान्छिन्दन् संसृतिभ्योऽपितेषां तुल्योमुख्य स्तेनवा कोंऽपिनास्ति ॥ १२ ॥

संहारकालमें सब लोकको पशु बनाकर महास्मशानमें अकेला वही रह जाते हैं फिर उनके बराबर प्रधान देव दूसरा कौन हो सकता है ॥१२॥

स्कन्दपुराण रेवाखण्ड और ईशानसंहितामें लिखा है कि—

पुनर्य्युगान्ते सम्प्राप्ते तृतीये नृपसत्तम ।
द्वादशार्कवपुर्भुत्वा भगवान्नीललोहितः ।
सप्तद्विपसमुद्रांत्तां सशैलवन काननां ।
निर्दग्धातुमहीं कृत्सनां कालोभूत्वामहेश्वरः ।
संहर्ता स महादेव स्तदानन्तान्विधीन्हरीन् ।
इन्द्रादीनपरान्देवास्तत्त दण्डेषु संस्थितान ॥
तथाविष्णुनपरांच्छूले सन्निधाय विधीनपि ।
साट्टहासपरोनृत्त मानन्देन चकार ह ॥ इत्यादि ॥

तृतीय कल्पके अन्तमें भगवान् नीललोहित रुद्र बारह सूर्य रूप होकर सप्तद्विप समुद्रान्त सशैलवन कानना पृथ्वीको कालरूप होकर महेश्वर भस्म कर देते हैं और संहारकर्ता महादेव रुद्र अनन्त हरि ब्रह्मा इन्द्र आदि जो ततद्ब्रह्माण्डमें स्थित हैं सबका नाश करे विष्णु ब्रह्माको शूलमें लगाकर महास्मशानमें आन्दयुक्त अकेला नृत्य करते हैं ॥ इत्यादि ॥

यस्त्वावेधा वेदनोनैवविष्णु र्नोवावेदा वेदनोनैव वाणी तंदेवेशं मादृशः कोल्पमेधा याथार्थ्यंद्वै वेत्यहो-विश्वनाथम् ॥१३॥ यस्मिन्सर्व्वं यस्तुसर्वत्र सोवै योवै कर्ता योविता योपहर्ता नोयस्यादि यः समस्तादिरेको नोयस्यान्तो उपाकृतं तं नतोस्मि ॥ १४ ॥

जिसको आज तक ब्रह्मा विष्णु वेद सरस्वतीने भी ठीक तौरसे नहीं जाना उनको अल्पबुद्धि मैं यथार्थरूपसे कैसे जान सकता हूँ ॥ ॥ १३ ॥ जिसमें सब जगत और जो सब जगतमें व्याप्त होकर रहता है तथा वही शिव ब्रह्मा होकर सृष्टि विष्णु होकर पालन और रुद्र होकर संहार करता है और उसका आदि अन्त नहीं है सबका आदि वही है ऐसे नाश रहित शिवको मैं नमस्कार करता हूँ ॥१४॥

यस्यैकाख्या वाजिमेधेन तुल्या यस्यानत्या चैकया-चेन्द्रलक्ष्मीः ॥ यस्य स्तुत्या लभ्यते सत्यलोको यस्या-र्चितो मोक्षलक्ष्मीरदूरा ॥ १५ ॥ नान्यंदेवं वेदम्यहं श्रीमहेशा न्नान्यंदेवं स्तौमिशम्भोऋतेऽहम् ॥ नान्यंदेवं वानमामित्रिनेत्रात् सत्यं सत्यं सत्यमेतन्मृषान ॥१६॥

जिसका एक दफे नाम उच्चारण करनेसे अश्वमेधका पुण्य प्राप्त होता है और एक दफे नमस्कार करनेसे इन्द्र लक्ष्मी प्राप्त होती है। जिनके स्तुतिसे सत्यलोक प्राप्त होता है और जिनके पूजनसे मोक्ष-

रूपी लक्ष्मी नगीच हो जाती है ॥१५॥ व्यास पुनः प्रतिज्ञापूर्वक कहते हैं कि शिवसे अन्य दूसरे देवको मैं नहीं जानता हूँ और दूसरे देवताका स्तुति भी मैं नहीं करता हूँ तथा नमस्कार भी नहीं करता हूँ मैं प्रतिज्ञापूंक तीन बार 'सत्य-सत्य-सत्य' करता हूँ असत्य नहीं कहता हूँ ॥१६॥

नाहं स्तोष्ये साम्बमूर्तेंऋतेऽन्यं सायम्प्रातर्नक्तमन्यत्र-काले ॥ तत्वंप्रीतो मह्यमीशानभूया द्विष्णोः स्रष्टा त्वंहि विश्वस्य हेतुः॥१७॥ इत्थंयावत्स्तौति शम्भुं महर्षि स्तावच्छम्भो स्तुप्रसादाद्विधेयम् ॥ तद्दोस्तम्भं त्यक्त-वानस्मिनन्दी दृष्ट्याातावद् व्यासशिष्याननन्दुः॥१८॥

पुनः व्यास कहते हैं कि प्रातः सायंकाल और किसी कालमें भी मैं शिवसे अन्य दूसरे देवकी स्तुति नहीं करता हूँ। हे शिव! आप विष्णुको उत्पन्न करनेवाले और जगतका वीजरूप हैं अपराध क्षमा कर प्रसन्न होइये ॥१७॥ इस प्रकारकी स्तुति करनेसे शिव प्रसन्न होकर नन्दीको आज्ञा दिये नन्दीने पुनः दृष्टिसे व्यासका वाकू 'पाद' भुजाका स्तम्भन छोड़ दिया सब व्यासका शिष्य आनन्द हुए ॥१८॥

तावन्नेदुर्दिव्यवाद्यानिखस्था पौष्पीवृष्टिः काशिकान्त तत्पपात ॥ वाण्यश्चासन्साधुसाध्वीत्युदग्राः सद्योब्रह्म न्यद्वसिद्धोगणानाम् ॥ १९ ॥ नान्योदेवः केशवादस्ति

कश्चित् सत्यंवच्मित्यूर्द्धमुद्धृत्य वाहुम् ॥ व्यासेनोक्ते स्तम्भितो यस्य वाहु र्मुक्तं स्तोत्रेणामुनेश प्रसादात् ॥ २० ॥

और आकाशमें यक्षगण, सिद्धगण, विद्याधरगण, सब देवता गण बाजा बजाये फुलकी दृष्टि किये और आकाशवाणी हुई कि साधु, साधु, साधु (ठीक है ठीक है ठीक है) व्यासने पहले जो प्रतिज्ञा किया कि विष्णुसे अन्य दूसरा देवताका उपासना नहीं करना इस शास्त्र वेद विरुद्ध प्रतिज्ञासे उनका बाक पाद भुजा तीनों स्तम्भन हो गया और इस समय सस्त्रोत्र पाठसे शिव प्रसन्न होकर तीनों स्तम्भनसे मुक्त कर दिये ॥१९॥२०॥

योवायत्ना दीशतुष्टिंहिवाञ्छन् लक्ष्मीवाचं ज्ञानविज्ञानसिद्धिम् ॥ तेनैवैतत्स्तोत्रमीशस्यनित्यं श्रद्धाभक्ति प्रेमभावेन जप्यम् ॥ २१ ॥ यद्वच्छम्भु र्मूर्तिभेदेषुमुख्यो यद्वच्छ्रेष्टः सर्वदेवेषु विष्णुः ॥ रक्षाकद्भ्यो मंत्र विद्भ्यश्च तद्वच्छम्भुत्कर्ष स्तोत्रजापीसमुख्यः ॥२२॥ पुत्रावाप्तिः सत्रुसंहारवृद्धि र्लक्ष्मीवृद्धिस्सौख्यमायुख्य वृद्धिः ॥ सर्वं शम्भुत्कर्षपाठेनसिद्धेत्सिद्धन्मोक्षः स्तोत्रजाप्येन जन्तोः ॥ २३ ॥ शम्भुत्कर्ष स्तोत्रमत्यन्त

गुह्यम् ॥ ब्रह्मघ्नञ्च स्तेयिनं तल्पगञ्च ॥ शुद्धंकुर्य्या जप्तमात्रेणसद्यो मिथ्यानैतन्नन्दिकेशोहि वच्मि ॥२४॥

जो पुरुष अवश्य शिवकी प्रसन्नता चाहता हो और लक्ष्मी तथा ज्ञान विज्ञान प्राप्ति होना चाहता हो सो श्रद्धापूर्वक इस स्तोत्रका नित्य पाठ करे। जैसे मुर्तिमानोंमें शिवमुर्ति सबसे श्रेष्ठ है और देवताओंमें विष्णु जैसे श्रेष्ठ हैं वैसे ही रक्षा करनेवाला सब मन्त्रोंमें शम्भुत्कर्ष स्तोत्र जप करनेवाला श्रेष्ठ है॥ पुत्रकी प्राप्ति शत्रुओंका संहार सौख्य तथा आयुकी वृद्धि यह सब शम्भुंत्कर्ष स्तोत्रके पाठसे प्राप्त होती है और मोक्ष भी मिलता है॥ २३॥

और पुनः नन्दीश्वर कहते हैं कि यह शम्भुत्कर्ष स्तोत्र अत्यन्त गुप्त है और ब्राह्मणवध करनेवाला सोना चुरानेवाला गुरुके स्त्रीसे गमन-करनेवाला आदि महापापियोंको भी पाठ करनेसे शुद्ध कर देता है मैं सत्य कहता हूँ॥ २४॥

इत्युत्कर्ष स्तोत्रजापीसरुद्र श्चित्तेतस्य स्वैरमीशो यथास्ते॥ तस्यासाध्यं नास्तिमुक्तिः करस्था किम्वा-प्यन्याः सिद्धयश्चिन्तितार्थाः ॥ २५॥ तस्मादेकं शाङ्करस्तोत्रराजम॥ भक्त्यायुक्तो यः पठेत्सत्रिसन्धिम्॥ मुक्त्वाघोघौ राजसूयाप्तपुण्य स्सम्प्राप्तश्री रीशसायुज्य मेति॥ २६॥

॥ इति श्री ब्रह्माण्डपुराणे अष्टाविंशोध्याये तथा काशीखण्डे व्यासभुजस्तम्भोपक्रमे शम्भुत्कर्ष स्तोत्रं समाप्तम्॥

यह शम्भुत्कर्ष स्तोत्रका पाठकरनेवाला साक्षात् रुद्र है और उसके हृदयमें साक्षात् रुद्र रहते हैं और उसके लिए कोई भी मनोवांछित वस्तु असाध्य नहीं है और मुक्ति तो उसके मुट्ठीके भीत है ॥ २५ ॥ अतः भक्तिपूर्वक तीनोंकाल इस स्तोत्रके पाठसे पापराशियोंको नाश करके राजसूय यज्ञका फल प्राप्त होती है ॥ २६ ॥ मुक्ति पाँच प्रकारकी है जो कि पद्मपुराणके शिवगीतामें रामचन्द्रके प्रति शङ्कर भगवानने कहा है कि—

सारूप्य१, सार्ष्टि२, सायुज्य३, सालोक्यैकत्वमित्युत४, ॥
कैवल्यञ्चेति५, ताम्विद्धि मुक्ति राघव पञ्चधा ॥

हे रामचन्द्र ! मुक्ति पाँच प्रकारकी है सारूप्य१, सार्ष्टि२, सायुज्य३, सालोक्य४, कैवल्य५, मिति शिवम् ॥ २६ ॥

इति श्रीमद्योगिवर्य्य विप्रराजेन्द्रात्मज पण्डित कालिकेश्वरदत्त विरचिता भाषाटीका समाप्ता ॥
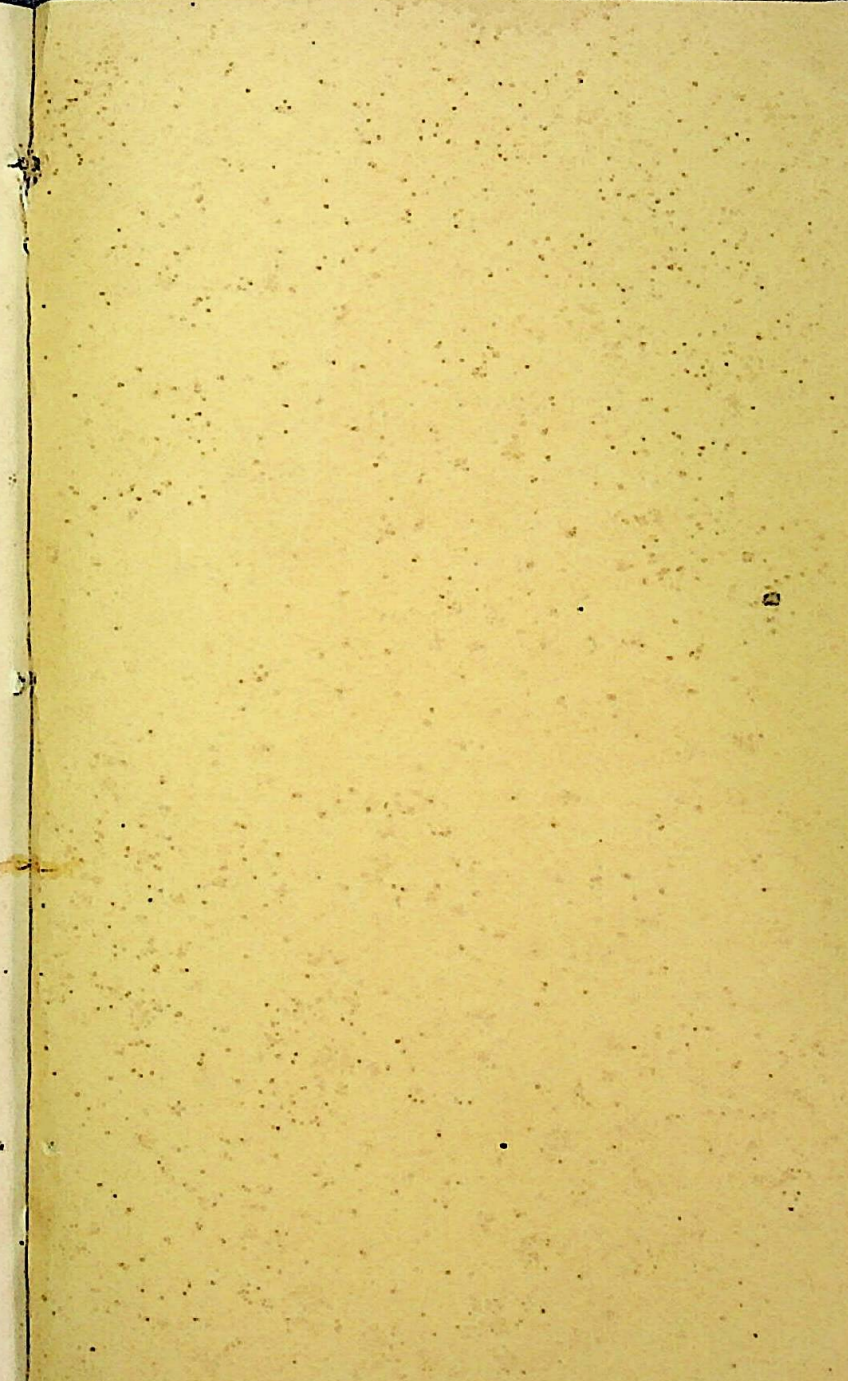
पुस्तक मिलनेका पता—

पं० कालिकेश्वर दत्त, परमहंस आश्रम
राज्य—डुमरांव, जिला—शाहाबाद ।

दूसरा पता—

श्री बाबू जीवेन्द्रनारायण राय देवशर्मा
लालगोला राज्य, जिला—मसुदाबाद ।